

Hans-Jörg Ronsdorf

पक्ष परिवर्तन

पुराने मनुष्य से नए मनुष्य तक



पक्ष परिवर्तन

पुराने मनुष्य से नए मनुष्य तक

Hans-Jörg Ronsdorf

Christliche Literatur-Verbreitung e. V.

Postfach 11 01 35 · 33661 Bielefeld

1. संस्करण 2011

© 2011 by CLV · Christliche Literatur-Verbreitung

Postfach 11 01 35 · 33661 Bielefeld

इंटरनेट: www.clv.de

आवरण-सज्जा: Andreas Fett, typtop, Meinerzhagen

टाइपसेटिंग: CLV

मुद्रण और जिल्दसाज़ी: GGP Media GmbH, Pößneck

ISBN 978-3-86699-310-5

विषय-सूची

प्रस्तावना	12
1. हवाई सैर	14
2. उतर गए – अब आगे क्या?	24
2.1 स्वतंत्रता या दासत्व – पर दोनों एक साथ नहीं	24
2.2 स्वतंत्रता की आज़ाएँ	25
2.3 भागना और सामना करना	26
2.4 भावनाएँ	26
2.5 पुराने और नए कप्तान वाला जहाज़	27
2.6 पूरी ताकत से आगे!	27
2.7 हमारा पिता	28
2.8 परमेश्वर क्या चाहता है	29
2.9 अवश्य है कि वही बढ़े – और मैं घटूँ!	30
2.10 नया जीवन एक रेखाचित्र में	30
2.11 सब कुछ एक नज़र में	33
2.12 पहाड़ों पर पैदल यात्राएँ	34
2.13 आदम से मसीह तक	35
2.14 हमारे उद्धार के लिए पहले क्या होना आवश्यक था?	35
3. रोमियों 5:12-21: आदम से मसीह तक	37
3.1 पद 12: सब कुछ कैसे शुरू हुआ	38
3.1.1 पाप और पापकर्म	38
3.1.2 पाप और मृत्यु	39
3.1.3 पतन और मूल पाप	39
3.1.4 एक साधारण आज़ा	40
3.2 पद 13: व्यवस्था दिए जाने से पहले का पाप	41
3.3 पद 14: आदम, आनेवाले का प्रतिरूप	42
3.3.1 आदम और मसीह	43
3.4 पद 15: मसीह के द्वारा हानि की भरपाई से भी बढ़कर होता है	43
3.5 पद 16: अपराध का परिणाम और अनुग्रह के वरदान का परिणाम	44
3.6 पद 17: मसीह के द्वारा मृत्यु का राज्य समाप्त किया जाता है	44
3.7 पद 18: दंड की आज़ा और जीवन के लिए धर्मी ठहराया जाना	45

3.8 पद 19: पापियों की कानूनी स्थिति और धर्मियों की उद्धार-स्थिति	46
3.9 पद 20: व्यवस्था सब पापों को प्रकट कर देती है	47
3.10 पद 21: मृत्यु से अनन्त जीवन तक	48
3.11 रोमियों 5:12-21 का सिंहावलोकन	48
4. रोमियों 6: पाप की शक्ति से स्वतंत्र	50
4.1 पक्ष परिवर्तन: आदम से मसीह तक	50
4.2 पद 1-2: क्या अनुग्रह पाप करने की खुली छूट है?	50
4.2.1 हम पाप और उसकी शक्ति के लिए मर चुके हैं!	51
4.3 पद 3-4: मसीह और उसकी मृत्यु में बपतिस्मा पाया	52
4.3.1 मृत्यु का बपतिस्मा	53
4.4 पद 4: जीवन की नवीनता के लिए जिलाए गए	54
4.5 पद 5: उसकी मृत्यु और उसके पुनरुत्थान में उसके साथ एक किए गए	55
4.6 पद 6: पुराना मनुष्य उसके साथ क्रूस पर चढ़ाया गया	57
4.6.1 पुराना मनुष्य	57
4.6.2 पुराने मनुष्य का क्रूस पर चढ़ाया जाना	58
4.6.3 पाप की देह	59
4.7 पद 7: पाप से दोषमुक्त ठहराया गया	60
4.8 पद 8-9: मसीह के साथ मृत्यु और जीवन में सहभागी होना	61
4.9 पद 10: मसीह, जो पाप के लिए मरा	62
4.10 पद 11: अपने आप को पाप के लिए मरा हुआ, परन्तु परमेश्वर के लिए जीवित समझना	63
4.11 पद 12: देह पर पाप का राज्य तोड़ दिया जाता है	64
4.12 पद 13: अब अपने आप को परमेश्वर को सौंप देना	65
4.13 पद 14: व्यवस्था के अधीन नहीं, परन्तु अनुग्रह के अधीन	65
4.14 सारांश	66
4.15 गुलगुता का क्रूस और पाप	67
4.16 रोमियों 6:15-23: स्वतंत्र किए गए लोग, जो अनुग्रह के अधीन जीते हैं	67
4.17 उद्धार का निश्चयार्थ और उद्धार का आज्ञार्थ	67
4.18 पद 15: अनुग्रह का लक्ष्य	70
4.19 पद 16: पाप के दास या धार्मिकता के दास	70
4.20 पद 17: मन से आज्ञाकारी – अब पाप के दास नहीं	71
4.21 पद 18: धार्मिकता के दास	72
4.22 पद 19: अपने आप को परमेश्वर की धार्मिकता और पवित्रता के लिए उपलब्ध कराना	73
4.23 पद 20-22: निष्फलता से अनन्त जीवन तक	73

4.24 पद 23: अनन्त दंड के बदले अनन्त जीवन	75
5. रोमियों की पत्री में व्यवस्था	76
6. रोमियों 7: व्यवस्था से स्वतंत्र	78
6.1 रोमियों 7 का अर्थ और उसका स्थान	79
6.2 आत्मा का शरीर से संघर्ष?	79
6.3 एक ही समय में धर्मी और पापी?	80
6.4 नया जन्म पाया हुआ या नहीं?	80
6.5 रोमियों 7: एक आवश्यक अनुभव?	81
6.6 रोमियों 7 का मनुष्य कौन है?	82
6.7 रोमियों 7:1-6: व्यवस्था के लिए मरे हुए	83
6.7.1 पद 1: व्यवस्था केवल उन्हीं पर लागू होती है जो जीवित हैं	83
6.7.2 पद 2-3: व्यवस्था से छूटने का एकमात्र मार्ग	83
6.7.3 पद 4: वह, जिसके अब हम हैं – मसीह	84
6.7.4 पद 5: व्यवस्था धार्मिकता को नहीं, बल्कि पापों को बढ़ावा देती है	85
6.7.5 पद 6: व्यवस्था से परे एक नई आराधना	85
6.8 रोमियों 7:7-14: सिद्ध व्यवस्था	86
6.8.1 पद 7: पाप की पहचान व्यवस्था के द्वारा होती है	87
6.8.2 पद 8: व्यवस्था पाप को बढ़ावा देती है	88
6.8.3 पद 9-11: व्यवस्था से सामना मृत्यु तक ले जाता है	88
6.8.4 पद 12: फिर भी व्यवस्था अच्छी है	90
6.8.5 पद 13: एक बार फिर – व्यवस्था का कार्य	90
6.9 रोमियों 7:14-25: व्यवस्था के अधीन एक मसीही के अनुभव	91
6.9.1 पद 14-15: अच्छी इच्छा और निर्बल शरीर	91
6.9.2 पद 16: व्यवस्था से सहमति	91
6.9.3 पद 17-21: मुझ में बसा हुआ पाप	91
6.9.4 पद 22-23: दो व्यवस्थाएँ और उनका प्रभाव	92
6.9.5 पद 24: निराशा	93
6.9.6 पद 25: रोमियों 7 की सीख	94
7. रोमियों 8:1-11: आखिरकार स्वतंत्र!	96
7.1 अभी से – पर अभी नहीं	97
7.2 निर्णायक मोड़	98
7.3 पद 1: दोषमुक्ति – अब कोई दंड की आज्ञा नहीं	98
7.4 पद 2: जीवन की आत्मा की व्यवस्था के द्वारा स्वतंत्र किए गए	100

7.5 पद 3: परमेश्वर गुलगुता पर पाप की समस्या का समाधान करता है	101
7.5.1 परमेश्वर मनुष्य बनता है	101
7.5.2 गुलगुता	102
7.6 पद 4: परमेश्वर की व्यवस्था अब सचमुच पूरी होती है	103
7.6.1 मूसा की व्यवस्था और उसकी वैधता	104
7.7 पद 5: शरीर के अनुसार या आत्मा के अनुसार होना	105
7.8 पद 6-7: मृत्यु और जीवन, शत्रुता और शान्ति	106
7.9 पद 8-9: शरीर में और आत्मा में होना	107
7.10 पद 10-11: परमेश्वर का आत्मा और हमारी देह का उद्धार	108
7.10.1 हमारी उद्धार-स्थिति – उद्धार का निश्चयार्थ – “अभी से”	108
7.10.2 जीना और मरना	108
7.10.3 परमेश्वर का आत्मा और देह	109
7.10.4 अभी से अमर क्यों नहीं?	110
8. रोमियों 8:12-17: उद्धार का आज्ञार्थ – विजय में जीवन	111
8.1 पद 12: अब शरीर के कर्जदार नहीं	111
8.2 पद 13: जीवन या मृत्यु	112
8.2.1 प्रतिज्ञाएँ और चेतावनियाँ तथा अनन्त उद्धार	112
8.2.2 आत्मा के द्वारा देह की क्रियाओं को मारना	115
8.2.3 “मरा हुआ समझना” या “मारना”?	116
8.2.4 मारना – यह कैसे होता है?	117
8.3 पद 14: आत्मा के द्वारा चलाए जानेवाले परमेश्वर के पुत्र	119
8.4 पद 15: लेपालकपन का आत्मा हम में पुकारता है: “हे प्रिय पिता!”	120
8.5 पद 16: हम परमेश्वर की सन्तान हैं!	121
8.6 पद 17: हम मसीह की महिमा के वारिस हैं	122
9. रोमियों 12: सोच नई की जाती है!	123
9.1 हमारे लिए परमेश्वर का लक्ष्य	123
9.2 रोमियों 12:1-2: आराधना – एक तर्कसंगत बात!	124
9.2.1 अपनी देहें!	125
9.2.2 संसार: मित्र या शत्रु?	126
9.2.3 नई सोच के द्वारा परिवर्तन	127
9.2.4 रूपान्तरण (मेटामॉर्फोसिस)	128
9.2.5 नवीनीकरण क्यों?	129
9.2.6 नवीनीकरण कैसे होता है?	129

9.2.7 युद्धभूमि: विचारों की दुनिया	130
9.2.8 हम यह युद्ध कैसे जीत सकते हैं?	131
9.2.9 दिवास्वप्न और मनचाही कल्पनाएँ	132
9.2.10 परमेश्वर की इच्छा – परखी हुई और अच्छी पाई गई!	133
9.3 रोमियों 13:13-14: मसीह को पहन लेना – शरीर के लिए कोई प्रबंध नहीं	134
9.4 निष्कर्ष	135
10. पुराना और नया – एक सिंहावलोकन	136
11. शरीर क्या है?	138
11.1 पाप और शरीर	139
11.2 शरीर और अविश्वासी मनुष्य	140
11.3 शरीर और मसीही	141
12. शरीर बनाम आत्मा	143
12.1 समस्या क्या थी?	143
12.2 शरीर का कार्य	144
12.3 गलातियों की पत्री में मसीही	145
12.4 व्यवस्था और शरीर – एक ही यंत्र के दो गियर	146
12.5 प्राचीन ब्रह्मांडीय और वर्तमान व्यक्तिगत संघर्ष	146
12.6 आत्मा के द्वारा जीवित रहिए और चलिए!	147
12.7 परमेश्वर का कार्य और हमारा कार्य – क्या ये एक दूसरे के विरोधी हैं?	148
12.8 स्वतंत्रता के लिए बुलाए गए – पर यह कैसी स्वतंत्रता है?	148
12.9 आत्मा हमारे लिए लड़ता है	149
12.10 संघर्ष के बीच में	150
12.11 वायरस और टीका	151
12.12 शरीर के काम क्या हैं?	151
12.13 परमेश्वर के आत्मा का फल	152
12.14 शरीर का स्थान क्रूस पर है	154
12.15 मसीह के साथ क्रूस पर चढ़ाए जाने के बाद मनुष्य कौन है?	155
12.16 प्रतिदिन क्रूस उठाना	156
12.17 आत्मा के द्वारा जीना और चलना: होना और न होना	157
12.18 आत्मा के द्वारा चलना – यह कैसे हो?	158
12.19 ठोकर खाना और फिर उठ खड़े होना	159
12.20 फिर से सही राह पर आना	160
12.21 स्वर्ग में हमारा सहायक	160

12.22 यदि हमने पाप किया हो, तो क्या?	161
12.23 अंगीकार करना	162
12.24 आत्मिक और शारीरिक मसीही – क्या ऐसा होता है?	163
12.25 आत्मा और शरीर के संघर्ष का सार	164
13. नया और पुराना मनुष्य: पुरानी बातें बीत गई, नई बातें हो गई हैं	166
13.1 इफिसियों की पत्रों में नया मनुष्य	167
13.2 कुलुस्सियों की पत्रों में नया मनुष्य	167
13.3 इफिसियों और कुलुस्सियों की पत्रों में पुराना मनुष्य	168
13.4 नए मनुष्य की सृष्टि का वृत्तान्त	169
13.5 बहुत से लोग एक नया मनुष्य हैं	171
13.6 व्यक्तिगत व्यक्तित्व एक नया मनुष्य बनाता है	172
13.7 नया मनुष्य क्या है?	173
13.8 नई सृष्टि	174
13.9 क्या नया सृजित गया?	175
13.10 क्या नए मनुष्य को नवीनीकरण की आवश्यकता है?	176
13.11 नया मनुष्य: वस्त्र की तरह पहना हुआ	178
13.12 सारांश – एक चित्र	179
13.12.1 पुराना पेड़	179
13.12.2 एक नया पेड़	180
13.12.3 पुरानी जड़, जो अब भी जीवित है	182
13.13 केवल विश्वास के द्वारा	182
13.13.1 आलसी माली	183
13.14 नए मनुष्य का भविष्य	183
13.14.1 भविष्य का जीवन अभी से जीना	184
13.15 आह्वान	185
14. नए जीवन के लिए नया जन्म	186
14.1 आखिर स्वभाव क्या है?	187
14.2 परमेश्वर के स्वभाव के सहभागी	188
14.3 अनन्त जीवन मसीह का जीवन है	188
14.4 हम ईश्वरीय जीवन के सहभागी कैसे बनते हैं?	189
14.5 नया जन्म – परमेश्वर से जन्मे	189
14.5.1 जल से जन्मे	190
14.5.2 आत्मा से जन्मे	191

14.5.3 यहजेकेल की भविष्यद्वाणी: नए हृदय और नई आत्मा	191
14.6 मृत्यु से पार होकर जीवन में बचाए गए: जीवित किए गए	192
14.7 बनने और बढ़ने का रहस्य	193
14.8 वृद्धि – जीवन बढ़ता है	194
14.9 विकसित करना	196
14.10 शौक्र या कर्तव्य?	197
14.11 यूहन्ना के लेखों में उद्धार का निश्चयार्थ	197
14.12 यूहन्ना के लेखों में उद्धार का आज्ञार्थ	199
14.13 अनन्त जीवन – गुण और मात्रा	199
14.14 जीवन के लक्षण	200
14.15 जो परमेश्वर से जन्मा है, वह पाप नहीं करता	201
14.15.1 उद्धार के इतिहास की चार अवस्थाएँ: मनुष्य और पाप	203
14.15.2 अब पाप न करना: संभव या असंभव?	203
14.16 सिद्धता – यह क्या है?	205
14.16.1 हमारी उद्धार-स्थिति की सिद्धता	205
14.16.2 हमारे जीवन में सिद्धता (परिपक्वता): बढ़े होना	205
14.16.3 भविष्य की पूर्णता में सम्पूर्ण सिद्धता	206
14.17 अपने कर्मों के लिए ज़िम्मेदारी, न कि अपने अस्तित्व के लिए	206
14.18 हमारे भीतर एक ही समय में नया और पुराना स्वभाव है	207
14.19 निष्कर्ष	207
15. मिज़ाज और चरित्र	209
15.1 बाइबल और मिज़ाज-सिद्धांत	209
15.2 चरित्र और उसका परिवर्तन	211
16. उपसंहार	214
17. ग्रंथ-सूची	

हमारे बच्चों, फ़ेलिक्स (Felix), लाउरा (Laura), एलेक्स (Alex), पीटर (Peter) और आन्नेमारी (Annemarie) को – इस हार्दिक इच्छा के साथ कि वे मसीह को थाम लें और मसीह उन्हें थाम ले।

प्रस्तावना

इस पुस्तक का विषय मुझे अपनी युवावस्था से ही व्यस्त रखे हुए है। यह मसीही होने का हृदय है। केवल उस उद्धार से, जिसे पूरी तरह थामा और समझा गया हो, स्वतंत्र जीवन संभव है। मसीही की परिपक्वता इस बात पर टिकी है कि हमने क्रूस को कितना समझा है।

पाप से स्वतंत्र होना कोई सिद्धांत नहीं, बल्कि व्यावहारिक वास्तविकता है। लगभग 30 वर्ष पहले वॉचमैन नी (Watchman Nee) की पुस्तक “Das normale Christenleben” (सामान्य मसीही जीवन) ने मुझे एक निर्णायक मोड़ तक पहुँचने में सहायता की। विश्वासी होने के बावजूद मैं निराश था, क्योंकि पाप की शक्ति के सामने मेरे पास कोई उपाय नहीं था। इस पुस्तक ने, बहुत से दूसरों की तरह, मेरी आँखें भी उस स्वतंत्रता के लिए खोल दीं, जो मसीह में मेरे पास बहुत पहले से थी, पर जिसे मैं अभी सचमुच जानता नहीं था। बात भक्ति की किसी ऊँची सीढ़ी की या विशेषज्ञ स्तर के मसीही जीवन की नहीं है, बल्कि यह समझने की है कि परमेश्वर हमें कैसे देखता है और उसने हमारे हाथों में क्या सौंपा है।

यह विषय एक गरम लोहा है – विशेष रूप से उसके लिए, जो इस पर कुछ लिखता है। क्या मैं ऐसा इसलिए कर सकता हूँ कि मैं 100 % तक पहुँच गया हूँ? कभी नहीं। मुझे स्पष्ट है कि हम में से बहुत से लोग शिक्षक न बनें, क्योंकि शिक्षकों का न्याय अधिक कठोरता से होगा; क्योंकि हम सब बहुत बार चूक जाते हैं। परन्तु बाइबल की शिक्षा और उसे लगातार दोहराए बिना न तो हमारे पास दूसरों को प्रेरित करने का कोई अवसर है, न स्वयं इस विषय को सही ढंग से हाथ में लेने का। हर पीढ़ी को इन विषयों का सामना स्वयं भी करना होता है। इस पुस्तक में ऐसा कुछ भी, या लगभग कुछ भी नया नहीं होगा, जिसे दूसरों ने पहले न लिखा हो। परन्तु यह इस केंद्रीय विषय को जीवंत करने और चर्चा में लाने की प्रेरणा देना चाहती है।

मैंने सहर्ष सहायता ली है। सबसे बढ़कर मैं थॉमस जेटेल (Thomas Jettel) का सुधार और विचारों को दिशा देनेवाले सुझावों के लिए धन्यवाद करता हूँ, जिनके कारण कई बातें अधिक समझ में आने योग्य हो गई हैं। मैं नीस (Nizza) के पास मिशनरी, योशुआ (Josua) और ब्रिगिटे केलर (Brigitte Keller) का रचनात्मक विचार-विमर्श के लिए धन्यवाद करता हूँ। हर्बर्ट ब्रीम (Herbert Briem), पीटर स्ट्राइटनबर्गर (Peter Streitenberger) और हैरी ग्राफ़ (Harry Graf) का भी मैं आलोचनात्मक समीक्षा के लिए धन्यवाद करता हूँ। इन भाई-बहनों के नाम लेने का अर्थ यह नहीं कि हम सब प्रश्नों में एक मत हैं; इसलिए विषय-वस्तु के लिए मैं स्वयं ज़िम्मेदार हूँ।

कुछ अपवादों को छोड़कर मैंने एल्बरफेल्डर बाइबल अनुवाद 2003 (जर्मन बाइबल अनुवाद; Edition CSV Hückeswagen) का उपयोग किया है। अपवादों को सामान्यतः चिह्नित किया गया है।

Hans-Jörg Ronsdorf, जुल्त्सबर्ग (Sulzberg), नवंबर 2010

केवल वही मेरी चट्टान और मेरा उद्धार है, मेरा ऊँचा गढ़।

भजन संहिता 62:6

तब तुम सुरक्षा में रहोगे और तुम्हारे पास उद्धार, बुद्धि और ज्ञान की भरपूरी होगी।

यशायाह 33:6 (NeÜ, जर्मन बाइबल अनुवाद)

1. हवाई सैर

सवार हो जाइए और अपनी पेटी बाँध लीजिए! हम एक शानदार हवाई सैर करने जा रहे हैं। हमारा लक्ष्य एक विशाल पर्वतमाला है। हम पक्षी की दृष्टि से एक प्रभावशाली पर्वत-समूह को देखना चाहते हैं। मैं ठीक आल्प्स पर्वत की तलहटी में रहता हूँ और अपने कार्यालय से पहाड़ों को देख सकता हूँ। एक से अधिक बार मैंने चाहा है कि उड़ान भरूँ और इस शानदार सृष्टि को ऊपर से जी भरकर निहारूँ। अब तक बात एक छोटी-सी हवाई सैर तक ही रही है, पर उसने मेरे मन में और की ललक जगा दी।

आज मैं आपको ऐसी ही एक उड़ान के लिए आमंत्रित करना चाहता हूँ। यह ऐसी उड़ान है जिसका कोई खर्च नहीं। यह हमारी कल्पना में होती है। आपका क्या विचार है: यह कौन-सी पर्वतमाला है? कल्पना कीजिए कि यह पर्वतमाला अनन्त और सर्वशक्तिमान परमेश्वर का महान उद्धार, अर्थात् उसका महान बचाव है। कल्पना कीजिए कि यह पर्वत उस सब का प्रतीक है, जो परमेश्वर ने यीशु मसीह में, उसकी क्रूस की मृत्यु, उसके पुनरुत्थान और उसके स्वर्गारोहण के द्वारा रचा है। बात किसी भी चीज़ की नहीं, बात **उद्धार की परिपूर्णता** की है! एक उड़ान में सब कुछ एक साथ देखा ही नहीं जा सकता, पर फिर भी बहुत कुछ देखा जा सकता है। और हर अगली उड़ान में भी फिर से कुछ नया देखने को मिलेगा।

मैं आपसे वादा करता हूँ कि यह उड़ान उबाऊ नहीं होगी – और इसलिए नहीं कि विमान छोटा है और उसमें केवल दो सीटें हैं। ऐसा हल्का विमान काफ़ी हिचकोले खा सकता है, पर जो कुछ हमें देखने को मिलेगा, वह इतना विशाल होगा कि हम बाकी सब कुछ भूल जाएँगे।

हमारा पायलट सबसे अच्छी तरह सब जानता है। वह सबसे अच्छे मार्ग, सबसे अच्छे लक्ष्य, सबसे सुन्दर दृश्य, सही ऊँचाइयाँ और गहराइयाँ जानता है, वह मौसम को जानता है, और वह हमें सुरक्षित घर वापस ला सकता है। इसलिए हम उड़ने का डर निश्चिन्त होकर ज़मीन पर ही छोड़ सकते हैं।

जिस पर्वत तक हम पहुँचना चाहते हैं, वह एल्ब्रुस (Elbrus) है, कॉकेशस पर्वतमाला का सबसे ऊँचा पर्वत, जिसकी ऊँचाई 5642 मीटर है। यह एक उल्लेखनीय ऊँचाई है, और इस ऊँचाई तक पहुँचने के लिए विमान को सचमुच संघर्ष करना पड़ता है।

इस पर्वत में क्या विशेष है? निःसंदेह इसकी विशेषता यह है कि यह कॉकेशस का सबसे ऊँचा पर्वत है, पर यह एक बुझा हुआ ज्वालामुखी भी है। इसमें एक बड़ा मुख (क्रेटर) है, जिससे बहुत समय पहले दहकता हुआ लावा बाहर उछाला गया था। जैसा कि हम वर्तमान समय से भी जानते हैं, ज्वालामुखी बेकाबू और प्रचंड प्राकृतिक शक्तियाँ हैं। ऐसी ही प्राकृतिक शक्तियाँ तब भी फूट पड़ी थीं, जब परमेश्वर ने नूह के दिनों में संसार को जलप्रलय से डुबो दिया था। बाइबल कहती है कि गहरे सागर के सब सोते फूट निकले और आकाश की खिड़कियाँ खुल गई (उत्पत्ति 7:11), ताकि अकल्पनीय रूप से विशाल जलराशि पृथ्वी पर

फैल जाए। संभव है कि इस विश्वव्यापी जलप्रलय से जुड़े भारी भूगर्भीय परिवर्तनों के कारण ज्वालामुखी सक्रिय हो गए हों। जो भी हो, उस समय पानी पहाड़ों की चोटियों से भी ऊपर चढ़ गया था: सब पहाड़ ढक गए (उत्पत्ति 7:20), केवल पानी ही पानी दिखाई देता था।

उस समय के लोग बहुत दुष्ट थे। वे उस बिन्दु को, जहाँ से फिर लौटना संभव नहीं, पार कर चुके थे और परमेश्वर से, अर्थात् उससे जो उसने अपनी सृष्टि के लिए सोचा था, दूर हो गए थे। इतनी दूर कि परमेश्वर ने अन्त की रेखा खींच दी। मैं नहीं जानता कि उस दुष्टता का पूरा विस्तार किस बात में था, पर परमेश्वर ने उसे देखा (उत्पत्ति 6:5)। और यीशु कहता है कि ठीक ऐसे ही दिन फिर आएँगे (लूका 17:26)। जलप्रलय को नूह और उसके परिवार को छोड़कर सब मनुष्यों को नाश करना था। इस न्याय से अच्छी तरह पहचाना जा सकता है कि परमेश्वर के लिए पाप का क्या अर्थ है। हमें अक्सर पाप से कोई समस्या नहीं होती, यद्यपि हमारा सामना लगातार उसके नकारात्मक और भयानक परिणामों से होता रहता है। परन्तु परमेश्वर इसके विषय में क्या सोचता है? परमेश्वर पाप से घृणा करता है, क्योंकि वह मनुष्यों को, उसकी सृष्टि को, एक घातक और असाध्य रोग की तरह नष्ट करता है और उनसे अलग कर देता है। पाप मनुष्य को इस हद तक बदल देता है कि वह परमेश्वर का शत्रु बन जाता है। परमेश्वर पाप से घृणा करता है, क्योंकि वह हमसे प्रेम करता है। वह पाप से घिन करता है, क्योंकि वह उसके सम्पूर्ण अस्तित्व, उसके प्रेम और उसकी पवित्रता के विपरीत है। इस्राएल के लोगों से यहोवा कहता है कि वह गुप्त में उनकी पापमय दशा पर आँसू बहाता है (यिर्मयाह 13:17; 14:17)। पाप उसके हृदय को छूता है, वह उसके लिए कोई मामूली बात नहीं। हर पाप को वह जानता है और उसे अपने हृदय की गहराई तक अनुभव करता है। पाप मनुष्यों को परमेश्वर से और मनुष्यों को एक दूसरे से अलग करता है। पाप वह है जो परमेश्वर पर आक्रमण करता है और उसकी आज्ञाओं का तिरस्कार करता है। वह परमेश्वर से मनुष्य तक जानेवाली जीवन-धारा को काट देता है और इसलिए मृत्यु के अतिरिक्त किसी और ओर नहीं ले जा सकता। पाप का चेहरा मित्रवत हो सकता है, पर वह केवल एक मुखौटा है: वह कुरूप है और जहाँ कहीं प्रकट होता है, नाश करता है। वह बहुत व्यापक है। जहाँ-जहाँ मनुष्य हैं, वहाँ-वहाँ वह पाया जाता है। सब इससे प्रभावित हैं। वह सब से किलनी की तरह चिपका रहता है, चाहे वे इसे मानना चाहें या नहीं। एक बीज की तरह वह जन्म से ही हर मनुष्य में पड़ा है, यद्यपि किसी में वह अधिक और किसी में कम विकसित हुआ है।

परमेश्वर पाप से घृणा करता है, पर पापी से प्रेम करता है! यही हमारा बचाव है! परन्तु पाप और मनुष्य एक दूसरे में ऐसे गुँथ गए हैं कि वे एक इकाई बन गए हैं, जिसे किसी भी मानवीय उपाय से अलग नहीं किया जा सकता। यदि परमेश्वर पाप को नष्ट करता, तो उसका विनाश का निर्णय अन्ततः हम पर ही पड़ता! उसने एक मार्ग ढूँढ़ निकाला और समस्या का समाधान कर दिया! मनुष्यों ने इस समस्या को हाथ में नहीं लिया, क्योंकि वे अपने ही पाप-रोग का इन्कार करते हैं। उनके लिए पाप में वह सब शामिल नहीं, जो वह परमेश्वर के लिए है।

जब अनन्त परमेश्वर ने ब्रह्मांड की सृष्टि की, तब उसके सर्वशक्तिमान वचन पर्याप्त थे: “हो जाए!” परन्तु पाप की समस्या का समाधान करने के लिए शब्द पर्याप्त नहीं थे। बल्कि इसके लिए उसे अपना सारा प्रेम चुकाना पड़ा। परमेश्वर अपरिवर्तनशील है, वह शुद्ध ज्योति के समान है, वह प्रेम है, और वह पवित्र और धर्मी है, वह शुद्ध और पूर्णतः निष्पाप है। जब बात पाप की हो, तो हमें परमेश्वर के इन गुणों के विषय में सोचना चाहिए – और वह भी ईश्वरीय आयाम में! बात हमारी सहिष्णु और अक्सर हालात के अनुसार ढल जानेवाली धारणा की नहीं है। गुलगुता पर, यीशु के प्राणदंड के स्थान पर, आप देख सकते हैं कि परमेश्वर पाप को कितनी अकल्पनीय गम्भीरता से लेता है। कोई और स्थान नहीं है जहाँ इससे अधिक तीखे रूप में दिखाई देता हो कि परमेश्वर पापी से प्रेम करता है, पर पाप से असीम घृणा करता है। परमेश्वर हम मनुष्यों के स्थान पर अपने ही पुत्र को बलिदान करता है। एक रक्तमय बलिदान क्यों आवश्यक था? क्योंकि पाप केवल एक छोटी-मोटी भूल नहीं, बल्कि ऐसी बात है जिससे हमारा सृष्टिकर्ता ठेस खाता है और जो उसका अपमान करती है। इसलिए वह उचित ही प्रायश्चित्त और उस हानि की भरपाई माँगता है, जो हमने परमेश्वर को पहुँचाई है। यह सदा ऐसा ही रहेगा कि परमेश्वर पापी को उसके पाप का दंड देगा। बहुत से लोगों के मत में यह कि अन्याय के बाद दंड आता है, केवल एक धार्मिक आविष्कार है। यह बहुत बड़ी भूल है! यही तथ्य, उदाहरण के लिए, हमारी न्याय-व्यवस्था की नींव है। परमेश्वर के विषय में हमें बस इसे कहीं अधिक शुद्ध और न्यायपूर्ण रूप में सोचना चाहिए। वह सर्वज्ञ है और सब विचारों को पढ़ता है। वह सर्वव्यापी है और इस प्रकार वह स्वयं हर उस बात का साक्षी है, जो मनुष्य सोचते, बोलते और करते हैं। उससे कुछ भी छिपा नहीं रहता। यदि आप संसार में अकेले होते और आपने केवल एक ही पाप किया होता, तब भी यीशु का बलिदान आवश्यक होता। परमेश्वर के लिए एक अकेला पाप भी स्वीकार्य नहीं। वह इतना पवित्र और महिमामय है कि एक भी पाप को अनदेखा नहीं कर सकता।

परमेश्वर मनुष्यों के साथ सृष्टि के किसी असफल प्रयोग की तरह व्यवहार नहीं करता। वह मनुष्य को त्याग नहीं देता। वह पापी को बचाना और उसका उद्धार करना चाहता है। परन्तु इसके लिए उसे किसी ऐसे की आवश्यकता है, जो दोष का दाम चुका सकता हो। क्या कोई मनुष्य है जो यह हिसाब चुका सकता है? हाँ! यही एक व्यक्ति स्थानापन्न बलिदान बनता है। वह हमारा दोष चुकाता है। यीशु, “परमेश्वर का मेम्ना”, हमारा स्थानापन्न बनता है। एक मनुष्य – लाक्षणिक अर्थ में – यह स्थानापन्न बलि का मेम्ना बनता है। गुलगुता पर परमेश्वर का पुत्र स्वेच्छा से हमारे पाप के साथ परमेश्वर के ठीक सामने खड़ा हुआ, ताकि हमारी दंडाज्ञा और हमारा दंड अपने ऊपर ले ले। परमेश्वर अपने पुत्र की बलिदान होने की तत्परता को स्वीकार करता है और इस दंड-न्याय में उसे नहीं छोड़ता। क्या हम अपने शत्रुओं को उनकी अपनी ही गलती से आई किसी समस्या से छुड़ाने के लिए अपने पुत्र को सौंप देते? क्या हम अपने बेटे या बेटी को दंड देने के बजाय उन्हें बचाने के लिए सब कुछ नहीं करते? परमेश्वर ने ऐसा नहीं किया। हाँ, हमें छुड़ाने के लिए केवल एक आदेश या सृष्टि के एक वचन से कहीं अधिक होना आवश्यक था।

फिर से नूह की ओर लौटें: उस समय न्याय का जल सबसे ऊँची पर्वत-चोटियों को ढक चुका था। परमेश्वर ने पाप को गम्भीरता से लिया, बहुत गम्भीरता से! – और गुलगुता पर तो और भी अधिक: क्या हमें उस न्याय का कुछ भी अनुमान है जो वहाँ पूरा किया गया, उस बोझ का, जो यीशु ने उठाया? शायद अब आप इस बात के विषय में सोच रहे हैं कि उसे कितनी बुरी तरह सताया गया था, उसके सिर पर काँटों का मुकुट दबाया गया और उसे क्रूस पर कीलों से ठोका गया। परन्तु एक क्षण ठहरिए। ये वे दुःख नहीं थे जिनके द्वारा उसने हमारे पापों का दाम चुकाया। ये बातें मनुष्यों ने उसके साथ कीं। उन्होंने उद्धार में कुछ भी योगदान नहीं दिया। उन्होंने जो किया, उससे एक बार फिर सिद्ध हो गया कि मनुष्य कितने भ्रष्ट हैं। परमेश्वर का न्याय और पाप पर संबंधित निर्णय का क्रियान्वयन उस शुभ शुक्रवार को छोटे घंटे में ही आरम्भ हुआ, लगभग दोपहर 12 बजे। तब, जब सूर्य सबसे ऊँचाई पर था, घोर अंधकार छा गया। हमारे दोष का हिसाब चुकाने का समय आ गया था। परमेश्वर का क्रोध-न्याय पूरी शक्ति के साथ उस निर्दोष बलि के मेम्ने पर पड़ा। तीन घंटे तक हमारे प्रभु यीशु ने स्वयं को पाप पर परमेश्वर के क्रोध के हवाले कर दिया (मेरे पाप पर भी) और वह सब अपने ऊपर ले लिया, जो सब मनुष्यों को अनन्तकाल के लिए नरक में ले जाता है। यह शब्द के सबसे सच्चे और गहरे अर्थ में अंधकार है। पाप की समस्या को सदा के लिए सुलझाने के लिए पिता और पुत्र के बीच जो हुआ, उसका कोई साक्षी नहीं था।

हम विमान की खिड़की से इस पर्वत को नीचे देखते हैं, जो कभी आग उगलता हुआ ज्वालामुखी था। लाल दहकता हुआ लावा मुझे उस झील की याद दिलाता है जो आग और गन्धक से जलती रहती है – अनन्त नरक की। हाँ, हमारे उद्धारकर्ता ने हमारे स्थान पर वह सब कुछ, जो परमेश्वर पाप के सामने अनुभव करता है, स्वयं सहा – तीन घंटों में सिमटा हुआ! कोरी टेन बूम (Corrie ten Boom) ने इसके लिए यह उदाहरण दिया है: जंगल की आग में हमेशा एक ऐसा स्थान होता है, जहाँ आग को और ईंधन नहीं मिल सकता – वहाँ, जहाँ आग पहले ही भड़क चुकी है। गुलगुता अब वह स्थान है जहाँ पापी को सुरक्षा मिलती है, क्योंकि पाप पर परमेश्वर के न्याय की आग यहाँ पहले ही आ चुकी है।

भजनकार, जो गुलगुता पर परमेश्वर के इस न्याय के विषय में भविष्यद्वाणी के रूप में बोलता है, जलप्रलय के विषय में सोचता हुआ प्रतीत होता है: “तेरी सारी तरंगों और लहरों¹ में मैं डूब गया हूँ” (भजन संहिता 42:7; तुलना करें 88:7)। नूह के दिनों में प्राकृतिक शक्तियों का गर्जन (जलराशि, तूफान, भूकम्प, ज्वालामुखी आदि) उसकी केवल एक धुँधली पूर्वछाया है, जो प्रभु यीशु मसीह ने क्रूस पर और उससे भी बढ़कर अंधकार के तीन घंटों में सहा – निर्बलता में क्रूस पर चढ़ाया गया, एक कुचली हुई देह में और बड़ी पीड़ा के साथ। यह परमेश्वर द्वारा पूरी तरह त्याग दिया जाना था! परमेश्वर ने अपने पुत्र का न्याय किया। परमेश्वर का पुत्र आकाश और पृथ्वी के बीच – मनुष्यों द्वारा ठुकराया गया और स्वर्ग द्वारा अस्वीकार किया गया! वह हमारे लिए बाहर के घोर अंधकार में गया। कैसा बलिदान! इस पर विचार करने के लिए समय निकालिए कि उसने आपके लिए क्या किया है। मेरा विश्वास कीजिए, यदि आप अपने जीवन में कोई

1. ये तरंगें और लहरें परमेश्वर के क्रोध का प्रतीक हैं।

भी परिवर्तन अनुभव करना चाहते हैं, तो वह इसी से आरम्भ होता है कि आप यीशु के प्रेम से प्रभावित होने दें। वह इतना महान है कि हमारे ज्ञान से परे है। पौलुस भी यही कहता है (इफिसियों 3:19)। वह इस प्रेम की चौड़ाई, लम्बाई, ऊँचाई और गहराई की बात करता है। फ्रांसीसी सैनिकों ने स्पेन में इन्क्विज़िशन (धर्म-न्यायालय) के समय का एक वीरान कालकोठरी खोज निकाला। उन्हें एक कंकाल मिला, जो अब भी जंजीरों से कालकोठरी की दीवार से बँधा था। दीवार में एक कूस खुरचा हुआ था। कूस के चारों सिरों पर इफिसियों 3 के शब्द खुरचे हुए थे: ऊपर **ऊँचाई**, नीचे **गहराई**, बाई ओर **चौड़ाई** और दाई ओर **लम्बाई**। वह शहीद, जिसने यह चित्र खुरचा था, यीशु के प्रेम से भरा हुआ था – सबसे अधिक अपने दुःख भरे जीवन के अन्त के सबसे कठिन दिनों में। उसने कूस का अर्थ समझ लिया था – मसीह का वह प्रेम, जो सारे ज्ञान से परे है! और इन्क्विज़िशन का वह शहीद इस प्रेम के कारण उस मार्ग पर चलने और इस प्रकार अपने स्वामी का अनुकरण करने के लिए तैयार था।

अब तक हमने दोष, पाप और क्षमा की बात की। मनुष्य को उसके कामों के लिए दोषी ठहराया जाता है। परन्तु हमारे बुरे स्वभाव की समस्या का क्या? क्या इस तथ्य के होते हुए भी कि हम पापी हैं, हमें क्षमा प्रदान की जा सकती है?

कूस की घटना इतनी अथाह रूप से भयानक क्यों थी? क्योंकि प्रभु यीशु केवल उसके लिए नहीं मरा जो मैंने किया है, बल्कि उसके लिए भी जो मैं हूँ। एक बार कल्पना कीजिए कि आप किसी मनुष्य के बड़े दोष की ज़िम्मेदारी अपने ऊपर ले लेते हैं। यह प्रशंसनीय होगा। अब इसके अतिरिक्त यह कल्पना कीजिए कि लोग आपको उस बुरे मनुष्य से केवल भ्रमवश नहीं, बल्कि जानबूझकर एक समान ठहराते हैं! यह उस बात की केवल एक धुँधली तुलना है, जिसके विषय में गुलगुता पर बात थी। बाइबल हमारे पूरे अस्तित्व को पापमय बताती है। पाप हम में बसता है, वह हमारे हर काम में साथ रहता है। लोग “बड़े” पापी हों या “छोटे”, इससे कोई अन्तर नहीं पड़ता। आप विश्वास करें या न करें: यह बात विशेष रूप से अपने आप में तब पहचानी जाती है, जब कोई लंबे समय से विश्वासी हो। बात यह नहीं कि तब भी किसी को बिना क्षमा किए हुए पाप के साथ जीना पड़ता है। परन्तु वह उस पाप को, जो हम में बसता है, अधिक से अधिक पहचानने लगता है। जितना अधिक समय कोई विश्वास में जीता है, उतना अधिक वह पहचानता है कि पाप कितना नीच और घृणित है। और इससे भी कोई अन्तर नहीं पड़ता कि जब आप विश्वास में आए, तब आप संसार के बीच में रहते थे या किसी मसीही परिवार में।

जब प्रभु यीशु मसीह मरा, तब उसने हमारे **भीतर** के पाप की समस्या का भी समाधान किया। हमें अच्छी तरह समझना चाहिए कि इसी कारण वह पाप बनाया गया। परमेश्वर ने उसे ऐसे दोषी ठहराया मानो पाप का दोषी वही हो – न केवल कर्मों का, बल्कि उस पाप का भी, जो हमसे जुड़ा है। केवल फल ही बुरे नहीं थे, पूरा पेड़ सड़ा हुआ और निकम्मा था। इस प्रकार प्रभु यीशु मसीह हमारे लिए न्याय में खड़ा हुआ। अंधकार के तीन घंटों के बाद उसने पुकारा: “पूरा हुआ!” ये वे सबसे महत्वपूर्ण शब्द हैं, जो ब्रह्मांड ने कभी सुने हैं!

न्याय के निर्णय को पूरी तरह अपने ऊपर लेने के लिए प्रभु यीशु मरता है। पाप की मज़दूरी, हमारे पाप की मज़दूरी, मृत्यु है – उसकी मृत्यु!

कल्पना कीजिए कि परमेश्वर यीशु की इस मृत्यु को पूरी तरह आपके नाम लिखता है और आपके खाते में जमा करता है। या बाइबल के शब्दों में: हमारा पुराना मनुष्य (मसीह के) साथ क्रूस पर चढ़ाया गया है! हमारा पुराना जीवन (वह सब जो हमने किया है, और वह सब जो हम हैं) 2000 वर्ष पहले क्रूस पर उसके साथ मृत्यु को सौंप दिया गया। वह इसके लिए मरा। हर बात के लिए! ऐसा कुछ भी नहीं बचा, जिसके लिए हमें अब भी कुछ चुकाना पड़े। परमेश्वर का दंड का निर्णय अब हम पर नहीं पड़ेगा! विमान की खिड़की से बाहर देखिए और इस विशाल पर्वत को ध्यान से देखिए! ज्वालामुखी बुझ चुका है। उसी प्रकार परमेश्वर के भस्म करनेवाले न्याय की आग बुझ चुकी है, क्योंकि यीशु ने उसे अपने ऊपर ले लिया। अब आप क्या देखते हैं? एक सफ़ेद पर्वत! सब कुछ बर्फ़ से ढका है। यदि ज्वालामुखी अब भी सक्रिय होता, तो चोटी पर बर्फ़ नहीं हो सकती थी। पर बर्फ़ हमसे क्या कहना चाहती है, यह स्पष्ट है। शायद ही कोई और चीज़ उस शुद्धता और निर्दोषता के विषय में इतनी स्पष्टता से बोलती है, जो अब मसीह में हमारे लिए वास्तविकता बन गई है।

जूफ़ा² से मुझे पाप से शुद्ध कर, तो मैं पवित्र हो जाऊँगा; मुझे धो, और मैं हिम से भी अधिक श्वेत बनूँगा।

भजन संहिता 51:7

यहोवा कहता है, आओ, हम आपस में वादविवाद करें: तुम्हारे पाप चाहे लाल रंग के हों, तौभी वे हिम की नाई उजले हो जाएँगे; और चाहे अर्गवानी रंग के हों, तौभी वे ऊन के समान श्वेत हो जाएँगे।

यशायाह 1:18

परमेश्वर ने हमें धोकर शुद्ध कर दिया है। हम यहाँ और भी बहुत सी बातें गिना सकते थे, जो यीशु के विशाल कार्य ने उत्पन्न की हैं। इस स्थान पर केवल यह एक बाइबल-वचन:

परन्तु उसी की ओर से तुम मसीह यीशु में हो, जो परमेश्वर की ओर से हमारे लिए ज्ञान, धार्मिकता, पवित्रता और छुटकारा ठहरा।

1 कुरिन्थियों 1:30

जो कुछ हमारे पास हमारे पुराने जीवन में नहीं था, वह अब मसीह के द्वारा हमारे पास है, क्योंकि परमेश्वर ने हमें उसके भीतर रख दिया है। यह अजीब लगता है, पर इसका अर्थ इसके अतिरिक्त और कुछ नहीं कि परमेश्वर ने हमें मसीह के साथ इस प्रकार एक रूप ठहराया और जोड़ दिया है कि जो कुछ मसीह ने किया है और जो कुछ वह अब स्वर्ग में महिमान्वित मनुष्य के पुत्र के रूप में है, वह सब हम पर लागू होता है। परमेश्वर

2. जूफ़ा एक पत्तेदार पौधा है, जिसका उपयोग जल और लहू छिड़कने के लिए किया जाता था।

हमें उसमें देखता है, जो उसके पुत्र ने किया और वह अब है! यह सचमुच अनुग्रह और उद्धार का शिखर है, है न? इस पर्वत पर की शान्ति और निस्तब्धता, जो हिम-श्वेत वस्त्र में लिपटा है, हमें दिखाती है कि अब हमारा परमेश्वर के साथ मेल है और हम मसीह में पहले ही स्वर्ग में बैठाए जा चुके हैं। हाँ, हम मसीह में हैं! इसलिए अब हमारे विरुद्ध कोई भी दंड का निर्णय नहीं है – न उसके लिए जो हमने किया है, न उसके लिए जो हम जन्म से हैं। परमेश्वर हमें सुधारना नहीं चाहता था, उसने एक नई शुरुआत की। परन्तु नए सिरे से आरम्भ करने के लिए पहले पुराने को रास्ते से हटाना आवश्यक है। और क्योंकि बात किसी वस्तु की नहीं, बल्कि मनुष्यों की है, यह प्रश्न उठता है: यह कैसे हो सकता है? जैसा पहले कहा जा चुका है: केवल मृत्यु के द्वारा ही हमारे जीवन का अन्त हो सकता था। मसीह हमारे लिए मरा (और हम उसके साथ)। हम शाब्दिक रूप से नहीं मरे, बल्कि किसी दूसरे की मृत्यु हमारे नाम गिनी गई। अपनी ही धार्मिकता के आधार पर और हमसे की गई अपनी धर्मी माँगों के पूर्ण सामंजस्य में परमेश्वर ने अपने पुत्र की स्थानापन्न मृत्यु (विशुद्ध कानूनी दृष्टि से) पूरी तरह हमारे नाम कर दी है। यह ऐसे मान्य है, मानो हम सचमुच मर गए हों। क्रूस पर हमारे पुराने अस्तित्व को मृत्यु-दंड दिया गया और वह दंड मसीह पर पूरा किया गया।

यह विशाल पर्वत हमें परमेश्वर की धार्मिकता की महानता और साथ ही इस तथ्य को दिखाता है कि हम कितने छोटे हैं: उसने हमें हमारे पाप से छुड़ाने के लिए सब कुछ किया, अपनी धार्मिकता का लेशमात्र भी छोड़े बिना:

तेरी धार्मिकता परमेश्वर के पर्वतों के समान है, तेरे निर्णय अथाह सागर हैं।

भजन संहिता 36:6

कभी-कभी हमें फिर से कुछ डर लग सकता है कि क्या यह सब सचमुच हम पर व्यक्तिगत रूप से लागू होता है। क्या हम कहीं ज़रूरत से ज़्यादा तो नहीं ले रहे? विमान कभी-कभी इधर-उधर उछल सकता है, कभी-कभी कोई डर भी सकता है। पर चाहे भावनाओं का तूफान हमें झकझोर दे, यह पर्वत तब भी वही रहता है। कोई तूफान उद्धार के इस पर्वत को हटा नहीं सकता। उद्धार का यह पर्वत अनुग्रह का पर्वत है और सिय्योन पर्वत के समान है:

उसका पवित्र पर्वत सुन्दरता से ऊँचा उठा है, सारी पृथ्वी का आनन्द; सिय्योन पर्वत, सुदूर उत्तर में, महान राजा का नगर।

भजन संहिता 48:1-2 (ER, जर्मन बाइबल अनुवाद; तुलना करें इब्रानियों 12:18-20)

जब हम पर्वतों की बात कर ही रहे हैं, तो मुझे एक और बात याद आती है – मानो नकारात्मक अर्थ में एक पर्वत। ग्रैंड कैन्यन (Grand Canyon) एक विशाल खाई है, एक विशाल घाटी। इस गहरी खाई के सामने खड़े होकर नीचे गहराई में झाँकना सचमुच प्रभावशाली है। यह भी हमारा एक चित्र है: हम कुछ भी नहीं थे। हम मिट्टी हैं, और मिट्टी में मिल जाएँगे, क्योंकि पाप हमारे जीवन में आ गया है। हमारे हृदय बुराई

की एक खाई के समान हैं। परन्तु अब हम ऊपर “उद्धार के पर्वत” की ओर देखते हैं, जिस पर एक क्रूस खड़ा था। क्रूस एक अन्त है, पर एक आरम्भ भी:

इसलिए यदि कोई मसीह में है, तो वह नई सृष्टि है; पुरानी बातें बीत गई हैं; देखो, नई बातें हो गई हैं।

2 कुरिन्थियों 5:17

पायलट धीरे-धीरे उड़ान की ऊँचाई घटाता है, ताकि अब हम इस विशाल पर्वत-समूह के निचले क्षेत्रों को पहचान सकें। पर्वतमाला के आकार के कारण सब कुछ एक साथ कभी देखा ही नहीं जा सकता। जब हम ऊँचाई खोते जाते हैं, पायलट विमान को पर्वत के और निकट ले जाता है। हमें एक विशाल जलप्रपात दिखाई देता है और फिर कुछ और छोटे जलप्रपात भी। कैसा भव्य दृश्य हमारे सामने है! जलराशि कितनी शान से घाटी में गिरती है! और नीचे ये जलप्रपात मिलकर एक नदी बन जाते हैं। बर्फ और हिम की राशियाँ लाखों घन मीटर पानी जमा रखती हैं। एल्ब्रुस की ढलानों पर 70 से अधिक हिमनद हैं, जिनसे पानी बहकर निकलता है। वह नीचे घाटी में बहता है और चरागाहों, खेतों और जंगलों को सींचता है। सारी खेती इसी पर निर्भर है। इस पानी के बिना उन क्षेत्रों में शायद ही कुछ उग पाता। निःसंदेह वहाँ वर्षा भी होती है, पर ठीक बर्फ पिघलने के समय ही वह पानी घाटी की ओर उमड़ता है, जिसकी वसन्त में पौधों के बढ़ने के लिए आवश्यकता होती है।

पर्वत से नीचे गिरती और फिर नदियों में इकट्ठी होती ये विशाल जलधाराएँ पवित्र आत्मा का प्रतीक हैं। प्रभु यीशु ने स्वयं यह तुलना प्रयोग की है। जब उसने कहा कि हर प्यासा उसके पास आए और पीए, तब उसका अर्थ मनुष्य की गहरी प्यास से था – अर्थ, सुरक्षा और प्रेम के प्रश्न और खोज से। जो **उसके** पास आता है, वह अपने जीवन की प्यास बुझा लेता है, और वह भी सदा के लिए! प्यासा हृदय उसके पास विश्राम पा सकता है।

प्रभु यीशु जीवित (अर्थात् बहते हुए) जल की बात करता है, एक ऐसे सोते की, जो वह स्वयं है। हम परमेश्वर के वचन को गम्भीरता से ले सकते हैं, यह निश्चितता है: परमेश्वर का अनन्त, पवित्र और सामर्थी आत्मा हमें भरपूरी से दिया गया है। वह हम में रहता है। वह जीवन, सामर्थ्य, अगुवाई और सान्त्वना का एक स्थायी और कभी न सूखनेवाला सोता है। केवल परमेश्वर स्वयं ही हम में एक ऐसा सोता हो सकता है, जो सदा उमड़ता रहे।

मुझे एक और पर्वत का ध्यान आता है, जहाँ यीशु अपने तीन चेलों के साथ था। वे बहुत ऊँचाई तक चढ़ गए थे, शायद उस पर्वत की हिम-रेखा तक।³ अचानक यीशु का रूप उनकी आँखों के सामने बदल गया, और वह सूर्य के समान चमकने लगा। उसका वस्त्र उस बर्फ से भी अधिक श्वेत हो गया, जो उन्हें घेरे हुए थी।

3. कुछ व्याख्याकार अनुमान लगाते हैं कि हेर्मोन पर्वत, जो 1800 मीटर की ऊँचाई से ऊपर वर्ष में कई महीनों तक बर्फ से ढका रहता है, रूपान्तरण का पर्वत था।

उन्हें इस बात की एक पूर्व-झलक दी गई कि प्रभु यीशु कैसा दिखाई देगा, जब वह फिर से पृथ्वी पर आएगा। पर साथ ही यह इस बात की भी अभिव्यक्ति है कि हम प्रभु यीशु की अब सामर्थ्य के दाहिने हाथ पर कैसी कल्पना कर सकते हैं। वैसे, यूहन्ना कहता है कि पवित्र आत्मा तभी आ सकता था, जब यीशु महिमा पा चुका था, अर्थात् परमेश्वर के दाहिने हाथ पर सम्मान का यह स्थान ग्रहण कर चुका था। परमेश्वर के आत्मा को ठीक उसी महिमान्वित और मुकुटधारी परमेश्वर के पुत्र के द्वारा भेजा जाना था, ताकि वह उसकी विजय और उसकी महिमा की गवाही दे सके और उसे हमारे हृदयों में दृढ़ता से स्थापित कर सके।

आत्मा हमारे जीवन में कोई किरायेदार नहीं बनना चाहता। नहीं, परमेश्वर का अभिप्राय यह है कि यह आत्मा हमें भर दे, यीशु को हम में बड़ा करे, हमारी अगुवाई करे और हमें विजयी जीवन की जीत प्रदान करे। ये तथ्य हैं! इस प्रश्न की, कि अक्सर ऐसा दिखाई क्यों नहीं देता, हम आगे अवश्य छानबीन करेंगे।

आइए, इस दृश्य का आनन्द लें! एक विशाल पर्वत, उसकी चोटी चमकदार, चकाचौंध करनेवाली सफेदी में, और ऊपर से घाटी में गिरती उमड़ते जल की धाराएँ। वृद्धि की गतिशीलता वहाँ आरम्भ होती है जहाँ अच्छी भूमि होती है।

उड़ान धीरे-धीरे समाप्त होने को है। सच कहें तो हम अभी उतरना ही नहीं चाहते, पर ईंधन समाप्त हो रहा है। वह बस उस हरियाली के ऊपर कुछ चक्कर लगाने भर के लिए बचा है, जो घाटी की ओर नीचे जाते हुए और अधिक घनी और हरी-भरी होती जाती है। पहले केवल झाड़ियाँ और कुछ हरे धब्बे हैं, फिर कुछ पेड़, और इससे पहले कि हमें पता चले, हम घने जंगल के ऊपर उड़ रहे होते हैं। फिर घाटी में हमें खेत, क्यारियाँ और बागान दिखाई देने लगते हैं।

क्या आप जानते हैं कि आपके हृदय में भी परमेश्वर के आत्मा के जल ने एक आत्मिक, पर वास्तविक वृद्धि आरम्भ कर दी है? उद्धार अपने आप में तो पूर्ण है, पर आप में वह साथ ही एक आरम्भ भी है। आपके हृदय में एक नया बीज अंकुरित हुआ है। आपने नया जन्म पाया है। आप अब वैसे नहीं रहे जैसे पहले थे। इसे आँखों से देखा नहीं जा सकता। केवल बाहरी रूप से (शरीर का वज़न, आवाज़ का स्वर आदि) आप में सब कुछ ठीक वैसा ही है जैसा पहले था। फिर भी कुछ विशाल घटित हुआ है। आपने नए सिरे से और स्वयं परमेश्वर से जन्म पाया है। आप एक बार फिर से शुरू से आरम्भ कर सकते हैं।

यह बीज परमेश्वर का अनन्त वचन है। उसने हम में अनन्त जीवन बोया है, और यह जीवन बढ़ता है। इस विषय को हम अगले अध्याय में और गहराई से देखेंगे। जब हम खेतों, पेड़ों और बागानों की सारी हरियाली देखते हैं, तो हम पाते हैं: यह इस बात की गवाही देती है कि परमेश्वर ने वनस्पति-जीवन में कितनी प्रबल शक्ति रखी है। जब सूर्य चमकता है, भूमि अच्छी है और पहाड़ों से पानी आता है, तो वृद्धि को रोका नहीं जा सकता। क्या हम सोचते हैं कि मनुष्यों में आत्मिक वृद्धि कम सामर्थी है, जबकि बात पौधों की नहीं, बल्कि मनुष्य की है, जो “सृष्टि का मुकुट” है?

इस रोमांचक उड़ान के बाद हम उतरते हैं। हम इस पर्वत और उसके आसपास की महानता और सुन्दरता से अभिभूत हैं। हमें याद आता है कि हम क्या हैं: परमेश्वर की सन्तान। पाप का दोष सदा के लिए उठा लिया गया है। पुराने मनुष्य के रूप में हम जो थे, वह इतिहास बन चुका है। उसे क्रूस के द्वारा हटा दिया गया है और परमेश्वर की पीठ के पीछे फेंक दिया गया है। पुराने मनुष्य के स्थान पर परमेश्वर ने एक नया मनुष्य रखा है, जिसे उसने यीशु मसीह के स्वरूप में सृजा है। इस नए मनुष्य के पास अनन्त जीवन है। मसीह स्वयं उसका जीवन है – वह, जिसके भीतर वह जीवित जल है जो उसे बढ़ाता है, ताकि वह विश्वास में परिपक्व और दृढ़ हो जाए।

पायलट झटके के साथ विमान उतारता है, हम फिर से ज़मीन पर हैं। क्या हमने केवल सपना देखा था, या जो कुछ हमने देखा, वह सब सच है? हाँ, वह सच है। परमेश्वर का वचन ऐसा ही कहता है।

शायद इस हवाई सैर ने आपके मन में जिज्ञासा जगा दी है। अगले पृष्ठों पर आपको उसके विषय में और अधिक मिलेगा, जिसे हमने शब्द के सबसे सच्चे अर्थ में केवल ऊपर-ऊपर से देखा है। यदि अब तक हम केवल उड़ते रहे, तो अब आपको पहाड़ों पर पैदल यात्राओं के लिए आमंत्रित किया जाता है, जो आपको सुन्दर स्थानों तक ले जाएँगी।

2. उतर गए – अब आगे क्या?

ऊबड़-खाबड़ उतराई के बाद हम तथ्यों की ज़मीन पर लौट आते हैं। यदि परमेश्वर का उद्धार इतना व्यापक है और केवल स्वर्ग के लिए मेरा टिकट नहीं है, तो प्रश्न उठता है: यह मेरे जीवन को कैसे बदल सकता है? परमेश्वर स्वयं चाहता है कि हम स्वतंत्रता में जिएँ। वह हमें केवल न्याय से ही नहीं बचाता, वह हमें पाप के दासत्व से और हमारे पुराने अहं-जीवन की तानाशाही से भी छुड़ाना चाहता है। उद्धार कोई सैद्धान्तिक विषय नहीं है। परमेश्वर का उद्धार क्रूस का वचन है – वह सुसमाचार, जो उद्धार के लिए और इस प्रकार जीवन के लिए सामर्थ्य है, और वह भी हर एक विश्वास करनेवाले के लिए!

2.1 स्वतंत्रता या दासत्व – पर दोनों एक साथ नहीं

इसाएली एक समय निर्दयी दासत्व में थे। न कोई निकलने का मार्ग, न स्वतंत्रता की कोई आशा। परन्तु परमेश्वर ने उनकी दुर्दशा देखी, उसे दया आई और उसने हस्तक्षेप किया। फ़सह का मेम्ना, जिसने उन्हें न्याय से बचाया, अभी छुटकारा नहीं था। वह उन्होंने तभी अनुभव किया, जब उन्होंने मिस्र को पीछे छोड़ दिया। इससे हमें क्या कहा जाता है? बिल्कुल ठोस रूप में: हम भी यीशु के लहू की सुरक्षा में हैं, पर इससे आगे हम एक नए जीवन के लिए छुड़ाए और स्वतंत्र किए गए हैं।

हाल के इतिहास की यह घटना लाक्षणिक अर्थ में स्पष्ट करती है कि बात किस पर टिकी है। संयुक्त राज्य अमेरिका के संविधान का 13वाँ संशोधन⁴ 31 जनवरी 1865 को राज्यों के सामने अनुसमर्थन के लिए रखा गया और 18 दिसम्बर 1865 को लागू हुआ। इसने संयुक्त राज्य अमेरिका के पूरे क्षेत्र में दासता को अन्तिम रूप से समाप्त कर दिया।

जब इस संशोधन पर सब राज्यों में हस्ताक्षर हो गए, तो यह क़ानून तुरन्त, बिना किसी किन्तु-परन्तु के, मान्य हो गया। अब दक्षिणी राज्यों के उन बहुत से दासों की कल्पना कीजिए, जो उस दिन अपने काम में लगे थे। यद्यपि वे क़ानून के अनुसार अब स्वतंत्र थे और उन्हें अपने स्वामियों को छोड़ने का अधिकार था, फिर भी बहुतों ने ऐसा नहीं किया। पहले उन्हें इस क़ानून को जानना था। फिर उन्हें विश्वास करना था कि यह सच है, और अन्त में उन्हें इस स्वतंत्रता को अपने लिए दावे के साथ लेना और स्वतंत्र लोगों की तरह जीना भी था।

हमारे साथ भी ऐसा ही है। यह “मुक्ति का क़ानून” 2000 वर्ष पहले गुलगुता पर हस्ताक्षरित हुआ। यह क़ानून (दासता को समाप्त करनेवाले क़ानून की तरह) आज तक मान्य है। बाइबल कहती है कि हम पाप की शक्ति से स्वतंत्र किए गए, क्योंकि हमारा पुराना मनुष्य – जैसा हमने अपनी हवाई सैर में पहले ही देखा

4. The Thirteenth Amendment to the Constitution of the United States of America।

– मसीह के साथ क्रूस पर चढ़ाया गया। यह मेरे लिए मेरे किसी योगदान के बिना गुलगुता पर हुआ, और वह भी यीशु की ऐतिहासिक रूप से प्रमाणित मृत्यु के द्वारा। यही सुसमाचार का संदेश है: स्वतंत्रता! कुछ दास लंबे समय तक इस नए क़ानून के विषय में कुछ नहीं जानते थे और ऐसे जीते रहे मानो वह लागू ही न हुआ हो। अनुचित दास-श्रम को हम पूरी तरह अस्वीकार्य मानते हैं, है न? पर कितने मसीही जाने-अनजाने ऐसे जीते हैं, मानो मसीह के द्वारा मुक्ति होती ही न हो। कितने लोग इस बात से प्रसन्न हैं कि एक दिन वे स्वर्ग में होंगे। परन्तु गुलगुता का यह “मुक्ति का क़ानून” यहाँ और आज के लिए मान्य है, केवल स्वर्ग के लिए नहीं! परमेश्वर ने पाप की शक्ति को तोड़ दिया है। इसका अर्थ है कि हम विश्वास के द्वारा इस मुक्ति को पूरी तरह अपने लिए दावे के साथ ले सकते हैं। हमें इसे एक तथ्य के रूप में स्वीकार करना है कि हम पाप के लिए मर चुके हैं, अर्थात् हमारा पुराना मनुष्य मसीह के साथ मर चुका है। अपने आप को मरा हुआ समझो – पुराना बीत चुका है! पौलुस यही कहता है और इसके लिए वह वित्तीय लेखा-जोखा का एक शब्द प्रयोग करता है। यहाँ बात तथ्यों के तर्क की है, न कि बदलती भावनाओं के तर्क की।

2.2 स्वतंत्रता की आज़ाई

मसीह में स्वतंत्रता के सिद्धांतों को स्पष्ट रूप से समझना आवश्यक है, ताकि उन्हें अनुभव भी किया जा सके। पहली बात उद्धार के तथ्यों की है, जिन पर हम विश्वास में अपने लिए मान्य वास्तविकताओं के रूप में टिकते हैं – स्वतंत्रता की किसी सुखद भावना की नहीं।

दूसरी बात पहली से निकलती है: जब मैं परीक्षा में पड़ता हूँ, जब पाप द्वार पर घात लगाए बैठा है, जब मुझे पाप और परमेश्वर में से किसी एक को चुनना है, तब यह बात लागू होती है: आपको पाप करने की आवश्यकता नहीं, आप स्वतंत्र हैं! इस तथ्य को अपने मन में ताज़ा कीजिए। परमेश्वर से विनती कीजिए कि वह आपको इसकी याद दिलाए। हमें पाप के सामने डर से जड़ हो जाने की आवश्यकता नहीं, बल्कि नया नियम हमें अपने जीवन में पापों के विरुद्ध सक्रिय रूप से कदम उठाने के लिए कहता है। हमें इन पापमय बातों को दृढ़ता से जड़ से मिटा देना है। ठीक यही परमेश्वर ने गुलगुता पर किया, जब उसने अपने पुत्र पर पाप का न्याय किया।

हमारे समय की सबसे बड़ी समस्या शायद व्यक्तिवाद है। हम स्वयं केन्द्र में हैं और अपने ही चारों ओर घूमते रहते हैं। यह परमेश्वर के साथ जीवन में हमारी कोई सहायता नहीं करता। आइए, अपने आप से दृष्टि हटाकर मसीह की ओर देखें। यही हमारी विजय है!

- मुक्ति के लिए परमेश्वर के उद्धार पर एक ऐतिहासिक तथ्य के रूप में भरोसा कीजिए!
- जब पाप राज्य करना चाहे, तो बार-बार अपने आप को स्मरण दिलाइए कि उसकी शक्ति टूट चुकी है!
- परीक्षा में जड़ मत हो जाइए, बल्कि पाप को सक्रिय रूप से अस्वीकार कीजिए!
- पाप पर और उसके साथ संघर्ष पर ध्यान केन्द्रित मत कीजिए, बल्कि मसीह पर और पवित्र आत्मा की सामर्थ्य पर!

2.3 भागना और सामना करना

परन्तु ऐसे संघर्षों में हमें अपने आप को अधिक नहीं आँकना चाहिए। ऐसी परिस्थितियाँ हैं जहाँ हमें सक्रिय होना है, और ऐसी भी जहाँ हमें आक्रामक होना है। पापमय बातों को हमें दोषी ठहराना, हटाना या मिटाना है। पर पाप की परीक्षा से और उसके निकट के वातावरण से हमें भागना है। विशेषकर जब बात यौन प्रलोभन की हो, और लोभ तथा मूर्तिपूजा की भी। यूसुफ ठीक समय पर भाग निकलने का उदाहरण है। भागने के अतिरिक्त और कुछ भी उसे पोतीपर की पत्नी के बिस्तर पर जाने से नहीं बचा सकता था, जिसने व्यभिचार के लिए सब कुछ तैयार कर रखा था।

2.4 भावनाएँ

बाइबल का आशय यह है: इस पर भरोसा रखो, इसे मानकर चलो, इसे अपने लिए दावे के साथ लो कि तुम पाप के दासत्व के लिए मर चुके हो! छुड़ाए हुए लोगों की तरह जीने का अधिकार तुम्हें दिया गया है! दक्षिणी राज्यों का वह दास आपको आश्चर्य से देखता, यदि आप कहते: “मैं यह मुक्ति महसूस नहीं करता।” वह आपसे कहता कि आपको इसे महसूस करने की कोई आवश्यकता नहीं, क्योंकि हस्ताक्षरित क़ानून विधिवत मान्य है। इस क़ानून को इससे कोई मतलब नहीं कि आप क्या महसूस करते हैं। यह सदा मान्य है – इस बात की परवाह किए बिना कि मैं क्या महसूस करता हूँ। वॉचमैन नी (Watchman Nee) एक सटीक उदाहरण देते हैं: “एक बार एक सँकरी दीवार पर तथ्य, विश्वास और अनुभव एक के पीछे एक चल रहे थे। तथ्य न दाहिनी ओर मुड़ा, न बाईं ओर, न पीछे, बल्कि अडिग होकर आगे बढ़ता गया। जब तक पीछे चलता विश्वास अपनी दृष्टि तथ्य पर लगाए रहा, सब कुछ ठीक चलता रहा। परन्तु जब वह अनुभव की चिन्ता करने लगा और मुड़कर उसकी ओर देखने लगा, तो उसका संतुलन बिगड़ गया, वह दीवार से गिर पड़ा, और बेचारा अनुभव भी उसके पीछे-पीछे नीचे गिर पड़ा।”⁵

निःसंदेह मसीही जीवन में भावना एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। भावना हमारे मनुष्य होने का एक आवश्यक और अद्भुत भाग है। आनन्द को एक भावना (संवेग) के रूप में अनुभव किया जाता है, और परमेश्वर चाहता है कि हम आनन्दित रहें, वह इसकी आज्ञा तक देता है। उसके द्वारा दिया गया आनन्द उद्धार का परिणाम है। वह अनुभव किया जा सकता है, महसूस किया जा सकता है और सच्चा है। परन्तु विश्वास और भरोसे में भावना शामिल नहीं होती, क्योंकि भावनाएँ उतार-चढ़ाव के अधीन होती हैं। विश्वास के लिए वह सच और वास्तविक है, जिसका बाइबल उससे वादा करती है। विश्वास संयम के साथ – भावना के साथ हो या उसके बिना – अपने लिए उसे दावे के साथ लेता है, जिसकी परमेश्वर उससे प्रतिज्ञा करता है। जब पर्वतारोही खाई के ऊपर लटका होता है, तो उसे अपनी चढ़ाई की रस्सियों के बारे में निर्माता की जानकारी पर 100 % भरोसा करना पड़ता है। उसकी भावना की कोई भूमिका नहीं होती।

5. वॉचमैन नी (Watchman Nee), *Das normale Christenleben* (सामान्य मसीही जीवन), पृ. 47।

2.5 पुराने और नए कप्तान वाला जहाज़

आइए, अपने जीवन की तुलना एक जहाज़ से करें। अपने नए जन्म से पहले हमने स्वयं दिशा और लक्ष्य निर्धारित किए। परन्तु एक बड़ा परिवर्तन हुआ है। जहाज़ खरीद लिया गया, अब वह हमारा नहीं रहा। इसका परिणाम यह है कि अब एक नया कप्तान है। वह कौन है? वह अब भी मैं ही हूँ, पर परमेश्वर ने मुझे नया जीवन और अपना आत्मा दिया है। मैं मसीह में एक नया मनुष्य बन गया हूँ।

पुराने कप्तान के पास बहुत अनुभव और अभ्यास है। पहले सब कुछ उसी की बात मानता था। बहुत सी आदतें थीं, जो इस बात की अभिव्यक्ति थीं कि पुराना कप्तान जहाज़ को कैसे चलाता था। परन्तु अब जहाज़ की खरीद नोटरी के सामने पूरी हो चुकी है, स्वामित्व का परिवर्तन अनुबंध द्वारा तय हो चुका है। नया कप्तान चाहे कितना ही युवा और अनुभवहीन क्यों न हो, वह विधिवत नया कप्तान बन गया है। पुराना कप्तान – आइए, उसकी तुलना पाप से, हमारे शरीर (यूनानी *sarx*) से या पुराने पापी स्वभाव से करें – जहाज़ पर तब तक रहेगा, जब तक हमारे पूर्ण छुटकारे का दिन नहीं आ जाता। यह एक ऐसी स्थिति है जिसे समझना कठिन है। पर यही हमारे मसीही जीवन की वास्तविकता है। पुराना कप्तान अब भी जहाज़ पर है, पर उसे एक केबिन में हट जाना पड़ता है। उसे अब जहाज़ के संचालन में हस्तक्षेप करने की अनुमति नहीं। परन्तु नए कप्तान को इस बात का ध्यान रखना है कि पुराना वहीं रहे जहाँ उसका स्थान है, और साथ ही जहाज़ की दिशा पर ध्यान केन्द्रित रखना है: अब वह पतवार के पहिये पर खड़ा है। वह ब्रिज पर है, जहाँ निर्णय लिए जाते हैं। नया जहाज़-स्वामी मुझ में मसीह है, जो परमेश्वर के आत्मा के द्वारा कार्य करता है। नया नियम कहता है कि ये दोनों, अर्थात् शरीर और आत्मा, एक दूसरे के विरुद्ध खड़े होते हैं और दोनों समान रूप से जीवन पर प्रभुत्व का दावा करते हैं। जबकि शरीर यह दावा अनुचित रूप से करता है, परमेश्वर के आत्मा का दावा वैध है, क्योंकि हम परमेश्वर के द्वारा मोल लिए गए हैं।

पुराना कप्तान आदत के कारण बार-बार नए कप्तान के कामों में दखल देना चाहता है। वह बड़ी खुशी से जहाज़ को फिर से अपने हाथ में ले लेता और नए कप्तान को उस केबिन में भेज देता, जहाँ उसका अपना स्थान है। इस प्रकार जहाज़ पर एक तनाव बना रहता है। यह तनाव बहुत कम हो जाता है, जब नया कप्तान सीधे-सीधे अनुबंध का हवाला देता है – चाहे वह कैसा भी महसूस करे। पुराने को उसे बार-बार केबिन में वापस भेजते रहना चाहिए। यदि वह ऐसा नहीं करता और पुराने कप्तान को जहाज़ पर घूमने-फिरने देता है, तो मामला बुरी तरह समाप्त हो सकता है। पुराने कप्तान को जितना अधिक ध्यान, महत्व और लिहाज़ मिलता है, उतनी ही अधिक बार वह फिर से पतवार के पहिये पर खड़ा होगा।

2.6 पूरी ताक़त से आगे!

नए कप्तान का मूलमंत्र है: पूरी ताक़त से आगे! अपने जीवन के जहाज़ पर हमने नियंत्रण अपने हाथ में ले लिया है। मसीह में हमें जीवन में राज्य करना है, और हम कर भी सकते हैं। आखिरकार स्वयं-निर्धारित होने का अर्थ है परमेश्वर द्वारा निर्धारित और मसीह से भरा हुआ जीवन जीना। और इसमें हम अपनी ऊर्जा, अपनी

एकाग्रता, अपनी रुचि और अपने लक्ष्य लगाते हैं। अब ये नए स्वामी के हैं। जहाज़ एक नई दिशा में चलता है, उसे एक नया अर्थ मिला है, वह धारा के विरुद्ध चलता है। तूफान आएँगे, असफलताएँ आएँगी, पानी भीतर घुसेगा, पर यह सब हमें रोक नहीं पाएगा।

नए नियम की सब पत्रियाँ लगातार गति और परिवर्तन की उस गतिशीलता की बात करती हैं, जो मसीही जीवन का अंग है:

- दौड़ो
- मार डालो
- बढ़ते जाओ
- पीछा करो
- अपने आप को शुद्ध करो
- भरपूर होते जाओ
- नए बनते जाओ
- बहुत अधिक बढ़ते जाओ
- उतार फेंको और पहन लो

ये और इनके अतिरिक्त और भी आह्वान स्पष्ट करते हैं कि अपने आप कुछ नहीं होता। परमेश्वर हमारे जीवन में उस बात को “जादू” से उत्पन्न नहीं करता, जो हमें स्वयं करनी है (यद्यपि सब कुछ उसके अधिकार में है)। परमेश्वर की सामर्थ्य हमारे लिए उपलब्ध है, और उस पर भरोसा ही वह नहर है, जिसके द्वारा यह सामर्थ्य हम तक बहकर आती है। जब तक कोई करता नहीं, तब तक कुछ नहीं होता! यह एक सच्ची बात है, हमारे पवित्रीकरण के संबंध में भी। परमेश्वर हमारा पूरा समर्पण चाहता है। हमारा उद्धार इन आह्वानों से घिरा हुआ है; ये आह्वान और उनका पालन उसका वैसे ही अंग हैं, जैसे साँस लेना जीवन का। ये आह्वान बस “उद्धार के तर्क से निकलते” हैं।

2.7 हमारा पिता

पूरे समर्पण वाला जीवन हर दिन सफल नहीं होता। हम इतने यथार्थवादी हैं कि जानते हैं कि हमें प्रतिदिन छोटी या बड़ी असफलताओं से जूझना पड़ता है। परन्तु हमारा जीवन हमारे स्वर्गीय पिता के हाथ में है। वह कोई तानाशाह नहीं, जो हमारी गलतियों की प्रतीक्षा में बैठा हो। हम उसके बेटे और बेटियाँ हैं, जिन्हें उसने अपने ही पुत्र के जीवन के असीम ऊँचे दाम से मोल लिया है। इसी अनुग्रह के संबंध से हम जीते हैं। हम किसी निर्दयता से माँग करनेवाली व्यवस्था के अधीन नहीं, बल्कि अपने स्वर्गीय पिता के अनुग्रह के अधीन हैं। वह प्रोत्साहित करता है और सहायता करता है, वह हमें प्रेरित करता है और बार-बार हमारा उत्साह बढ़ाता है। जो कुछ हमें उसकी महिमा के लिए जीवन जीने के लिए चाहिए, वह देता है। प्रार्थना में हम उससे “अब्बा” (प्रिय पिता) कहते हैं। जब कुछ बिगड़ जाता है या हमारे जीवन में निर्बलताएँ प्रकट होती हैं, तो वह

हमें ताने नहीं देता। उसके सामने हम अपने पापों का अंगीकार करते हैं, जो दुर्भाग्य से अब भी होते हैं। हर वह पाप, जो हम करते हैं और जिसका अंगीकार नहीं करते, हमारे स्वर्गीय पिता और उसके पुत्र यीशु मसीह के साथ हमारी संगति को बाधित करता है। इसलिए हमें उसे रास्ते से हटाना चाहिए। जब आपका साहस टूट जाए और आप अपने आप को अयोग्य महसूस करें, जब आपको लगे कि आप असफल हैं, तब परमेश्वर के इन शब्दों से उत्साह पाइए: “कुचले हुए नरकट को वह न तोड़ेगा और न टिमटिमाती बत्ती को बुझाएगा” (यशायाह 42:3)।

पिता की बाँहों में वापस लौटने का कदम सदा संभव है। उसके पास क्षमा, अनुग्रह और सुधार है, और साथ ही एक नई शुरुआत भी। उसके पास फिर से स्वस्थ हुआ जा सकता है, चाहे विश्वास निर्बल हो और समर्पण लगभग बुझ चुका हो। शिमशोन बिल्कुल नीचे गिर गया था, पर वह फिर से सँभल गया। उसके बाल फिर से बढ़ने लगे, यद्यपि दुर्भाग्य से उसकी आँखों की ज्योति वापस नहीं आई। वहाँ तक पहुँचने में समय लगा, पर उसकी सबसे बड़ी विजय का दिन आया, यद्यपि उससे पहले उसने पाप के कारण एक बड़ी पराजय झेली थी।

2.8 परमेश्वर क्या चाहता है

परमेश्वर हमसे ऐसी कोई बात नहीं माँगता, जिस तक हम पहुँच न सकें! वह हमारा हृदय चाहता है, वह चाहता है कि जब हम उसके विषय में सोचें तो हम में आनन्द और भीतरी भाव-विभोरता हो। परमेश्वर हमें सुखी करना चाहता है। वह हमारा शोषण नहीं करना चाहता, न जीवन का आनन्द छीनना चाहता है। कभी-कभी मसीही यही आभास देते हैं। मसीही के रूप में हम सुखी कैसे होते हैं? यह हमें उसके हवाले किए हुए जीवन में मिलता है, और कहीं नहीं। मैं जे एडम्स (Jay Adams) का उद्धरण देता हूँ: “बहुत से मसीहियों में एक गम्भीर कमी दिखाई देती है: उनमें धीरज की, दृढ़ता की कमी है। धीरज शायद एक व्यवस्थित, परमेश्वर को प्रसन्न करनेवाले जीवन की कुंजी है। कोई भी स्केटिंग, स्कीइंग, बाँसुरी बजाना, जूते के फीते बाँधना, पढ़ना, लिखना या गाड़ी चलाना तब तक नहीं सीखता, जब तक वह पर्याप्त समय तक प्रयास न करे। मनुष्य अनाड़ीपन और असफलता के बावजूद दृढ़ता से लगा रहकर सीखता है, जब तक कि वह वांछित कौशल प्राप्त न कर ले। मनुष्य उसे बार-बार करके सीखता है, जिसे वह सीखना चाहता है। बाइबल हमें बताती है कि पवित्र जीवन-शैली के साथ भी ठीक ऐसा ही है।

इस बात को कि पवित्रशास्त्र अपने प्रयास पर इतना जोर देता है, हमें गलत नहीं समझना चाहिए; यह परिश्रम अनुग्रह में जड़ पकड़े हुए है और ‘शरीर का काम’ नहीं है। केवल पवित्र आत्मा के द्वारा ही हम धीरज प्राप्त कर सकते हैं। पर आत्मा का कार्य ‘रहस्यवादी’ नहीं है। पवित्र आत्मा हमें बताता है कि वह किस प्रकार कार्य करता है: पवित्रशास्त्र गवाही देता है कि वह पवित्रशास्त्र के द्वारा कार्य करता है।

जब हम इच्छा से, प्रार्थना करते हुए, दृढ़ता से बाइबल के आह्वानों का पालन करते हैं, तो बाइबल पर आधारित जीवन-शैलियाँ हमारे अस्तित्व का अंग बन जाती हैं। हम बाइबल पढ़ते हैं और साथ ही परमेश्वर से

विनती करते हैं कि वह पढ़ी हुई बात को व्यवहार में लाने में हमारी सहायता करे। इसी के लिए उसने हमें पवित्र आत्मा दिया है। ‘अनुग्रह’ शब्द का अर्थ बहुआयामी है। उसका एक पहलू है ‘सहायता’। पवित्र आत्मा उनकी सहायता करता है, जो उसका वचन पढ़ते हैं और फिर विश्वास में वह करने का साहस करते हैं, जो वह कहता है। वह हमें सामर्थ्य अग्रिम रूप में देने का वादा नहीं करता। अक्सर वह (तभी) आती है, जब हम वह करते हैं, जो हमसे माँगा जाता है।”⁶

2.9 अवश्य है कि वही बढ़े – और मैं घटूँ!

यह यूहन्ना बपतिस्मा देनेवाले के जीवन का लक्ष्य था, जो प्रभु यीशु का अग्रदूत था। यह एक प्रक्रिया है, जिसे हम यूहन्ना से अपनाना चाहते हैं, यह जानते हुए कि यह हमारे पूरे जीवन भर चलेगी! यह रेखाचित्र दिखाता है कि यूहन्ना का यह सरल और साथ ही कठिन वाक्य क्या कहता है: घटाव (ऋण) हमारे पुराने जीवन और हमारे अपने लक्ष्यों और रुचियों पर लागू होता है, जबकि बढ़त (धन) स्पष्ट रूप से हमारे प्रभु पर लागू होती है!

(रेखाचित्र: एक समय-रेखा पर दो विपरीत दिशा में चलनेवाले वक्र; घटते हुए वक्र पर ऋण-चिह्न और बढ़ते हुए वक्र पर धन-चिह्न अंकित है।)

- पुराने मनुष्य को उतार देना –
- नए मनुष्य को पहन लेना +
- बढ़ती हुई और शीघ्र ही सिद्ध मसीह-समानता
- विश्वास की दौड़
- पूरे जीवन भर चलनेवाली वृद्धि की प्रक्रिया
- नया जन्म
- यीशु का आगमन और पुनरुत्थान

2.10 नया जीवन एक रेखाचित्र में

नीचे दिए गए रेखाचित्र (वर्ग, वृत्त, त्रिभुज) अलग-अलग मनुष्यों को दर्शाते हैं। पहली पंक्ति दिखाती है कि संबंधित व्यक्ति कैसे जन्म लेता है, दूसरी व्यक्तिगत जीवन का विकास और तीसरी नया जन्म। चौथी और पाँचवीं पंक्ति स्पष्ट करती हैं कि वह कैसे विश्वास में बढ़ता है या शारीरिक रीति से जीता है, जबकि छठी पंक्ति लक्ष्य को, अर्थात् मसीह के पास सिद्धता को, दर्शाती है।

ये तीन आकृतियाँ किन्हीं भी मनुष्यों में, जैसे वे जन्म लेते हैं, अन्तर दिखाने के लिए हैं। यह अन्तर मूल और सामाजिक पृष्ठभूमि में, व्यक्ति की विशेष प्रकृति में, अलग-अलग मिज़ाजों और स्वाभाविक प्रतिभाओं में हो सकता है। कुल मिलाकर बात उस व्यक्तिगत व्यक्ति की है, जैसे वह दूसरे मनुष्यों से भिन्न है। जन्म के

6. जे. ई. एडम्स (Jay E. Adams), *Grundlagen biblischer Seelsorge*, पृ. 255।

समय उसकी पहचान इसी में थी, और इसमें उसका अपना कोई योगदान नहीं था। यह वह है, जिसे वह व्यक्ति स्वयं, कुछ अपवादों को छोड़कर, बदल नहीं सकता: उसकी संरचना। यह पहली पंक्ति की खाली आकृतियों में दर्शाया गया है।

आकृतियाँ खाली नहीं रहतीं। मनुष्य पापी के रूप में जन्म लेता है और पाप करता है। उसके व्यक्तित्व की संरचना पाप के द्वारा गलत दिशा में ढल जाती है। पापमय आदतें बनती हैं, जो फिर एक बुरा चरित्र बनाती हैं। इसका प्रतीक वह है, जो अब आकृतियों को भरता है। यद्यपि मनुष्य में नैतिक रूप से अच्छी बातें भी होती हैं, फिर भी वह अपने भीतर बसे हुए पाप से छाप पाता है। भरी हुई आकृतियाँ नए जन्म से पहले के मनुष्य को दिखाती हैं।

परमेश्वर मनुष्य का सुधार नहीं करता, बल्कि कुछ नया सृजता है। यह नया पूरी तरह व्यक्तिगत व्यक्तित्व के अनुरूप बनाया गया है। जैसे आदम में मानवीय व्यक्तित्वों के सब रूप पहले से विद्यमान थे, वैसे ही अन्तिम आदम, हमारे प्रभु यीशु मसीह के साथ भी है। वह मनुष्य बना और इस प्रकार हर एक व्यक्तिगत मनुष्य में जी सकता है। बाइबल इस तथ्य की तुलना एक बीज से करती है, जो हम में बोया जाता है: उसे पहले दिन से बढ़ना है, ताकि हमारा अस्तित्व मसीह के अस्तित्व में बदलता जाए। ईश्वरीय बीज पूरी तरह व्यक्तित्व के आकार के अनुरूप है। इस प्रकार मनुष्य के सृष्टि से मिले (अर्थात् वंशानुगत) गुण नए जन्म के द्वारा बदले नहीं जाते। “हमें यह मानना होगा कि परमेश्वर किसी रीति से हर मनुष्य में कुछ पूर्णतः नया डालने में समर्थ है, जो पूरी तरह उसके व्यक्तित्व के अनुकूल है, जिसके विनाश का उसने कभी इरादा नहीं किया था।”⁷ अब हर मनुष्य के व्यक्तिगत व्यक्तित्व में मसीह का अस्तित्व प्रवेश करता है और इस प्रकार यीशु के अस्तित्व की एक अद्वितीय अभिव्यक्ति बन जाता है। यह नई सृष्टि में उस विविधता और समृद्धि की अभिव्यक्ति है, जो पहली सृष्टि में भी पहले से विद्यमान है।

(छह पंक्तियों का रेखाचित्र, हर पंक्ति में एक वर्ग, एक वृत्त और एक त्रिभुज)

(पंक्ति 1: तीनों आकृतियाँ धूसर और खाली)

अलग-अलग मनुष्य, जैसे वे अपने व्यक्तिगत व्यक्तित्व के साथ जन्म लेते हैं

(पंक्ति 2: आकृतियाँ बहुत सी छोटी काली आकृतियों से भरी हैं)

नए जन्म से पहले व्यक्तिगत व्यक्तित्व दैनिक जीवन के अनुभवों से भर जाता है। चरित्र बनता है। अच्छे चरित्रिक गुणों के साथ-साथ अक्सर ऐसे व्यवहार होते हैं, जो बुरे हृदय से निकलते हैं और कभी-कभी अधिकांशतः पाप की छाप लिए होते हैं। वर्ग, वृत्त और त्रिभुज के भीतर की सामग्री उसके अनुरूप है, जो व्यक्ति परमेश्वर के बिना बन गया है।

(पंक्ति 3: हर आकृति के बीच में उसी आकार की एक छोटी सफ़ेद आकृति दिखाई देती है)

7. कस्टेंस (Custance), आर्थर सी. (Arthur C.), *Man in Adam and in Christ*, पृ. 171।

नए जन्म के दिन परमेश्वर के वचन का ईश्वरीय बीज मनुष्य में बोया जाता है। अब मसीह स्वयं विश्वासी का नया आत्मिक जीवन है। यह नया जीवन मनुष्य के व्यक्तित्व के अनुरूप ढाला गया है। यह छोटी और बड़ी आकृति की समानता से स्पष्ट होता है (उदाहरण के लिए छोटा वर्ग और बड़ा वर्ग)। नया जन्म परमेश्वर द्वारा दिए गए और सृष्टि से मिले व्यक्तिगत व्यक्तित्व को नहीं बदलता, बल्कि उसे मसीह के नए जीवन से भर देता है। परमेश्वर का लक्ष्य पाप में जन्मे व्यक्तित्व का नवीनीकरण और रूपान्तरण करके उसे मसीह के समान बनाना है।

(पंक्ति 4: सफ़ेद आकृति बढ़ गई है, काली आकृतियाँ कम हो गई हैं)

नए जन्म के दिन से ईश्वरीय जीवन का बीज बढ़ने लगता है। एक निरन्तर वृद्धि की प्रक्रिया के दौरान मसीह उस व्यक्ति में अधिक से अधिक आकार लेता जाता है। पुरानी सामग्री, पुरानी जीवन-शैली और व्यवहार के पुराने ढाँचे घटते जाते हैं और अधिक से अधिक लुप्त होते जाते हैं। बीज बढ़ता ही जाता है; अर्थात् मसीह का अस्तित्व नया जन्म पाए हुए व्यक्ति में अधिक से अधिक व्याप्त होता, उसे भरता और ढालता जाता है।

(पंक्ति 5: वर्ग में सफ़ेद आकृति फिर से छोटी हो गई है और काला भाग बढ़ गया है; वृत्त और त्रिभुज में सफ़ेद आकृति लगभग सब कुछ भर देती है)

इस मसीही का जीवन आगे विकसित नहीं हुआ। पुराना जीवन फिर से सामने आ गया है।

ये दोनों मसीही विश्वास में बढ़े हैं। उन्होंने इस बात पर ध्यान दिया कि शरीर के कामों को मार डालें, और मसीह पर अपने जीवन की सामग्री और लक्ष्य के रूप में भरोसा करें और उसी की सेवा करें।

(पंक्ति 6: वर्ग, वृत्त और त्रिभुज पूरी तरह सफ़ेद)

अनन्तकाल में हर विश्वासी के पास पुनरुत्थान की, अर्थात् महिमा की देह होगी। उसमें वह मसीह के समान होगा। साथ ही वह सदा के लिए वही व्यक्तिगत व्यक्ति रहेगा, जो परमेश्वर ने उसे उसके माता-पिता के द्वारा बनने दिया, अर्थात् जिसे उसने सृजा है। पूर्णता में पाप और पापी शरीर अन्तिम रूप से अतीत और इतिहास बन चुके होंगे।

बोया हुआ बीज बढ़े, ताकि मसीह और उसका अस्तित्व व्यक्तित्व में अधिक से अधिक व्याप्त हो जाए। यही परमेश्वर का लक्ष्य है। वह स्वयं वृद्धि देता है। परन्तु वृद्धि की मात्रा और गति हम से प्रभावित होती है। हमें पुरानी जीवन-शैली को उतार फेंकने के लिए कहा गया है, ताकि नए मनुष्य की जीवन-शैली हमारे आसपास के लोगों को अधिक से अधिक दिखाई दे। रेखाचित्र में आकृतियाँ सदा एक जैसी रहती हैं, केवल सामग्री बदलती है। हमें कहा गया है कि उन सब दूसरे बीजों और पौधों को, जो परमेश्वर और उसके आत्मा से नहीं आते और पुराने जीवन से निकलते हैं, दृढ़ता से हटा दें, ताकि परमेश्वर का बीज बढ़ सके।

पाँचवीं पंक्ति स्पष्ट करती है कि दुर्भाग्य से पीछे की ओर भी जाया जा सकता है और बीज, अर्थात् मसीह, हमारे जीवन के केन्द्र में अब सबसे महत्वपूर्ण भूमिका नहीं निभाता। बीज छोटा होता जाता है, पुराना अहं-जीवन फिर से बढ़ने लगता है।

या फिर वृद्धि निरन्तर होती है, जैसा वृत्त और त्रिभुज में दिखाया गया है, जहाँ व्यक्तित्व सचमुच मसीह द्वारा पकड़ा और भरा हुआ है।

अन्त में केवल मसीह ही दिखाई देगा, स्वर्गीय महिमा की सिद्धता में। हम सदा वही रहेंगे, जैसे परमेश्वर ने हमें सृजा, पर तब बिना किसी पाप के, और फिर भी प्रभु के समान।

मेरे जीवन में परमेश्वर का बीज कितना बड़ा है? वह कहाँ तक बढ़ा है?

2.11 सब कुछ एक नज़र में

यह रेखाचित्र⁸ हमारे मसीही जीवन के उन मुख्य तत्वों का एक सरल सारांश है, जो एक दूसरे के साथ सीधे परस्पर प्रभाव और निर्भरता में हैं। हमने निर्णय लिया है कि हम उद्धार को केवल एक आनन्दमय अनन्तकाल के टिकट के रूप में बुक नहीं करेंगे। हम परमेश्वर से मिलनेवाले जीवन को, उसके प्रेम, उसके आनन्द और उसकी शान्ति को अभी से अनुभव करना चाहते हैं। जैसे प्रभु यीशु मसीह ने हमें अपना बनाने के लिए सब कुछ दे दिया, वैसे ही हम कृतज्ञता से अपना जीवन उसे सौंपना चाहते हैं।

यह कोई असंभव कार्य नहीं है। परमेश्वर हमारा पूरा आनन्द और सन्तोष चाहता है, और वह हम केवल परमेश्वर के लिए जीए गए जीवन में ही अनुभव करते हैं। ऐसे जीवन का केन्द्र मसीह है – जीवन की सामग्री, जीवन का लक्ष्य और भविष्य। एक दिन वह ब्रह्मांड के हर कोने को भर देगा, और वह हमें अभी से भरता है। यह परिपूर्णता हमारे पूरे अस्तित्व में व्याप्त होती है और दिन-प्रतिदिन हमें और अधिक उसके स्वरूप में बदलती जाती है। इस सकारात्मक परिवर्तन को हम स्वयं सबसे कम देख पाते हैं, पर परमेश्वर हम पर कार्य कर रहा है।

आरम्भ में पवित्र आत्मा है। वह सारे कार्यों की सामर्थ्य और आधार है। इसके साथ दैनिक अनुभव आता है, जो हमें ढालता है और भलाई के लिए चुनौती देता है, पर बुराई के लिए परीक्षा में भी डालता है। यह विश्वास का अखाड़ा है, जिसमें हमारे जीवन के नाटक खेले जाते हैं, जब हम अपने जीवन के प्रभु की, जिसे हम देखते नहीं, आज्ञा मानते हैं, उस पर भरोसा करते हैं और उससे प्रेम करते हैं।

हर बात में हमारे पूरे समर्पण, हमारे परिश्रम और गम्भीरता से लेने की इच्छा की आवश्यकता है। हमें अविभाजित और भरे हुए हृदय से यीशु के पीछे चलना है, और अपने जीवन, अपनी इच्छाओं और अपने लाभों को पीछे रखने की तत्परता और अनुशासन साथ लाना है, ताकि सच्चा जीवन प्राप्त कर सकें।

8. डैलस विलार्ड (Dallas Willard), *The Divine Conspiracy*, पृ. 347 के विचार पर आधारित।

(रेखाचित्र: एक त्रिभुज, जिसमें तीन तीर ऊपर से और दोनों निचले कोनों से बीच के एक वृत्त की ओर इशारा करते हैं; पाठ ऊपर, वृत्त में, नीचे बाईं ओर और नीचे दाईं ओर)

अनुग्रह, सामर्थ्य और सहायता में पवित्र आत्मा के द्वारा परमेश्वर का कार्य, जो हम में बसता है और निरन्तर हमारे साथ खड़ा रहता है। उसका वचन, बाइबल, हमारे जीवन के लिए बुद्धि है। वह हमें सुरक्षित अन्तिम लक्ष्य तक पहुँचाना चाहता है, पर हमारे पार्थिव जीवन के लिए अपना व्यक्तिगत लक्ष्य भी हमारे साथ पूरा करना चाहता है।

यीशु मसीह का अस्तित्व और जीवन मसीही होने का केन्द्र और मध्यबिन्दु है। यीशु को हम में आकार लेना है। परमेश्वर हमें अपने पुत्र के स्वरूप के समान बना देगा। यह प्रक्रिया मसीह के आगमन पर पूर्ण होगी, पर नैतिक दृष्टि से यह पृथ्वी पर ही आरम्भ हो जाती है।

जीवन की वास्तविकता, विश्वास की दौड़: रोज़मर्रा का जीवन, अपने सब पापमय प्रलोभनों और बहकावों के साथ, पर शत्रु के आक्रमणों और परीक्षाओं और हमारे स्वर्गीय पिता के प्रशिक्षण में आनेवाली अलग-अलग परखों के साथ भी

हमारा विश्वास और हमारी इच्छा, हमारा निर्णय और हमारा परिश्रम, हमारा प्रयास, अनुशासन और धीरज – अपने अनाड़ीपन के बावजूद, गलतियों, असफलताओं और पराजयों के बावजूद आगे बढ़ते रहने और विश्वास की दौड़ में दौड़ते रहने का, ताकि स्वर्गीय अन्तिम लक्ष्य तक पहुँच सकें

2.12 पहाड़ों पर पैदल यात्राएँ

अब, जबकि हवाई सैर ने एक गहरी छाप छोड़ी है, मैं आपको कुछ “आत्मिक” पर्वत-यात्राओं के लिए आमंत्रित करता हूँ। मेरे बच्चे पैदल यात्राओं से कुछ कतराते हैं, और मुझे भी इसके लिए अपने आप को कुछ उठाना पड़ता है। पर एक बात मैंने पाई है: जब मैं अपने कार्य-कक्ष से आल्गॉय आल्प्स (Allgäuer Alpen) की बहुत सी चोटियाँ देखता हूँ, तो इनमें से किसी एक चोटी तक पैदल चढ़कर वहाँ का दृश्य निहारना एक अनमोल अनुभव होता है। थका देनेवाली चढ़ाई के बाद के इस क्षण को खरीदा नहीं जा सकता, उसके लिए स्वयं सक्रिय होना पड़ता है। विमान से नीचे देखना एक बात है, पर स्वयं पहाड़ों में जाना दूसरी बात है।

ये पर्वत-यात्राएँ समतल भूमि पर कोई हानिरहित सैर नहीं हैं। मैं जिनके लिए आमंत्रित करता हूँ, वे रोमांचक पर्वत-यात्राएँ हैं, जिनमें हम धीरज से ऊपर चढ़ते हैं और हमारे सामने आसान और कठिन दोनों तरह के रास्ते होते हैं, पर हम सदा लक्ष्य को स्पष्ट रूप से दृष्टि में रखते हैं: ये उद्धार के वे तथ्य हैं, जिनके ऊपर से हम पहले ही “उड़ चुके” हैं। अब बात उन महत्वपूर्ण विवरणों की होगी, जो मसीह में हमारी स्थिति के विषय में बाइबल की शिक्षा में और इस तथ्य में निहित हैं कि “हम में मसीह” का क्या अर्थ है। ये पर्वत-यात्राएँ सार्थक हैं। मैं स्वयं ये यात्राएँ कर चुका हूँ, जब मैंने ये पंक्तियाँ लिखीं, और वे प्रभावशाली, झकझोर देनेवाली, प्रकाश देनेवाली, मुक्त करनेवाली और बहुत प्रेरक खोजें थीं।

हमारा पर्वत-मार्गदर्शक पवित्र आत्मा हो, जिसने हमें परमेश्वर के सारे सत्य में, बाइबल के सत्य में, ले चलने का दायित्व लिया है। वह इस बात पर ध्यान केन्द्रित करता है कि उसकी, अर्थात् मुक्तिदाता यीशु मसीह की, गवाही दे और उसे हमारे जीवन में बड़ा करे।

पहली यात्रा सबसे लम्बी और सबसे अधिक थकानेवाली है, पर साथ ही सबसे महत्वपूर्ण भी। एक बार जब यह चोटी पार कर ली जाए, तो अगली उतनी कठिन नहीं होगी। वह पत्नी, जो पौलुस ने रोमियों को लिखी, सुसमाचार में परमेश्वर की धार्मिकता को, पर उसके अनुग्रह को भी, स्पष्ट करती है। सबसे पहले यही पत्नी हमें व्यस्त रखेगी। कहीं और उद्धार के इन मूलभूत प्रश्नों को हमारे संबंध में इस प्रकार नहीं सुलझाया गया है। यही कारण भी है कि हम यहाँ परिश्रम करके पद-दर-पद चोटी तक चढ़ना चाहते हैं।

2.13 आदम से मसीह तक

हम रोमियों की पत्नी में आगे से नहीं, बल्कि इस “अनुग्रह की रेलगाड़ी” के पाँचवें “डिब्बे” में चढ़ते हैं। फिर भी हम संक्षेप में संकेत करना चाहते हैं कि पहले अध्यायों में क्या मिलता है: 1:1-17 की भूमिका के बाद पौलुस 1:18 – 5:11 में सारी मानवजाति के पापकर्मों के विषय में बोलता है, जिनके कारण वह परमेश्वर के सामने दोषी खड़ी है (1:18 – 3:20)। परमेश्वर की ओर से इस निराशाजनक स्थिति के सामने उद्धार के दो तथ्य रखे जाते हैं:

- वह छुटकारा, जो परमेश्वर हमें क्रूस पर बहाए गए यीशु मसीह के लहू के द्वारा बिना किसी बदले के प्रदान करता है (3:21-31)
- परमेश्वर की जिलानेवाली सामर्थ्य, जिसने मसीह को फिर से जीवन में बुलाया (4:1-25)।

पत्नी का दूसरा भाग 5:12 से 8:39 तक है। यहाँ पौलुस इस प्रश्न पर विचार करता है कि हमारी न सुधरनेवाली पापमयता के संबंध में परमेश्वर क्या करता है। बात पाप की है – एक सिद्धांत के रूप में, एक प्रबल शक्ति के रूप में, जो मनुष्य के भीतर है। प्रश्न यह है: धर्मी विश्वास से कैसे जीवित रह सकता है (1:17)?

2.14 हमारे उद्धार के लिए पहले क्या होना आवश्यक था?

जब मनुष्य इतना भ्रष्ट है, तो क्या मनुष्य के भीतर कुछ होना आवश्यक नहीं? “यह सही दृष्टिकोण नहीं होगा। प्रेरित पौलुस के पास रोमियों की पत्नी में एक बिल्कुल अलग उत्तर है: पहले चरण में हमारे भीतर कुछ होना आवश्यक नहीं था, बल्कि हमारे बाहर कुछ होना आवश्यक था – मसीह में। हमारे पापकर्मों के लिए मसीह के कार्य के साथ-साथ हमें पहले हमारे पाप के लिए मसीह के कार्य के विषय में सोचना चाहिए, क्योंकि वह भी उद्धार का एक तथ्य है। उसके बाद, केवल तभी और उससे पहले नहीं, हमारे भीतर पवित्र आत्मा के कार्य की बारी आती है। हमारे लिए मसीह के कार्य को हमारे भीतर पवित्र आत्मा के कार्य से स्पष्ट रूप से अलग करना चाहिए। पहला कार्य पूरी तरह हमारे बाहर हुआ है, और वह पूरा हो चुका है, उसमें अब

कुछ जोड़ने की आवश्यकता नहीं। दूसरा हमारे भीतर होता है, और वह अभी पूरा होने से बहुत दूर है, उसमें अभी बहुत कुछ जुड़ना है। पर यह बिल्कुल स्पष्ट होना चाहिए कि पाप की समस्या (पाप की शक्ति, बुराई की जड़) का समाधान भी ठीक उसी तरह उद्धार के तथ्यों में शामिल है, जैसे पापकर्मों की समस्या का समाधान। इसे और दूसरे शब्दों में कहें तो:

- पाप से मुक्ति सबसे पहले हमारे बाहर होती है, और इसमें वह धर्मी ठहराए जाने का एक भाग है (तुलना करें 6:7 में ‘धर्मी ठहराया गया’⁹ अभिव्यक्ति); यह मसीह का कार्य है, जो एक ही बार सदा के लिए पूरा हो चुका है।
- उसके बाद मुक्ति हमारे भीतर आकार लेती है, और यह पवित्रीकरण का एक भाग है, जो हमारी महिमा में जाकर पूरा होगा (8:30); यह पवित्र आत्मा का कार्य है, जो हमारे पार्थिव जीवन के दौरान क्रम-ब-क्रम पूरा होता है।¹⁰

9. ER (जर्मन बाइबल अनुवाद) में दी गई टिप्पणी देखें।

10. एच. पी. मेडेमा (H. P. Medema), *Romeinen 7 enzovoorts*, पृ. 44।

3. रोमियों 5:12-21: आदम से मसीह तक

जब रोमी विश्वासियों ने पढ़कर सुनानेवाले को 5:11 तक उत्सुकता से सुन लिया था, तो वे – यद्यपि वे विश्वास में और इस प्रकार उद्धार में पहले ही आ चुके थे – एक बार फिर चैन की साँस ले सके। ऐसा प्रतीत होता है मानो यह अभी-अभी हुआ हो: उनका परमेश्वर के साथ मेल था, और इस ईश्वरीय न्याय-प्रक्रिया में वे दोषी नहीं, बल्कि सारी पृथ्वी के न्यायी द्वारा धर्मी ठहराए गए थे। अपराधों का विषय और यह तथ्य कि अब वे पापी नहीं, बल्कि धर्मी हैं, वास्तव में पद 11 के साथ समाप्त हुआ प्रतीत होता है। तो क्या पाप और परमेश्वर की धार्मिकता के विषय में सब प्रश्न अन्तिम रूप से सुलझ गए हैं? स्पष्ट है कि नहीं। अब बात फिर से पूरे ज़ोर से आरम्भ होती है। प्रेरित एक बार फिर ऐसा तनाव खड़ा करता है, जैसा इस पत्र के पहले अध्यायों में भी अनुभव होता है।

पाप कहाँ से आया? मृत्यु कहाँ से? सब मनुष्य इससे प्रभावित क्यों हैं? परमेश्वर की व्यवस्था की क्या भूमिका है? और निःसंदेह यह प्रश्न: क्या पाप, मृत्यु और दंड की आज्ञा के इस दुष्चक्र से निकलने का कोई मार्ग है? शायद कुछ लोगों ने हैरान होकर एक दूसरे को देखा होगा, क्योंकि क्या पौलुस ने अभी-अभी उद्धार की जयजयकार नहीं सुनाई थी? अब वह फिर से पाप और मृत्यु से आरम्भ क्यों करे? उत्तर: यह विषय अभी पूरी तरह नहीं निपटा है। आगे सुनने पर शीघ्र ही स्पष्ट हो जाता है कि अब बात किसकी है। अब बात इसकी नहीं रही कि मनुष्यों ने क्या किया है, जिसके द्वारा वे अधर्मी और पापी सिद्ध हुए हैं। अब बल्कि प्रश्न यह है: ऐसा क्यों है? अब विषय यह है कि **मनुष्य क्या है**, वह पाप क्यों करता है, पापकर्मों का कारण क्या है। बुरे फलों पर विचार करने के बाद अब पौलुस जड़ को खोदकर निकालता है। पापी को केवल उसके पापकर्मों से धर्मी ठहराया, अर्थात् दोषमुक्त किया जाना ही आवश्यक नहीं, बल्कि उसे पाप की शक्ति से भी छुड़ाया जाना आवश्यक है। इस शक्ति के प्रभुत्व में वह आदम के साथ अपने संबंध के द्वारा आया है – मानो जीवन के वंश-वृक्ष के द्वारा। यही उसकी समस्या है, और इस संबंध में वह जकड़ा हुआ है, वह स्वयं इससे छूट नहीं सकता। जब तक मसीह नहीं आया, इस संबंध से बच निकलने का कोई अवसर नहीं था।

यह पाठ पतन और उसके परिणामों की विपत्ति को दिखाता है। पर साथ ही वह दो मुख्य व्यक्तियों (अर्थात् आदम और मसीह) के विरोध और आमने-सामने की तुलना के द्वारा यह भी स्पष्ट करता है कि परमेश्वर ने जीवन का मार्ग कितना चौड़ा खोल दिया है।

इस पाठ में पौलुस अध्याय 6, 7 और 8 की नींव रखता है। यह पाठ वास्तव में भूमिका और तैयारी का काम करता है। जो यहाँ ध्यान से पढ़ता है, उसे आगे के अध्यायों में इतनी कठिनाई नहीं होगी।

3.1 पद 12: सब कुछ कैसे शुरू हुआ

इसलिए, जैसे एक मनुष्य के द्वारा पाप संसार में आया, और पाप के द्वारा मृत्यु, और इस प्रकार मृत्यु सब मनुष्यों तक फैल गई, क्योंकि सब ने पाप किया ...

एक ही मनुष्य ने पाप के लिए द्वार खोल दिया। केवल **अपने** जीवन में ही नहीं, बल्कि संसार में। इसका अर्थ है कि इस संसार में जो कुछ जीवित है, वह भी इससे प्रभावित है: सब मनुष्य मरते हैं, क्योंकि सब ने पाप किया है। इस मनुष्य ने इसके साथ मृत्यु को और उससे जुड़े सारे दुःख को भी भीतर आने दिया। एक चिंगारी की तरह एक पहले, देखने में मामूली, कर्म ने एक ऐसी व्यापक आग लगा दी, जो आज पहले से भी अधिक भड़क रही है।

यह दुःखद पात्र ऐतिहासिक आदम है, पहला मनुष्य, जैसा कि तुरन्त दिखाई देता है। पौलुस जानता तो था कि आज्ञा न मानने का पहला क़दम आदम की ओर से नहीं, बल्कि हव्वा की ओर से आया था (1 तीमुथियुस 2:14), पर आदम चुप रहा और साथ हो लिया। उसने अपनी पत्नी का अनुसरण किया, यद्यपि आज्ञा **उसे** हव्वा के होने से पहले मिली थी। इस प्रकार जो कुछ हुआ, उस सब के लिए वह ज़िम्मेदार था।

पौलुस का विषय दो मुख्य व्यक्तियों, अर्थात् आदम और मसीह, का विरोधाभास है, जिनसे उनके सब “वंशज” जुड़े हुए हैं।

3.1.1 पाप और पापकर्म

पाप आदम से पहले ही विद्यमान था, क्योंकि शैतान आरम्भ से ही पाप करता आया है (1 यूहन्ना 3:8)। वह बहकाने के लिए पहले मनुष्यों के पास आया। परीक्षा करनेवाले का, उस पुराने साँप का, यहाँ नाम नहीं लिया गया है। मनुष्य ने पूरी अपनी ज़िम्मेदारी में काम किया।

यहाँ “पाप” शब्द केवल पापकर्मों का एकवचन नहीं है। यहाँ बात इससे कहीं अधिक की है। जैसा इस स्थान और आगे के पाठों से समझ में आता है, यहाँ बात पाप की है – परमेश्वर-विरोधी एक सिद्धांत के रूप में, एक ऐसी शक्ति के रूप में, जो परमेश्वर और उसकी आज्ञाओं के विरुद्ध खड़ी होती है। बात पाप की है – एक जानलेवा, घातक रूप से बढ़नेवाले रोग के रूप में, जिसने सब मनुष्यों को जकड़ लिया है। प्रेरित यूहन्ना कहता है: “पाप तो व्यवस्था का विरोध है” (1 यूहन्ना 3:4)। इस प्रकार पाप में परमेश्वर के अधिकार का अस्वीकार (अराजकता) शामिल है, चाहे वह किसी भी दृश्य या अदृश्य रूप में हो।

वॉचमैन नी (Watchman Nee) पापकर्मों और पाप की तुलना बहुत स्पष्ट रूप से इस स्थिति से करते हैं: यदि कोई शराब की समस्या का अन्तिम समाधान करना चाहता है, तो सारी शराब को ढूँढ़कर नष्ट कर देना पर्याप्त नहीं। आपूर्ति के स्रोतों को, अर्थात् शराब बनानेवाले स्थानों को, बन्द और नष्ट करना होगा। इस प्रकार शराब स्वयं पापकर्मों का प्रतीक है, जबकि कारखाने पाप का प्रतीक हैं।

3.1.2 पाप और मृत्यु

यह बात कि पाप मृत्यु को साथ लाएगा, आदम और हव्वा को मालूम थी (उत्पत्ति 2:17)। परमेश्वर ने स्वयं मृत्यु को इस बात के परिणाम के रूप में घोषित किया था कि वे भले और बुरे के ज्ञान के वृक्ष का वर्जित फल खाएँगे। मृत्यु उसी क्षण आरम्भ हो गई, जब उन्होंने इस आज्ञा का उल्लंघन किया। इस मृत्यु ने तुरन्त उस निर्बाध और भरोसे से भरे संबंध को तोड़ दिया, जो सृष्टिकर्ता अपनी सृष्टि के साथ रखता था।

मृत्यु का अर्थ अस्तित्व का मिट जाना या समाप्त हो जाना नहीं है। उसका अर्थ है अलगाव और पिछली दशा में परिवर्तन, अर्थात् गिरावट। नया नियम एक आत्मिक मृत्यु की बात करता है। इसमें मनुष्य के हृदय या आत्मा का मिट जाना शामिल नहीं, बल्कि परमेश्वर के साथ संबंध में आने की उसकी असमर्थता। यहाँ पौलुस पाप के परिणाम के रूप में दैहिक मृत्यु की बात करता है।

मृत्यु पाप का अनिवार्य और अटल (देर से आनेवाला) परिणाम है। मृत्यु सब मनुष्यों तक फैल गई, उसे रोका नहीं जा सका। यह संभव हो सकता था, यदि किसी मनुष्य ने पाप न किया होता और इस प्रकार सिद्ध कर दिया होता कि उसमें आदम का स्वभाव नहीं है। मनुष्यों में ऐसा कभी नहीं हुआ; अब तक किसी में निष्पापता का निदान नहीं किया जा सका। सब प्रभावित हैं और देर-सवेर मृत्यु भोगते हैं।

3.1.3 पतन और मूल पाप

इसका अर्थ यह नहीं कि आदम का पतन हर मनुष्य में दोहराया जाता है, इस प्रकार कि उसे आदम की तरह एक निर्दोष के रूप में आज्ञा मानने या अपराध करने के चुनाव के सामने खड़ा किया जाता है। यदि ऐसा होता, तो यह संभावना होती कि शायद कोई मनुष्य पाप न करने में सफल हो जाए, और परिणामस्वरूप उसे मरना भी न पड़े। पौलुस कहना चाहता है कि हर मनुष्य ने आदम का पापमय अस्तित्व विरासत में पाया है और इस प्रकार उसका जीवन पाप की छाप लिए हुए है। वंश की रेखा कभी टूटी नहीं। इसके दो प्रमाण हैं: पहला मृत्यु, और फिर यह तथ्य भी कि हर मनुष्य ने पाप किया है। यह आदम की स्थिति से इस अर्थ में भिन्न है कि आज मनुष्य आदम से विरासत में मिले पापी स्वभाव के कारण पहले से ही नैतिक रूप से निर्बल (हाँ, भ्रष्ट) है और परिणामस्वरूप पाप करता है। “मूल पाप”¹¹ की धर्मवैज्ञानिक अवधारणा इसी पाठ से निकली है।

आदम के अपराध के द्वारा पाप हर मनुष्य का स्थायी साथी बन गया है, क्योंकि एक परमेश्वर-विरोधी सिद्धांत के रूप में उसने मनुष्य के पूरे अस्तित्व को एक असाध्य रोग की तरह संक्रमित कर दिया है। उसने पूरे मनुष्य को जकड़ लिया है – उसकी आत्मा, उसके प्राण, उसके हृदय, उसके मन, उसकी इच्छा और उसकी देह को। पाप के परिणाम के रूप में मृत्यु ने मनुष्य के अभौतिक भाग को – उसके भीतरी मनुष्य को

11. अंग्रेजी में *original sin*।

– भी जकड़ लिया है और “अपराधों और पापों में” एक आत्मिक मृत्यु उत्पन्न की है (इफिसियों 2:1), और उसके भौतिक भाग (देह) को भी हानि पहुँचाई है। वह भी मृत्यु के अधीन है: देह पाप के कारण मरी हुई है (8:10)।

हर मनुष्य का इतिहास उसके आदि-पिता से अलग नहीं किया जा सकता। उसका इतिहास इस प्रकार नए सिरे से नहीं लिखा जाता कि उसे यह सिद्ध करने का अवसर मिले कि उसे पाप करना आवश्यक नहीं। वह अपने सब दुःखद परिणामों के साथ आदम की सन्तान है। जन्म लेनेवाले किसी भी बच्चे को पाप सीखना नहीं पड़ता। पाप उसे पालने में ही मिल जाता है, और केवल पालन-पोषण ही पाप के पूर्ण विस्फोट को रोकने में समर्थ है।

कुछ लोग इस पद को ऐसे समझते हैं मानो हमने आदम में, अर्थात् उसके अपराध में, (साथ) पाप किया हो। ऐसी स्थिति में हमें एक ऐसे कर्म के लिए ज़िम्मेदार ठहराया जाता, जो हमने किया ही नहीं। बात यह है कि आदम ने इस कर्म के द्वारा पाप को अपने जीवन में आने दिया, और हमने उसके वंशजों के रूप में अनिवार्य रूप से यह अस्तित्व विरासत में पाया है। इसे हम स्वयं बदल नहीं सकते।

3.1.4 एक साधारण आज्ञा

वह अपराध, जिसके इतने विनाशकारी परिणाम हुए, कोई भयानक पापकर्म नहीं था, कोई हत्या या डकैती नहीं – नहीं, वह एक बिल्कुल साधारण आज्ञा का उल्लंघन था। कोई भी कर्म तभी पाप नहीं बनता, जब वह विशेष रूप से भयानक हो। हर कर्म (अपने विचार-रूपी उद्गम से लेकर उसके क्रियान्वयन तक) पाप है, जैसे ही वह परमेश्वर के अधिकार को, जो यहाँ एक साधारण आज्ञा में व्यक्त होता है, अस्वीकार करता है या केवल भूल भी जाता है।

इन अध्यायों में पाप का उल्लेख लगभग कभी पापमय कर्मों के रूप में नहीं, बल्कि लगभग सदा एक सिद्धांत के रूप में होता है, जो सब पापमय कर्मों के – अर्थात् पापकर्मों के – पीछे खड़ा है।

पाप एक सिद्धांत है, जो मनुष्य को इस ओर ले जाता है कि वह अपना जीवन स्वयं अपने हाथ में ले ले और परमेश्वर की इच्छा पर, या उसके अस्तित्व पर ही, ध्यान न दे। इसका परिणाम अनिवार्य रूप से “भयंकर” पापकर्म नहीं होता। एक नैतिक रूप से ऊँचे मनुष्य का जीवन, जो परमेश्वर की इच्छा के विषय में नहीं पूछता, ठीक उतना ही पाप से भरा है, जितना किसी हत्यारे या व्यभिचारी का। आगे के अध्यायों में बात इसी पाप की है। पाप का बीज हर मनुष्य में अंकुरित हुआ है, चाहे वह सब में समान रूप से बढ़ा न हो।

वह बड़ा प्रश्न, जिसकी ओर पौलुस बढ़ रहा है, यह है कि परमेश्वर ने पाप की इस समस्या के संबंध में क्या किया है। इसके लिए क्षमा या मेल-मिलाप पर्याप्त नहीं। परमेश्वर उसे क्षमा नहीं करता, जो मैं हूँ, बल्कि उसे, जो मैंने किया है। इस 5वें अध्याय के पहले आधे भाग में ही प्रेरित स्पष्ट रूप से कहता है कि हम “पापी थे”, अर्थात् अब नहीं हैं। इसे सम्भव करने के लिए ठीक-ठीक क्या हुआ? और परमेश्वर यह कैसे

सुनिश्चित करेगा कि एक विश्वासी के जीवन में पाप अब राज्य न करे, जैसा कि अब भी उन सब के साथ होता है, जो अब तक “आदम-परिवार” में हैं?

पद 12 एक लम्बे बीच के अंश से बाधित होता है, वह देखने में बीच में ही रुक जाता है। क्योंकि हम पूरा पाठ जानते हैं, इसलिए अधिक अच्छी तरह समझने के लिए हम यहाँ उसे अपने शब्दों में एक बार पूरा कर देते हैं – कुछ वैसे ही, जैसे पद 18 में, जहाँ यह पद 12 बीच के वाक्य के बाद आगे बढ़ाया जाता है:

इसलिए,

जैसे एक मनुष्य के द्वारा पाप संसार में आया

और पाप के द्वारा मृत्यु,

और इस प्रकार मृत्यु सब मनुष्यों तक फैल गई,

क्योंकि सब ने पाप किया ...

... वैसे ही एक मनुष्य और उसके धर्मी कर्म (गुलगुता) के द्वारा

धार्मिकता संसार में आई

और धार्मिकता के द्वारा (अनन्त) जीवन,

और इस प्रकार जीवन सब मनुष्यों तक फैल गया।

3.2 पद 13: व्यवस्था दिए जाने से पहले का पाप

... क्योंकि व्यवस्था के आने तक पाप संसार में था;

परन्तु पाप गिना नहीं जाता,

जहाँ व्यवस्था नहीं होती।

यहाँ एक बीच का वाक्यांश आरम्भ होता है, जो पद 17 पर जाकर ही समाप्त होता है। पौलुस इस बात पर जोर देता है कि आदम के साथ संबंध से निकलने का कोई मार्ग नहीं – चाहे मानव इतिहास का कोई भी समय हो, व्यवस्था के साथ हो या उसके बिना।

मानव इतिहास आदम के साथ आरम्भ हुआ, और मनुष्यों के संसार में पाप और मृत्यु का इतिहास भी। तोरा, अर्थात् मूसा की व्यवस्था, तक शायद लगभग 2500 वर्ष बीते। व्यवस्था पाप को ठोस और प्रकट करती है, पर वह उस समय भी विद्यमान था जब यह व्यवस्था अभी नहीं थी। इसके द्वारा पौलुस अपने मुख्य कथन का समर्थन करता है कि आदम ही था, जिसके द्वारा पाप संसार में आया और उसमें बना भी रहा। उसके सब वंशज वही बन गए, जो वह था: वे पापी सिद्ध हुए। आदम से ही पाप राज्य करता रहा, चाहे व्यवस्था के द्वारा उसका नाम न लिया जा सका और उसकी सूचना न दी जा सकी। इसकी पुष्टि न केवल

उस समय के सब मनुष्यों की मृत्यु से होती है, बल्कि उस समय की घटनाओं से भी। नूह के समय का महान जलप्रलय शायद इसका सबसे स्पष्ट उदाहरण है। और अन्त में पौलुस ने अपनी पत्नी के पहले अध्यायों में व्यवस्था के समय से पहले के आदम के वंशजों की निराशाजनक रूप से भ्रष्ट दशा का वर्णन किया ही है। और यदि बाद में व्यवस्था का मापदंड उस समय पर लागू किया जाए, जब कोई व्यवस्था नहीं थी, तो विवेक की गवाही के साथ-साथ यह तथ्य भी प्रकट हो जाता कि उस समय भी मनुष्य पाप करते थे, क्योंकि वे पापी थे।

3.3 पद 14: आदम, आनेवाले का प्रतिरूप

तौभी आदम से लेकर मूसा तक मृत्यु ने राज्य किया,

उन पर भी, जिन्होंने पाप नहीं किया था

आदम के अपराध की समानता में,

जो आनेवाले का प्रतिरूप है।

(तुलना करें होशे 6:7)

मृत्यु का राज्य, जिससे कोई मनुष्य बच नहीं सकता, अटल है और पाप के उतने ही निर्दयी राज्य को सिद्ध करता है। यह इस बात का एक और संकेत है कि किसी ठोस आज्ञा के बिना भी पाप विद्यमान है। इससे भी बढ़कर: ये शब्द बिना किसी संदेह के स्पष्ट करते हैं कि उस समय मनुष्य इसलिए पापी नहीं थे कि वे पाप करते थे (यद्यपि यह भी सच है), बल्कि इसलिए कि वे आदम के वंशज थे। किसी ठोस अपराध के बिना भी मनुष्य मरते थे, और इससे यह प्रमाण मिल जाता है कि आदम के साथ संबंध ही समस्या है।

शिशु, जो जानबूझकर पाप नहीं करते, मरते हैं, क्योंकि वे आदम के वंशज हैं।

ज़ोर इस बात पर है कि हमारे आदि-पूर्वज आदम के साथ संबंध किसी भी मनुष्य के लिए (व्यवस्था के साथ या उसके बिना) काटा नहीं जा सकता। सब पापी के रूप में जन्म लेते हैं, क्योंकि हमारा आदि-पिता पाप में गिर गया। इसलिए यह वाक्य बहुत महत्वपूर्ण है: हम इसलिए पापी नहीं हैं कि हम पाप करते हैं। बल्कि हम इसलिए पाप करते हैं कि हम पापी हैं और पापी के रूप में ही जन्मे हैं।

पाप केवल संसार में ही नहीं आया, वह हमारे हृदय तक पहुँच गया है। यीशु कहता है कि हृदय से, भीतर से, सबसे भीतरी अस्तित्व से बुरे कर्म निकलते हैं (मरकुस 7:21-23)। वे इस तथ्य से उत्पन्न होते हैं कि हम “पापी बन गए हैं” (तुलना करें रोमियों 5:19; Luther 1912, जर्मन बाइबल अनुवाद)।

3.3.1 आदम और मसीह

अब पौलुस आदम और “आनेवाले” की एक मोहक आमने-सामने की तुलना पर विचार करता है। आनेवाला स्पष्ट रूप से मसीह है – भविष्य उसी का है। अतः आदम मसीह का एक “प्रतिरूप” है। इसे एक विपरीत-रूप भी कहा जा सकता है, क्योंकि समानता तो उनके अपने-अपने कर्मों के विस्तार और प्रभाव में है, पर वे कर्म पूरी तरह एक दूसरे के विपरीत हैं। पहला आदम पाप और मृत्यु का प्रतीक है, अन्तिम आदम (1 कुरिन्थियों 15:45) जीवन और धार्मिकता का। दोनों व्यक्तियों की समानता इसमें है कि दोनों को एक मानव-परिवार का सिर, मूल या पिता कहा जा सकता है। दोनों अपने वंशजों या अपनी जाति के प्रतिनिधि हैं।

3.4 पद 15: मसीह के द्वारा हानि की भरपाई से भी बढ़कर होता है

परन्तु क्या अनुग्रह का वरदान वैसा ही नहीं, जैसा अपराध?

क्योंकि यदि एक के अपराध से

बहुत लोग मर गए,

तो कहीं अधिक

परमेश्वर का अनुग्रह

और अनुग्रह में दिया गया दान,

जो एक मनुष्य, अर्थात् यीशु मसीह के द्वारा है,

बहुतों पर उमड़ पड़ा।

पौलुस आदम के प्रतिरूप को मसीह के विरोधाभासों के द्वारा समझाता है। आदम का अपराध उन बहुतों पर मृत्यु लाता है, जिनका वह आदि-पिता है। परन्तु अनुग्रह के परमेश्वर ने बात को वहीं नहीं छोड़ा। यह वास्तव में शुद्धतम अनुग्रह है, जो इस आदम-परिवार की सुधि लेता है। यह केवल उन्हीं पर लागू नहीं होता, जो बिना अपने दोष के आदम के अपराध के द्वारा अपनी खोई हुई, मृत्यु और पाप से चिह्नित दशा में आ गए हैं, बल्कि उन पर भी, जो स्वयं पाप के सिद्धांत के अनुसार जीते हैं।

परमेश्वर का अनुग्रह एक दान उत्पन्न करता है, अर्थात् एक मनुष्य, जो आदम के आमने-सामने रखा जाता है। अनुग्रह में दिया गया दान एक व्यक्ति है, जिसके द्वारा परमेश्वर का अनुग्रह इस प्रकार उमड़ता है कि सब बाँध टूट जाते हैं और हर मनुष्य तक (चाहे वह इस ग्रह पर कहीं भी हो) पहुँचा जा सकता है। परमेश्वर के पुत्र, अन्तिम आदम, के व्यक्तित्व में अनुग्रह उस सब से अधिक प्रबल है, जो पहले आदम के द्वारा संसार में

आया है। बहुत थे जो मरे, और बहुत हो सकते हैं जो जीवित रहेंगे। परमेश्वर ने अपनी मानवजाति को मृत्यु के हवाले नहीं छोड़ा!

3.5 पद 16: अपराध का परिणाम और अनुग्रह के वरदान का परिणाम

और क्या, जैसा (उस) एक के द्वारा हुआ,

जिसने पाप किया,

वैसा ही दान भी नहीं?

क्योंकि निर्णय एक (भूल) से दंड की आज्ञा के लिए हुआ,

परन्तु अनुग्रह का वरदान बहुत से अपराधों से धार्मिकता के लिए (धर्मी ठहराए जाने के लिए, अर्थात् धर्मी ठहराने के निर्णय के लिए)।

आदम का दूरगामी परिणामवाला निर्णय सब पर दंड की आज्ञा लाता है – यही उसकी विरासत है, जो वह छोड़ गया है। पद 15 से परमेश्वर की बात हो रही है, और इसलिए दंड की आज्ञा की भी। परमेश्वर पापी पर अपना धर्मी न्याय और निर्णय पूरा करता है, और इसका अर्थ केवल दंड की आज्ञा हो सकता है। परन्तु मनुष्य यीशु मसीह में दिया गया अनुग्रह का वरदान पापी को धर्मी ठहराए जाने की ओर ले जाता है, जो दंड की आज्ञा का उलटा है। वह दंड की आज्ञा हमारे स्थान पर स्थानापन्न पर पड़ी। अब अभियोग में केवल आदम का अपराध ही नहीं है, बल्कि बात उसके असंख्य वंशजों के बहुत से अपराधों की भी है। व्यवस्था का समय भी अब इसमें सम्मिलित है।

3.6 पद 17: मसीह के द्वारा मृत्यु का राज्य समाप्त किया जाता है

क्योंकि यदि एक के अपराध के कारण

मृत्यु ने उस एक के द्वारा राज्य किया,

तो कहीं अधिक वे,

जो अनुग्रह की भरपूरी (अधिकता)

और धार्मिकता का दान पाते हैं,

जीवन में (अर्थात् जीवन की सामर्थ्य में) राज्य करेंगे

उस एक के द्वारा, अर्थात् यीशु मसीह के द्वारा।

परमेश्वर का अनुग्रह उमड़नेवाला है, वह एक न मापी जा सकनेवाली भरपूरी में प्रकट होता है। इसके द्वारा आदम के वंशज दान के रूप में परमेश्वर की धार्मिकता पाते हैं। यीशु मसीह, अन्तिम आदम, के द्वारा वे मृत्यु

के राज्य से छीन लिए जाते हैं। अब उन पर मृत्यु राज्य नहीं करती; नहीं, वे स्वयं अपने जी उठे हुए प्रभु के जीवन की सामर्थ्य में राज्य करते हैं, जैसा अगला अध्याय दिखाएगा। यीशु मसीह के द्वारा वे विजयी बनते हैं – अभी से, और शीघ्र ही नई देह में बिना किसी सीमा के, जब वे यीशु के समान होंगे।

यहाँ पद 13 में आरम्भ हुआ बीच का अंश समाप्त होता है, जिसमें पौलुस ने व्यवस्था के न होने के बावजूद पाप के विद्यमान होने के विशेष विषय पर विचार किया है। उसने उन सब तर्कों का खंडन किया है कि शायद कुछ अपवाद हो सकते हों, जिन पर आदम के किए का प्रभाव न पड़ा हो। सब मनुष्य अनिवार्य रूप से आदम से जुड़े हैं और उसके अपराध के परिणामों के अधीन हैं।

हर मनुष्य के लिए यह एक तथ्य है कि आदम के साथ संबंध विद्यमान है। यह उस तथाकथित “भले मनुष्य” पर भी लागू होता है, जो अपने अच्छे कामों के लिए जाना जाता है – यहूदी पर भी और अन्यजाति पर भी। वह स्वयं इससे छूट नहीं सकता। उसे इस तथ्य को स्वीकार करना होगा। पर, जैसा अगले शब्द दिखाते हैं, उसे निराश रहने की आवश्यकता नहीं: परमेश्वर ने एक मार्ग खोल दिया है। परमेश्वर के अनुग्रह से उसे केवल आदम की निर्दोष दशा ही वापस नहीं मिलती, बल्कि मसीह के साथ, अपने नए “परिवार-पिता” के साथ, एक नए संबंध के द्वारा उसे उससे कहीं अधिक मिलता है, जो आदम के पास कभी था।

आदम का कार्यभार सृष्टि पर राज्य करना था। पर अब वह और उसके सब वंशज पाप और मृत्यु के अधीन हो गए। परन्तु जो धार्मिकता का दान पाते हैं, वे जीवन में राज्य करेंगे। इस राज्य का अर्थ है कि वे वैसे जी सकते हैं, जैसा परमेश्वर चाहता है – स्वतंत्रता में और परमेश्वर की महिमा के लिए। “जीवन में राज्य करना” उस जीवन की परिपूर्णता का सार है, जो अब हमारे पास मसीह में है। इस नई स्थिति के साथ हम वे मनुष्य हो सकते हैं, जो अपने उद्देश्य को पूरा करते हैं, अर्थात् परमेश्वर के जन, जो उसके साथ और उसी से जीते हैं। वे अब मृत्यु और पाप के अधीन नहीं, मनुष्य पर उनके सब प्रभावों सहित; वे दासत्व से छुड़ाए गए हैं, ताकि अब वह हों, जिसके लिए परमेश्वर ने उन्हें ठहराया है। पौलुस इसे आगे विस्तार से समझाएगा।

3.7 पद 18: दंड की आज्ञा और जीवन के लिए धर्मी ठहराया जाना

इसलिए अब,

जैसे एक अपराध के द्वारा

सब मनुष्यों के प्रति

दंड की आज्ञा हुई,

वैसे ही एक धार्मिकता के द्वारा भी

सब मनुष्यों के प्रति

जीवन के लिए धर्मी ठहराया जाना हुआ।

एक बार फिर आदम का दुःखद कर्म, सब मनुष्यों पर उसके विस्तार और प्रभाव में, उस एक धर्मी के एक कर्म के विरोध में खड़ा है। दंड की आज्ञा उन सब मनुष्यों पर परमेश्वर का धर्मी निर्णय है, जो हुए हैं और होंगे। पर उतनी ही प्रभावशाली रूप से वह एक धार्मिकता, वह एक धर्मी कर्म खड़ा है। उसमें मसीह की स्वेच्छा से और आज्ञाकारिता में दी गई बलिदानी मृत्यु सम्मिलित है। यह एक अतुलनीय और अद्वितीय कर्म भी ठीक उसी प्रकार बिना किसी अपवाद के सब मनुष्यों पर प्रभाव डालेगा। वह पापी का धर्मी ठहराया जाना अपने साथ लाता है। इसका परिचय पत्रों के पहले भाग में दिया जा चुका है। अब बात और आगे बढ़ती है। अब जीवन के लिए धर्मी ठहराया जाना दृष्टि में आता है। वह जीवन, जो मृत्यु से अधिक प्रबल है, अब सामने आता है। यहाँ बात केवल एक न्याय-प्रक्रिया की नहीं, जहाँ दोष का प्रश्न सुलझाना है, अर्थात् उसकी, जो मैंने किया है। यहाँ बात बल्कि इसकी है कि मनुष्य के रूप में, धर्मी ठहराए गए पापी के रूप में, मेरे पास एक नया जीवन है, जहाँ मुझ में कुछ बदल दिया गया है। मनुष्य के रूप में मैंने परमेश्वर की धार्मिकता पाई है, क्योंकि मेरे पास परमेश्वर से मिला जीवन है, जो उठे हुए का जीवन। अपने पापकर्मों से मैं दोषमुक्त, अर्थात् धर्मी ठहराया गया हूँ। पर मेरा अस्तित्व भी, मसीह में मेरा नया होना भी, परमेश्वर की धार्मिकता की मुहर लिए हुए है। परमेश्वर की दंड की आज्ञा, अर्थात् उसका दोषी ठहराना, मुझ पर उचित ही न केवल उसके लिए पड़ता है जो मैंने किया है, बल्कि उसके लिए भी जो मैं हूँ। पर अब मैं मसीह में हूँ और मेरे पास एक नया जीवन है। यह पाठ उसकी नींव का काम करता है, जिसे पौलुस आगे और विस्तार से समझाएगा।

धर्मी ठहराया जाना अपने साथ जीवन का दान लाता है। धर्मी ठहराया जाना अनन्त जीवन में ले जाता है। जो उठे हुए मसीह के साथ अपने संबंध में मैं एक बिल्कुल नई स्थिति में हूँ, जो अब पूरी तरह एक नए जीवनदाता से, एक नए सिर से निर्धारित होती है: मसीह से। इस दशा में मेरा पूरा अस्तित्व परमेश्वर द्वारा धर्मी ठहराए जाने में सम्मिलित है।

3.8 पद 19: पापियों की कानूनी स्थिति और धर्मियों की उद्धार-स्थिति

क्योंकि जैसे एक मनुष्य के आज्ञा न मानने से

बहुत लोग पापियों की स्थिति में रखे गए,

वैसे ही एक के आज्ञा मानने से भी

बहुत लोग धर्मियों की स्थिति में रखे जाएँगे।

पापी की स्थिति एक दयनीय दशा है, जिसमें वह परमेश्वर के निर्णय के द्वारा आया है: मैंने पाप किया है, क्योंकि मैं आदम का वंशज हूँ; मैं अपने पूरे अस्तित्व में पापी हूँ और मुझे पापी के रूप में ही देखा जाना चाहिए।

मनुष्य यीशु मसीह, जो आदम के विपरीत क्रूस की मृत्यु तक आज्ञाकारी रहा, हमारे लिए जीवन का मार्ग खोल सकता है। उसकी आज्ञाकारिता का फल मुझे यह अवसर देता है कि मैं एक धर्मी की दृढ़ और सुरक्षित स्थिति ग्रहण करूँ।

यह दो मुख्य व्यक्तियों की एक अमूर्त आमने-सामने की तुलना है: आदम और मसीह। यहाँ बात इसकी नहीं कि मैं मसीही के रूप में कैसे जीता हूँ। मैं जानता हूँ कि मैं एक धर्मी की स्थिति में हूँ। अध्याय 5 के आरम्भ में मैं मानो दोषमुक्त होकर न्यायालय से बाहर आता हूँ। अब जीवन आगे बढ़ता है। अब मैं क्या हूँ? पहले बात उसकी थी जो मैंने किया है, अब बात उसकी है जो मैं हूँ।

परमेश्वर ने मुझे एक धर्मी की स्थिति में रखा है और वह इस स्थिति को, जो उसने स्वयं रची है, गम्भीरता से लेता है। वह अपने ही न्याय-निर्णय पर टिका रहता है, वह विश्वासयोग्य है।

पापियों की स्थिति में सब मनुष्य “अपने आप” जन्म लेते हैं। धर्मियों की स्थिति सब के लिए खुली है। परन्तु वह केवल उन्हीं को प्रदान की जाती है, जो विश्वास करते हैं (“बहुतों” को, दुर्भाग्य से सब को नहीं)।

3.9 पद 20: व्यवस्था सब पापों को प्रकट कर देती है

परन्तु व्यवस्था बीच में आ गई,

कि अपराध बहुत हो जाए।

परन्तु जहाँ पाप बहुत हुआ,

वहाँ अनुग्रह उससे भी कहीं अधिक हुआ ...

व्यवस्था कुछ भी सकारात्मक रूप में नहीं बदल सकी। उसने मनुष्य की दशा को सुधारा नहीं, बल्कि और बिगाड़ दिया, क्योंकि व्यवस्था के द्वारा पाप और भी अधिक उमड़ पड़ा। पाप को दबाने और रोकने के बजाय वह और भी अधिक प्रकट हो गया।

मूसा की व्यवस्था (जिसका मूल दस आज्ञाएँ हैं) ने स्पष्ट किया कि पाप कितनी प्रबलता से राज्य करता था। परन्तु परमेश्वर ने व्यवस्था के द्वारा अपनी इच्छा इसलिए प्रकट नहीं की कि उसके द्वारा अन्तिम शब्द कह दे और मनुष्य को उसके उमड़ते पापकर्मों की बाढ़ में नाश हो जाने दे। उसने अपने अनुग्रह से उत्तर दिया, जो असीम है। इस प्रकार दोनों मुख्य व्यक्तियों की तुलना केवल एक आमने-सामने की तुलना नहीं, बल्कि इस बात का प्रमाण है कि परमेश्वर बड़ा है – न केवल सामर्थ्य में, बल्कि अनुग्रह में भी।

व्यवस्था ने उसे प्रकट कर दिया, जो पहले से विद्यमान था। मनुष्य आदम के समय से ही पाप करते आये थे। व्यवस्था के साथ अब पापों का नाम लिया जाता है। व्यवस्था ने स्पष्ट दिखा दिया कि मनुष्य कितने पाप करता है। इस व्यवस्था के साथ भले और बुरे के लिए एक ईश्वरीय, अपरिवर्तनीय और अडिग मापदंड है।

3.10 पद 21: मृत्यु से अनन्त जीवन तक

... कि जैसे पाप ने मृत्यु में राज्य किया

(मृत्यु की शक्ति में),

वैसे ही अनुग्रह भी राज्य करे

धार्मिकता के द्वारा अनन्त जीवन के लिए

यीशु मसीह के द्वारा,

जो हमारा प्रभु है।

जो मसीह में हैं, उनके लिए मृत्यु तक पहुँचनेवाला पाप का राज्य अब अतीत है। उनके लिए अनुग्रह राज्य करता है। परन्तु अनुग्रह का आधार परमेश्वर की धार्मिकता है। यह कोई सस्ता अनुग्रह नहीं, जो बस हर बात को अनदेखा कर दे। नहीं, सब कुछ उचित रीति से होता है। परमेश्वर की धार्मिकता सबसे अच्छी नींव है; पूरी कानूनी निश्चितता है।

यह वचन उसके वर्णन में, जो अब “अन्तिम आदम” (मसीह) में सम्पन्न हुआ है, इतना संक्षिप्त और अर्थपूर्ण है कि इसे पूरी तरह समझ पाना कठिन है।

कहा जा सकता है कि अब अनुग्रह भी वैसे ही राज्य करता है जैसे कभी मृत्यु करती थी – सब बाधाओं पर विजय पाते हुए और अप्रतिरोध्य। हम उसके परिणामों से उतना ही कम बच सकते हैं, जितना पापी मृत्यु से। पर अनुग्रह के इस शासन को हम सहर्ष स्वीकार करना चाहते हैं!

इस संदर्भ में पहली बार अनन्त जीवन की बात की जाती है, और यहाँ उसका अर्थ जीवन के पुनरुत्थान में उसका भावी अधिकार है। अनन्त जीवन मसीह में एक ऐसे भविष्य की प्रतिज्ञा करता है, जिसका कोई अन्त नहीं। रोमियों की पत्नी इस बात का प्रमाण है कि परमेश्वर हमारे लिए कैसे लड़ता है, ताकि हम नाश न हों, बल्कि अनन्त जीवन पाएँ।

3.11 रोमियों 5:12-21 का सिंहावलोकन

पुरानी सृष्टि का प्रतिनिधि और सिर; नई सृष्टि का प्रतिनिधि और सिर; दूसरा मनुष्य

पहला मनुष्य

और अन्तिम आदम

मसीह का
प्रतिरूप

आदम

यीशु मसीह

कर्म

अपराध

धार्मिकता (का कर्म)

यीशु का सिद्ध छुटकारे का कार्य

परिणाम	पाप और मृत्यु	धार्मिकता और जीवन
सब वंशजों पर प्रभाव	दोषी ठहराया जाना और दंड की आज्ञा	अनुग्रह और जीवन के लिए धर्मी ठहराया जाना
परमेश्वर के सामने स्थिति	पापी	धर्मी
सिंहासन पर पुराना और नया दावा	मृत्यु के लिए पाप का राज्य	धार्मिकता के द्वारा अनन्त जीवन के लिए अनुग्रह का राज्य

4. रोमियों 6: पाप की शक्ति से स्वतंत्र

सब मनुष्य, जो जन्म लेते हैं, “स्वभाव से” (इफिसियों 2:3; रोमियों 11:24), चाहे वे इसे मानना चाहें या नहीं, अपने आदि-पिता आदम की वंश-रेखा के हैं। इस रूप में वे अनिवार्य रूप से पाप से संक्रमित हैं। इसका प्रमाण स्पष्ट है: वे मरते हैं, चाहे उन्होंने कोई ठोस आज्ञा न भी तोड़ी हो। परन्तु परमेश्वर का अनुग्रह रोका नहीं जा सकता। उसने एक “नए” आदम को संसार में भेजा है, और वह पहले आदम और सारी मानवजाति की असफलता का परमेश्वर का उत्तर है। “अन्तिम आदम” यीशु मसीह है, परमेश्वर का अपना पुत्र, जो आदम के विपरीत सबसे कठिन परिस्थितियों में अपने पूरे जीवन भर आज्ञाकारी रहा – पाप के लिए बलिदान के रूप में स्वेच्छा से अपने आप को दे देने के चरम तक। धार्मिकता का यह कर्म (5:18) जीवन के वृक्ष का वह द्वार खोलता है, जो आदम के पाप के द्वारा बन्द हो गया था। जीवन का यह वृक्ष अब स्वयं मसीह है – मरे हुए और जी उठे हुए के रूप में। उसमें अब नए मनुष्यों की एक पीढ़ी उत्पन्न होती है, जो परमेश्वर के हस्तक्षेप के द्वारा (1 कुरिन्थियों 1:30) आदम में से निकालकर मसीह में रखे जाते हैं। उद्धार का एक मोड़ आता है, एक पक्ष परिवर्तन, जो आदम के साथ संबंध को काट देता है और मसीह के साथ एक नया संबंध बनाता है। वे मानो आदम के वृक्ष से काटकर अलग किए जाते हैं और अब मसीह के साथ जुड़कर एक हो गए हैं (6:5); वे अब “मसीह यीशु में” हैं (6:11)। वे अन्तिम आदम (1 कुरिन्थियों 15:45) का जीवन पाते हैं और एक नए परिवार के हैं, जिसका सिर, आरम्भ और मूल मनुष्य यीशु मसीह है। वह दूसरा आदम नहीं, बल्कि “अन्तिम” आदम है: अब कोई नई त्रासदी नहीं होगी, कोई नया पतन नहीं, जो कभी इस नई सृष्टि में पाप को ला सके।

4.1 पक्ष परिवर्तन: आदम से मसीह तक

पौलुस अब इस विषय को कैसे आगे बढ़ाता है? रोमियों 5 का दूसरा भाग आगे के तीन अध्यायों के लिए एक प्रकार की पूर्व-तैयारी है। अब बात यह है कि एक वंश-रेखा से दूसरी में यह पार जाना कैसे होता है। मृत्यु से जीवन में यह परिवर्तन कैसे सम्पन्न होता है? इन मनुष्यों के साथ क्या होता है? ऐसे मनुष्यों के जीवन के लिए इसके क्या परिणाम हैं? पाप का क्या होता है? क्या विश्वासी मन फिराव और नए जन्म के द्वारा अब निष्पाप हो जाते हैं? ये और ऐसे ही प्रश्न 6वें अध्याय में पौलुस की व्याख्याओं के पीछे खड़े हैं।

4.2 पद 1-2: क्या अनुग्रह पाप करने की खुली छूट है?

तो हम क्या कहें?

क्या हम पाप करते रहें,

कि अनुग्रह बहुत हो?

कदापि नहीं!

हम, जो पाप के लिए (पाप के प्रति) मर गए,

फिर आगे को उसमें कैसे जीवन बिताएँ?

स्पष्ट है कि विश्वासी (पौलुस यहाँ ऐसे ही लोगों से बात कर रहा है) अब भी पाप में बने रह सकते हैं, और इससे यह प्रश्न पहले ही सुलझ जाता है कि क्या किसी विश्वासी में अब कोई पाप नहीं है। अनुग्रह की वह भरपूरी, जो मसीह के कार्य के आधार पर पाप और उसके परिणामों से सदा बढ़कर रहेगी, जानबूझकर या अनजाने में गलत समझी जा सकती है। कोई सदा की तरह जीता रहता है, मानो वह अब भी आदम-परिवार का हो, यद्यपि वह मसीह में आ चुका है। निःसंदेह यह बिना किसी प्रश्न के एक गलत निष्कर्ष और एक विरोधाभास है, जिसका पौलुस दृढ़ता से विरोध करता है। फिर भी ऐसे विचार रहे प्रतीत होते हैं (संभवतः ये पौलुस के सुसमाचार के विरुद्ध यहूदीवादी तर्क थे), और दुर्भाग्य से कुछ मसीही आज भी इसी सिद्धांत के अनुसार जीते हैं। पौलुस कहता है कि इस निष्कर्ष से हमारा कोई लेना-देना नहीं। इसका एक अनिवार्य कारण है:

4.2.1 हम पाप और उसकी शक्ति के लिए मर चुके हैं!

विश्वासी को ऐसा जीवन नहीं बिताना चाहिए, जिस पर पाप का राज्य हो। इसका कारण क्या है? वह पाप के प्रति मर चुका है, और तर्क के अनुसार इसका परिणाम यह होना चाहिए कि पाप अब उसके जीवन पर राज्य नहीं कर सकता। एक मरा हुआ किसी बात पर प्रतिक्रिया नहीं करता।

ध्यान से पढ़ना चाहिए: पाप नहीं मरा, बल्कि **हम** मरे हैं। पर अब मैं पाता हूँ कि मैं तो अब भी पूरी तरह जीवित हूँ। इस मृत्यु को कैसे समझाया जाए?

इसकी व्याख्या हम इस पद से अभी नहीं निकाल सकते, वह अगले पदों में आती है। यहाँ भूमिका के रूप में सबसे पहले बात इस तथ्य की ही है: जहाँ तक पाप का संबंध है, हम मर चुके हैं।

निःसंदेह हम पहले से जानते हैं कि यह मृत्यु यीशु मसीह की मृत्यु है, पर आइए, पौलुस के साथ चलें कि वह इस विचार को कैसे क्रम-ब-क्रम विकसित करता है। यहाँ यह संकेत पहले से ही महत्वपूर्ण है: वह मृत्यु, जो हम मरे हैं, हमारे अस्तित्व को समाप्त नहीं करती – न आत्मा या प्राण के अस्तित्व को, न देह के अस्तित्व को। यह एक “विशेष” मृत्यु है, जो केवल पाप से संबंधित है। पाप के संबंध में, पाप से जुड़ाव या रिश्ते में, हम मर चुके हैं। बात यीशु की मृत्यु की है, जिसने पाप पर परमेश्वर का मृत्यु-दंड अपने ऊपर ले लिया। वह पाप के लिए मरा (पद 10), क्योंकि उसने अपने आप को बलिदान के लिए प्रस्तुत किया और हमारे लिए पाप बनाया गया।

4.3 पद 3-4: मसीह और उसकी मृत्यु में बपतिस्मा पाया

या क्या तुम नहीं जानते,
कि हम सब, जितनों ने मसीह यीशु का बपतिस्मा लिया,
उसकी मृत्यु का बपतिस्मा लिया?
इसलिए हम उसके साथ गाड़े गए
मृत्यु के बपतिस्म के द्वारा,
ताकि,
जैसे मसीह मरे हुआँ में से जिलाया गया
पिता की महिमा के द्वारा,
वैसे ही हम भी जीवन की नवीनता में चलें।

रोमी विश्वासी शायद अपने आप से पूछते थे कि “मर चुके होने” की इस बात को कैसे समझें। इसलिए पौलुस उन्हें उनके बपतिस्मे की याद दिलाता है। उन्होंने मसीह यीशु का बपतिस्मा लिया था। इस कार्य के द्वारा उन्होंने (रोमियों 5:12-21 के सूत्र को आगे बढ़ाते हुए कहें तो) सार्वजनिक अंगीकार के रूप में आदम से मसीह की ओर पक्ष परिवर्तन किया था। किसी नदी या झील में बपतिस्मा लेकर उन्होंने उन सब को, जिन्होंने यह देखा, बता दिया कि अब उनका एक नया प्रभु है। यद्यपि यहाँ पानी की बात नहीं की गई, यहाँ बात जल के बपतिस्मे की ही है। बपतिस्मे का स्वयं “मर चुके होने” की भीतरी वास्तविकता से कोई संबंध नहीं। एक बाहरी कार्य के रूप में बपतिस्मा मेरी मृत्यु उत्पन्न नहीं करता, न ही वह मेरा नया जन्म उत्पन्न करता है। वह मानो उस वास्तविकता का बाहरी पहलू है, जो विश्वास और नए जन्म के द्वारा अस्तित्व में आई है।¹² बपतिस्मा इस बात का चित्र है कि मेरे साथ आत्मिक रूप से, और इसलिए वास्तव में, क्या हुआ, जब मैं मसीह के साथ जोड़ा गया।

12. यह पवित्र आत्मा का बपतिस्मा नहीं है। वह मसीह के द्वारा होता है। वही बपतिस्मा देनेवाला है, जो विश्वास करनेवालों को पवित्र आत्मा देता है और इसके द्वारा उन्हें एक देह, अर्थात् कलीसिया, में जोड़ता, अर्थात् सम्मिलित करता है (1 कुरिन्थियों 12:13)। जल का बपतिस्मा मनुष्यों के द्वारा होता है: मसीही, जिन्हें चेले कहा जाता है, बपतिस्मा देते हैं और इस प्रकार यीशु के मिशन-आदेश को पूरा करते हैं। आत्मा का बपतिस्मा मृत्यु की ओर भी नहीं होता, बल्कि वह जीवन का चिह्न अधिक है। जल का बपतिस्मा एक सार्वजनिक गवाही है, एक बाहरी कार्य; आत्मा का बपतिस्मा एक अदृश्य, भीतरी घटना है, जो पवित्र आत्मा के प्राप्त होने के साथ एक ही बार सम्पन्न होती है और नए नियम के अर्थ में केवल कलीसिया से संबंधित होने से जुड़ी है।

4.3.1 मृत्यु का बपतिस्मा

हमने केवल मसीह यीशु के नाम का ही बपतिस्मा नहीं लिया, बल्कि उसकी मृत्यु का भी। बपतिस्मा मसीह की मृत्यु का, या उसकी ओर, एक अंगीकार है। बपतिस्मा लेनेवाले का मसीह की ओर फिरना तो ठीक इसी तथ्य के कारण हुआ कि मसीह उसके स्थान पर मरा है। यद्यपि हम यीशु के सिद्ध जीवन की प्रशंसा करते हैं और उसके समान कुछ भी नहीं, फिर भी उसकी मृत्यु ही हमें बचाती है, उसका पवित्र जीवन नहीं।

अतः जल के बपतिस्मे में हम यीशु मसीह का और उसकी मृत्यु का अंगीकार करते हैं। वैसे, दोनों ही बातें संसार के लिए मूर्खता हैं।

बपतिस्मे का “संदर्भ-बिन्दु” यीशु मसीह का व्यक्तित्व और उसकी मृत्यु है। बपतिस्मे का संदर्भ-बिन्दु बताता है कि बपतिस्मे के द्वारा कोई किस व्यक्ति के प्रति अपने आप को बाँधता है (उदाहरण के लिए मूसा का बपतिस्मा लिया; 1 कुरिन्थियों 10:2)। जिस व्यक्ति का बपतिस्मा लिया जाता है, बपतिस्मे के बाद से उसी के पीछे चला जाता है।

बपतिस्मे का प्रतीकवाद स्पष्ट है: बपतिस्मे के कार्य में जो चित्र के रूप में दिखाया जाता है, वह मार डालने की प्रक्रिया नहीं है। बपतिस्मा “डुबोकर मार डालना” नहीं है। बपतिस्मा बिल्कुल सरल रूप में एक प्रतीकात्मक गाड़ा जाना है – मानो जल की एक क़ब्र में। इसका अर्थ है कि एक मरे हुए को बपतिस्मा दिया (डुबकी दी) जाता है। हमारा पुराना मनुष्य (मसीह के) साथ क्रूस पर चढ़ाया गया (अर्थात् मार डाला गया) है। अतः जब मैं बपतिस्मे में मसीह की मृत्यु को परमेश्वर के मृत्यु-दंड से अपने व्यक्तिगत उद्धार के रूप में अंगीकार करता हूँ, तो इसमें मेरी यह सार्वजनिक स्वीकृति सम्मिलित है कि मैं परमेश्वर के मृत्यु-दंड के योग्य था। बपतिस्मे के द्वारा मैं अंगीकार करता हूँ कि यीशु की स्थानापन्न मृत्यु में मुझ पर मृत्यु-दंड पूरा किया गया। वह पुराना मनुष्य, जो मैं अपने मन फिराव और नए जन्म तक था, बपतिस्मे में प्रतीकात्मक रूप से क़ब्र तक ले जाया और गाड़ा जाता है। इसके द्वारा मैं अंगीकार करता हूँ कि मसीह के बिना मेरा जीवन केवल मृत्यु के योग्य था और साथ ही सदा के लिए समाप्त हो गया है। आदम की वंश-रेखा और वंश-वृक्ष में यह जीवन अब समाप्त हो चुका है।

घास के मैदान की आग का चित्र इस विचार को स्पष्ट करता है: ऐसी व्यापक आग से अपने आप को बचाने के लिए मैं केवल वहीं भाग सकता हूँ, जहाँ आग पहले ही भड़क चुकी है। इसी प्रकार अंगीकार करनेवाले के रूप में मैं बपतिस्मे के द्वारा उस स्थान पर आता हूँ, जहाँ न्याय पहले ही हो चुका है, अर्थात् मृत्यु में।

एक बार फिर कहा जाता है कि यह गाड़ा जाना मृत्यु की ओर हुआ। इसमें क्या सम्मिलित है, यह पौलुस तुरन्त समझाता है, जब वह विश्वास की वास्तविकता का वर्णन करता है। बपतिस्मे से पहले ही विश्वास के

द्वारा उस व्यक्ति के लिए एक नई स्थिति बन जाती है – उस समय भी, जब उसका अभी बपतिस्मा नहीं हुआ है। बपतिस्मे को उस बात की गवाही देनी है, जो पहले से भीतरी वास्तविकता है और जो 2000 वर्ष पहले ही हो चुकी है।

परन्तु बपतिस्मा केवल एक आत्मिक तथ्य का प्रतीक ही नहीं है। एक अंगीकार के रूप में वह बाहरी रूप से आदम की वंश-रेखा से मेरा संबंध-विच्छेद (और इस प्रकार संसार से मेरा अलगाव) सम्पन्न करता है। एक बपतिस्मा लेनेवाला मानो बपतिस्मे के कार्य के द्वारा संसार से अलग हो जाता है। इससे कोई भीतरी वास्तविकता उत्पन्न नहीं होती, क्योंकि यह तो केवल एक औपचारिक बाहरी कार्य है। बपतिस्मा स्वर्ग के लिए उद्धार नहीं देता, पर वह संसार से अवश्य “बचाता” है। बपतिस्मे के द्वारा संसार से एक मौलिक बाहरी अलगाव होता है, जो विश्वासी बपतिस्मा लेनेवाले की विश्वास की भीतरी वास्तविकता के अनुरूप है। पतरस का यही अर्थ है, जब वह कहता है कि हम बपतिस्मे के द्वारा बचाए जाते हैं (प्रेरितों के काम 2:40; 1 पतरस 3:21)।

इस बात पर ज़ोर देना कि बपतिस्मे में एक आत्मिक वास्तविकता का अंगीकार सम्मिलित है, बपतिस्मे की उस गलत कलीसियाई समझ के कारण आवश्यक है, जो उसे एक “संस्कार” बना देती है और इस प्रकार यह आभास देती है कि वह उद्धार के लिए आवश्यक है। परन्तु पौलुस इस समस्या को नहीं जानता था, जो मसीही जगत ने बपतिस्मे से बना दी। ऐसा आभास होता है मानो उसके यहाँ दोनों पहलू (अंगीकार का बाहरी पहलू और सच्चे विश्वास का भीतरी पहलू) एक दूसरे में गुँथे हुए हों, क्योंकि वे कुछ ऐसा दर्शाते हैं जो एक दूसरे को सहारा देता है, और यहाँ तक कि एक दूसरे पर निर्भर है। पौलुस शायद ही भीतरी और बाहरी पहलुओं के उस अलगाव को समझता, जिस पर हम उचित ही ज़ोर देते हैं। उसके लिए न तो बिना बपतिस्मा पाए मसीही थे (अर्थात् परमेश्वर की ऐसी सन्तान नहीं, जिन्हें नया जन्म प्रदान किया गया हो पर जिनका बपतिस्मा न हुआ हो), न बपतिस्मा पाए हुए ग़ैर-मसीही।

कोई भी बपतिस्मा न लेता, यदि मृत्यु का अंगीकार ही सब कुछ होता और मृत्यु के पास अन्तिम शब्द होता। यद्यपि बपतिस्मा एक “गाड़ा जाना” है, फिर भी साथ ही वह आशा का चिह्न है, नए जीवन का प्रमाण है। एक ओर वह पापी के रूप में मुझ पर परमेश्वर के मृत्यु-दंड की स्वीकृति है, पर वह जी उठे हुए के द्वारा नए जीवन में उठाए गए क़दम को भी प्रमाणित करता है:

4.4 पद 4: जीवन की नवीनता के लिए जिलाए गए

... जैसे मसीह मरे हुआँ में से जिलाया गया

पिता की महिमा के द्वारा,

वैसे ही हम भी जीवन की नवीनता में चलें।

बपतिस्मा पहले मृत्यु की, पर फिर जीवन की भी बात करता है। मसीह के साथ हमारे “मर चुके होने” के बाद उसके जिलाए जाने में भी हमारा उसके साथ एक होना आता है। मसीह के साथ हमारा संबंध इस बात में व्यक्त होता है कि हम उसके पूरे कार्य में – उसके क्रूस पर चढ़ाए जाने, उसके गाड़े जाने और उसके जिलाए जाने में, और यहाँ तक कि उसके स्वर्गारोहण और सिंहासनारूढ़ होने में भी (इफिसियों 2:1-10) – उसके साथ एक किए गए (रोमियों 6:5 में “एक साथ जुड़ गए” [तुलना करें ER]) हैं, चाहे अन्तिम बात यहाँ विषय न हो (देखें इफिसियों 2)।

पिता की महिमा को (यह अभिव्यक्ति केवल यहीं आती है) मृत्यु में इस आज्ञाकारी समर्पण का उत्तर देना ही था – उस मृत्यु का, जो मसीह दूसरों के लिए मरा, अपने लिए नहीं। निःसंदेह पिता की महिमामय महानता और उसकी सामर्थ्य भी थी, जिसने उसे जिलाया। पर यह अनुवाद अधिक सटीक है। बात पिता की महिमा की थी। इस अद्वितीय पूर्ण समर्पण के सामने वह मानो “विवश” थी कि अपने प्रिय पुत्र को जिलाए। उद्धार के इतिहास में, और सबसे बढ़कर स्वयं उद्धार में, बात सदा परमेश्वर की महिमा की होती है। उसे सुरक्षित और अछूता रहना चाहिए। केवल तभी एक अनन्त और सुनिश्चित उद्धार हो सकता है।

हम परमेश्वर की महिमा तक नहीं पहुँचते (रोमियों 3:23); स्वाभाविक मनुष्यों के रूप में हम किसी भी रीति से इस ईश्वरीय महिमा के अनुरूप नहीं हो सकते, न कभी उससे मेल खा सकते हैं। परन्तु मसीह ने ऐसा किया। उसने पिता की इच्छा पूरी करके, उसकी प्रतिष्ठा चाहकर और अन्त में वह कार्य करके, जिसे पूरा करने का भार पिता ने उसे सौंपा था, पिता की महिमा की। यह पिता की महिमा ही थी, जिसने उसे जिलाया, क्योंकि वह चुप नहीं रह सकती थी, जब मृत्यु उस पर प्रभुता करती थी (6:9) और वह अद्वितीय, उसके प्रेम का पुत्र, क्रम में था।

अब जब हम उसके साथ इस प्रकार एक किए गए हैं, तो हम उसके जिलाए जाने में भी सहभागी हैं। यह बात यहाँ (चाहे शब्दशः नहीं, फिर भी अप्रत्यक्ष रूप से) कही गई है। पुराने मनुष्य का पुराना जीवन समाप्त किया जाता है। अब हम उसके पुनरुत्थान की सामर्थ्य में एक नया जीवन पा सकते हैं और रोज़मर्रा के जीवन में उसी के अनुसार कार्य कर सकते हैं। “जीवन की नवीनता” का अर्थ है पहले के जीवन के विपरीत एक बिल्कुल दूसरा जीवन। हम पहले से अलग जीवन बिता सकते हैं, क्योंकि हमें एक नया जीवन प्रदान किया गया है। वह उस जीवन से भिन्न है, जो आदम-परिवार से संबंधित होते हुए हमारे पास था। यही वह बात है, जो पौलुस ने पहले कही (“जीवन में राज्य करना”; 5:17)। अन्तिम आदम के नए जीवन ने हमें मृत्यु और पाप से ऊपर उठा दिया है, उसने हमें सेवा करने के लिए स्वतंत्र किया है। परमेश्वर की सेवा उन लोगों के रूप में, जो “अपने आप को उसे सौंपते हैं” (तुलना करें 6:13), जीवन में राज्य करना है।

4.5 पद 5: उसकी मृत्यु और उसके पुनरुत्थान में उसके साथ एक किए गए

क्योंकि यदि हम उसकी मृत्यु की समानता में उसके साथ एक किए गए (जुड़कर एक हो गए) हैं,

तो निश्चय उसके पुनरुत्थान की (समानता में) भी होंगे ...

एक नए, परमेश्वर को भानेवाले जीवन का मार्ग केवल उस मृत्यु से होकर जाता है, जो पुराने जीवन को समाप्त करती है। यह केवल परमेश्वर स्वयं ही कर सकता है। हम इसे समाप्त नहीं करते। बल्कि यह परमेश्वर का कार्य है और केवल उसी का कर्म है। केवल वही, जो मर चुका और गाड़ा जा चुका है, जीवन की नवीनता के लिए जी उठ सकता है। यह भी परमेश्वर का कर्म है, जो मसीह पर विश्वास के द्वारा मेरे नाम गिना जाता है।

पौलुस पुष्टि करता है कि मसीह के साथ हमारे संबंध का अर्थ केवल हमारी मृत्यु ही नहीं, बल्कि हमारा पुनरुत्थान भी है। एक ओर पुराने मनुष्य का इतिहास परमेश्वर की इच्छा और उसके पवित्र और धर्मी अस्तित्व के अनुसार समाप्त किया जाता है, अर्थात् न्याय में उसकी पवित्रता की धर्मी माँग पूरी की जाती हैं। केवल यही, और कुछ नहीं, एक नई शुरुआत के लिए परमेश्वर के अनुरूप आधार है। मसीह के साथ संबंध बहुत घनिष्ठ है – हाँ, ऐसा मानो हम जुड़कर एक हो गए हों। यहाँ ऐसी किसी प्रक्रिया का अर्थ नहीं, जो हमें क्रम-ब-क्रम मसीह के साथ और घनिष्ठता से जोड़ती है, बल्कि एक ही बार की और पूरी हो चुकी घटना का। बात आत्मिक वृद्धि की नहीं, जिस पर मेरा प्रभाव है, बल्कि एक “अन्तिम कार्य” की है, जिसकी गारंटी परमेश्वर देता है। यह मेरे बाहर और मेरे लिए (मुझ में नहीं) 2000 वर्ष पहले गुलगुता पर यीशु की ऐतिहासिक¹³ मृत्यु में हुआ।

उसका पुनरुत्थान हमारा पुनरुत्थान है। पौलुस इस पुनरुत्थान को हमारे भावी पुनरुत्थान के रूप में नहीं समझता।¹⁴ हम आत्मिक रीति से मरे हैं – शाब्दिक, अर्थात् दैहिक अर्थ में नहीं। तब पुनरुत्थान का अर्थ भी हमारे आत्मिक नए जीवन से संबंधित है, जो हमने जी उठे हुए में पाया है। पौलुस कहता है: “तो हम (निश्चय ही, अर्थात् पूरी निश्चितता से) उसके पुनरुत्थान में भी होंगे।”¹⁵ यह पूरी तरह उससे मेल खाता है, जो पौलुस कुलुसियों से कहता है: “... बपतिस्मे में उसके साथ गाड़े गए, और उसी में परमेश्वर की प्रभावशाली सामर्थ्य पर विश्वास के द्वारा उसके साथ जिलाए भी गए” (कुलुसियों 2:12; ER, जर्मन बाइबल अनुवाद)।

जीवन की नवीनता (पद 4) मसीह के साथ जिलाए जाने के अतिरिक्त और कुछ नहीं। हम मरे हुआओं में से जीवित हैं (तुलना करें इसके थोड़ी ही देर बाद आनेवाली अभिव्यक्ति, पद 13 में)।

13. “ऐतिहासिक” का अर्थ यहाँ यीशु की वास्तविक, इतिहास में प्रमाणित क्रूस की मृत्यु है।

14. कुछ व्याख्याकारों का मत है कि इस अध्याय में जिलाया जाना, अर्थात् पुनरुत्थान, सदा देह से संबंधित है। वे उचित ही इस बात पर जोर देते हैं कि पुराना मनुष्य गाड़ा जाता है और वह फिर नहीं जी उठता। परन्तु बपतिस्मा मुझे एक मरे हुए, पर जी उठे हुए मसीह से भी जोड़ता है। यह बपतिस्मा जानबूझकर जल में दिया जाता है। यह बात कि बपतिस्मा लेनेवाला डुबकी के बाद फिर से जल से बाहर आता है, गवाही के रूप में स्पष्ट करती है: वह जी उठे हुए की अगुवाई में एक नए जीवन में प्रवेश करता है।

15. वास्तव में सब विश्वासियों को दैहिक मृत्यु से होकर नहीं जाना पड़ता, क्योंकि कुछ मरने से पहले ही बदल दिए जाएँगे और उठा लिए जाएँगे। वे भी उस पुनरुत्थान में (आत्मिक अर्थ में जीवन को बदल देनेवाले पुनरुत्थान में), जिसका यहाँ वर्णन है, पहले से सहभागी होंगे।

4.6 पद 6: पुराना मनुष्य उसके साथ क्रूस पर चढ़ाया गया

... क्योंकि हम यह जानते हैं,

कि हमारा पुराना मनुष्य उसके साथ क्रूस पर चढ़ाया गया,

ताकि पाप की देह व्यर्थ (निष्प्रभावी) हो जाए,

कि हम आगे को पाप की (दासों के रूप में) सेवा न करें।

इस वाक्य में पौलुस अब बात के मूल पर पहुँचता है। यह उसकी व्याख्या है, जो उसने अध्याय के आरम्भ में कहा था: “हम पाप के लिए मर चुके हैं।”

हमारे पुराने मनुष्य का क्रूस पर मसीह में परमेश्वर के द्वारा न्याय किया गया, परमेश्वर का धर्मी मृत्यु-दंड पूरा किया गया। उसने, हमारे प्रभु ने, परमेश्वर के इस न्याय को हमारे स्थान पर अपने ऊपर ले लिया। परमेश्वर ने क्रूस पर पुराने मनुष्य पर मुकदमा चलाया। पुराना मनुष्य केवल बुढ़ापे की निर्बलता से नहीं मरा; बात एक कानूनी मुकदमे की है – उसके विरुद्ध, जो पुराना मनुष्य है और जो उसने किया है। इस मुकदमे का परिणाम मृत्यु-दंड का बिना किसी समझौते के क्रियान्वयन था।

हमारे मसीही जीवन की कुंजी, और साथ ही उसकी कठिनाई, यह है कि यहाँ बात किसी ऐसी चीज़ की है, जिसे हम “जानते” या “पहचानते” हैं। यहाँ मेरे बाहर, मेरे स्थान पर, कुछ हुआ। इस न्याय में मेरा प्रतिनिधि था, मसीह, जो मेरे आगे खड़ा हो गया, ताकि दंड मुझ पर नहीं, बल्कि उस पर पड़े। वहाँ जो हुआ, वह ऐसी बात है जिसे मैं महसूस या अनुभव नहीं कर सकता। मेरे लिए यीशु का यह कार्य 100 % मान्य है – मेरी भावनाओं और अनुभूतियों की परवाह किए बिना।

गुलगुता पर हुई घटना का लक्ष्य यह है कि पाप की उस शक्ति को, जो मनुष्य पर प्रभुता करती है, तोड़ दिया जाए – और वह भी हर एक विश्वासी के जीवन में।

4.6.1 पुराना मनुष्य

मसीहियों के बीच इस शब्द का प्रयोग अलग-अलग रूपों में होता है, उदाहरण के लिए मसीही में अब भी जीवित पुराने स्वभाव के रूप में। रोमियों 6 के संदर्भ में इसका अर्थ केवल यही हो सकता है कि यह वह मनुष्य, या मनुष्य का वह प्रकार है, जो आदम का है। पुराना मनुष्य (यूनानी *palaios anthropos*) अपने मन फिराव से पहले का, अपने नए जन्म से पहले का मनुष्य है। पुराने मनुष्य को “शरीर” (यूनानी *sarx*) या पुराने स्वभाव या पाप के बराबर नहीं ठहराया जा सकता। यह वह मनुष्य है, जो आदम की वंश-रेखा में खड़ा है, अर्थात् आदम-परिवार का है और पाप से निर्धारित होता है। इस रूप में वह खोया हुआ है। और इस पापी मनुष्य का क्रूस पर अन्त हो गया। इसलिए यह बात महत्वपूर्ण है: हम पुराने मनुष्य को अब

अपने ऊपर नहीं ढोते। पर शरीर, हमारा पुराना स्वभाव, अब भी हम में है, जब तक हम अपनी देह के पार्थिव अस्तित्व में जीते हैं।

“हमारा पुराना मनुष्य” अभिव्यक्ति इस बात को हर उस व्यक्ति के लिए, जिससे इसका संबंध है, बहुत व्यक्तिगत बना देती है। वह मेरा पुराना जीवन है, जिसने मन फिराव से पहले एक ज़िम्मेदार मनुष्य के रूप में मुझे ढाला और जिसे मैंने उसी के अनुसार जिया।

“पुराने मनुष्य” का उल्लेख दो और स्थानों पर होता है, और वह भी केवल पौलुस के द्वारा। यह एक ऐसा शब्द है, जिसे शायद उसने स्वयं गढ़ा है। यह न पुराने नियम में था, न यूनानियों के विचार-जगत में। इस रूप में और इस अर्थ में यह केवल नए नियम में आता है। इन स्थानों में (इफिसियों 4:20-24; कुलुस्सियों 3:9-10) कहा गया है कि हमने पुराने मनुष्य को (एक वस्त्र की तरह) उतार दिया है। तीनों स्थान एक ऐसे पूरे हो चुके कार्य का वर्णन करते हैं, जो एक बार हुआ है।

फिर भी ये पद इस बात पर भी ज़ोर देते हैं कि हमें पुराने मनुष्य की पुरानी जीवन-शैली को व्यावहारिक रूप से भी उतार फेंकना चाहिए। पुराने मनुष्य को एक ही बार उतार देने के बाद “नए मनुष्य” का निरन्तर नवीनीकरण होता है, जो मानो “पुराने मनुष्य” को अधिक से अधिक हटाता जाता है।

इस पुराने मनुष्य का अस्तित्व उस मनुष्य का वर्णन करता है, जिस पर पाप शासन करता है। उसने अपने मन, अपनी इच्छा और अपने प्राण को (सीधे-सीधे उस सब को, जो इस मनुष्य को बनाता है) पाप की छाप लेने दी है। यह आवश्यक नहीं कि यह खुले पापकर्मों के द्वारा प्रकट हुआ हो; बल्कि यह बस एक स्वयं-निर्धारित, परमेश्वर से अलग जीवन में दिखाई देता था, जिस पर एक धार्मिक रंग भी चढ़ा हो सकता था।

रोमियों 6 में पौलुस इफिसियों और कुलुस्सियों की पत्रियों के विपरीत स्पष्ट रूप से उस “नए मनुष्य” की बात नहीं करता, जो पुराने के स्थान पर आ गया है। फिर भी उसका अर्थ वही है, जब वह उस “जीवन की नवीनता” की बात करता है, जो अब हमें ढालती है।

दूसरे शब्दों में पौलुस यही बात इस प्रकार कहता है: “मैं मसीह के साथ क्रूस पर चढ़ाया गया हूँ, और अब मैं जीवित न रहा, परन्तु मसीह मुझ में जीवित है” (गलातियों 2:19-20)। यहाँ पुराने मनुष्य को उस “मैं” के बराबर ठहराया गया है, जो पौलुस के व्यक्तित्व के लिए खड़ा है। यह उसका “पुराना मैं” है, मन फिराव से पहले का उसका पुराना जीवन, उसका पुराना मनुष्य, जिसका स्थान अब एक नए मैं ने, अर्थात् स्वयं मसीह ने, ले लिया है।

4.6.2 पुराने मनुष्य का क्रूस पर चढ़ाया जाना

हमारे पुराने जीवन में वह सब सम्मिलित था, जो हमने किया और जो हम थे (और जो परमेश्वर के बिना हर मनुष्य है)। उसे केवल मृत्यु के द्वारा ही समाप्त किया जा सकता था। यह हमारे स्थान पर और हमारे बाहर 2000 वर्ष पहले गुलगुता पर यीशु की ऐतिहासिक रूप से प्रमाणित मृत्यु में हुआ। यीशु मसीह ने

इसके लिए स्वेच्छा से अपने आप को प्रस्तुत किया। न्याय उस पर पड़ा। विलियम केली (William Kelly) सटीक रूप से वर्णन करते हैं कि क्या हुआ: “उसने, जिसने व्यवस्था को पूरा किया था और जो प्रतिज्ञा का वारिस था, मुकुट के बदले शाप को चुना, परमेश्वर के राज्य के बदले परमेश्वर के न्याय को अपने ऊपर लिया। तब सब कामों में से सबसे अद्भुत काम सम्पन्न हुआ: वह सब, जो परमेश्वर पाप के विरुद्ध अनुभव करता था और व्यक्त कर सकता था, उसके सिर पर उंडेल दिया गया, जो पाप को जानता ही न था। वह सब, जो परमेश्वर बुराई के विरुद्ध पवित्र क्रोध में कर सकता था, उस पर आ पड़ा, जिसने कभी कोई बुराई नहीं की थी और जिसके मुँह में कोई छल नहीं पाया गया। वह, जो उसका अपना पुत्र था, उसके सिद्ध आनन्द का विषय, उसकी पूर्ण और अनन्त कृपा का पात्र, निर्दय न्याय के हवाले कर दिया गया। परमेश्वर ने स्वयं उसके साथ ऐसा व्यवहार किया, जैसा उसने पहले कभी किसी के साथ नहीं किया था, और न कभी फिर किसी और के साथ करेगा।”¹⁶

4.6.3 पाप की देह

मेरे पुराने मनुष्य के क्रूस पर चढ़ाए जाने का परिणाम यह है कि पाप की देह व्यर्थ (या अधिक अच्छा: **निष्प्रभावी**) हो गई है। “पाप की देह” से क्या अर्थ है? क्या इससे केवल “पुराना मनुष्य” अभिव्यक्ति का कोई और नाम या पहलू अभिप्रेत है, या पापी “शरीर” की बात की गई है?

पाप की देह हमारी भौतिक देह है, जैसे उसने अपने अंगों के साथ अपने आप को अधर्म के हथियार के रूप में प्रयोग होने दिया है। पुराना मनुष्य देह के द्वारा व्यक्त और प्रकट हुआ है। देह ने अपनी प्रवृत्तियों और अभिलाषाओं के द्वारा अपने आप को पुराने जीवन के केन्द्र में रख दिया है। देह ने पापमय आदतें विकसित कीं, उन्हें लागू किया और उन्हें जीवन का नियम बना दिया। पौलुस दूसरी जगह “मानवीय अस्तित्व के तत्वों” का उल्लेख करता है, जिसमें वह आत्मा को आगे और देह को पीछे रखता है। यह क्रम उलट दिया गया। देह निर्धारक तत्व के रूप में पहले स्थान पर आ गई, उसके बाद ही प्राण, और अन्त में आत्मा, जिसे वास्तव में मनुष्य होने की पहचान बनाना और उसे निर्धारित करना चाहिए था (1 थिस्सलुनीकियों 5:23)।

निःसंदेह देह अपने आप में पापमय नहीं है, पर वह पाप के अधीन थी और पाप के लिए एक तत्पर मंच थी। देह ने एक पापमय अपना जीवन विकसित कर लिया। वह बिल्कुल भी तटस्थ नहीं है। जब पौलुस कहता है कि वह अपनी देह को मारता-कूटता और उसे वश में लाता है (1 कुरिन्थियों 9:27), तो पुराने मनुष्य के साथ इसका उलटा होता है। देह अपनी अभिलाषाओं के द्वारा मनुष्य को दासत्व में ले जाती है। इस प्रकार देह पाप की हो जाती है, वह **पाप की देह** बन गई है। ठीक यही कारण है कि अब हमें अपने अंगों को परमेश्वर को सौंपना चाहिए (रोमियों 6:13, 19)। हाँ, हमसे यहाँ तक कहा जाता है कि हम देह को जीवित बलिदान के रूप में अर्पित करें (रोमियों 12:1)।

16. विलियम केली (William Kelly), *Die Lehre des NT über den Heiligen Geist*, पृ. 191।

देह को क्रूस पर नहीं चढ़ाया गया। बल्कि पुराने मनुष्य को क्रूस पर चढ़ाया गया, ताकि देह अब से पाप का हथियार न रहे। यह देह अब (इस तथ्य के संबंध में कि उसे पाप करना ही है) निष्प्रभावी है – एक लकवाग्रस्त व्यक्ति की तरह, जो अब स्वतंत्र रूप से हिल-डुल नहीं सकता। इस प्रकार गुलगुता पर पाप के स्वतंत्र फैलाव पर एक ईश्वरीय पूर्णविराम लगा दिया गया है; पाप को हमारी मरनहार देह में (पाप और मृत्यु की देह में; 7:24; 8:10) अब राज्य नहीं करना चाहिए (6:12)। इस अर्थ में भौतिक देह अब पाप के लिए हथियार नहीं रही, क्योंकि अब से वह परमेश्वर और धार्मिकता के लिए उपलब्ध है। रोमियों 6 के दूसरे भाग में इसे पाप से मुक्ति के परिणाम के रूप में ठोस रूप से और समझाया गया है। पाप के संबंध में देह का काम समाप्त हो चुका है। यह कैसे होता है, इसका वर्णन पौलुस आगे करता है। हमें – मेरे हुआं में से जीवित लोगों के रूप में – अब देह के एक-एक अंग को परमेश्वर के लिए उपलब्ध कराना है (6:11-13, 19)। और जहाँ तक पाप का संबंध है, हमें अपने आप को उसके लिए मरा हुआ समझना है और इसी आधार पर देह की क्रियाओं को मारना है (8:13), जो आगे चलकर हमारा विषय होगा।

4.7 पद 7: पाप से दोषमुक्त ठहराया गया

क्योंकि जो मर गया,

वह दोषमुक्त ठहराया गया है (धर्मी ठहराया गया, अर्थात् छोड़ दिया गया)

पाप से।

– कानूनी या न्यायिक दृष्टि से – मेरे और पाप के बीच अब कोई संबंध नहीं रहा। उसे अब दोष के अर्थ में मेरे ऊपर नहीं डाला जा सकता, पाप के कारण अब मुझ पर अभियोग नहीं लगाया जा सकता। चाहे वह अब भी मुझ में हो, फिर भी वह एक “अलग किया हुआ बाहरी तत्व” है, जिसका मुझसे और मेरे उस नए अस्तित्व से, जिसमें मैं सदा के लिए मसीह से जुड़ा हूँ, कोई लेना-देना नहीं। हमारे लिए उसकी मृत्यु का और उसके साथ हमारी मृत्यु का प्रभाव इतना मौलिक है। प्रतीकात्मक रूप से इसकी घोषणा बपतिस्मे के द्वारा की जाती है; अब हम “जल की क़ब्र” के दूसरी ओर हैं।

इस कथन को पहले, यदि केवल नहीं तो, कानूनी दृष्टि से देखना चाहिए। इस कथन में बात हमारे पवित्रीकरण की नहीं, क्योंकि वहाँ तो हम स्वयं भी अक्सर विरोधाभासी अनुभव करते हैं, या हम ऐसे मसीहियों को देखते हैं, जो शारीरिक, अर्थात् पापमय जीवन बिताते हैं। बात पाप से धर्मी ठहराए जाने (दोषमुक्त किए जाने) की है। यह दोषमुक्ति दैहिक मृत्यु के बाद ही मान्य नहीं होती, बल्कि यह वास्तव में विश्वासी की नई कानूनी स्थिति का वर्णन करती है। “पाप के पास अब यह कानूनी अधिकार नहीं रहा कि वह अपना राज्य लागू करे और विश्वासी को नियंत्रित करे, क्योंकि वह मसीह के साथ मर चुका है।”¹⁷

17. जॉन ए. विटमर (John A. Witmer), *The Bible Knowledge Bible Commentary*, Walvoord & Zuck (सं.), पृ. 463, Victor Books, 1988।

इस स्थान पर अभी इसकी अन्तिम व्याख्या न ढूँढ़ना कि हम विजयी मसीही जीवन कैसे बिता सकते हैं, अत्यन्त महत्वपूर्ण है। यद्यपि यह पद इस बात का कारण है कि हम अब दासों की तरह पाप की सेवा नहीं करते (पद 6), फिर भी पौलुस अभी अपनी इस शिक्षा के अन्त पर नहीं पहुँचा है कि आदम में मनुष्य क्या था और हमें वहाँ से निकालकर मसीह में रखने के लिए क्या होना आवश्यक था। विजयी मसीही जीवन के विषय में वह अध्याय 8 में बोलता है, विषय को पूरी तरह विस्तार से समझाने के बाद। बाद में वह पवित्र आत्मा के द्वारा जीवन की सामर्थ्य के विषय में और उस विषय में बोलता है, जो हमारे भीतर होता है। दूसरे शब्दों में, जब हम यहाँ पहुँच गए हैं, तो हमें अपनी पर्वत-यात्रा अवश्य आगे जारी रखनी चाहिए। यदि विजयी जीवन के संबंध में यहाँ सब कुछ पहले ही स्पष्ट हो गया होता, तो अध्याय 7 और 8 की कोई आवश्यकता न होती।

यह बात कि यहाँ एक कानूनी तथ्य की बात है, जो 2000 वर्ष पहले मेरे बाहर रचा गया, इससे स्पष्ट होती है कि मेरे व्यावहारिक जीवन में अब भी पाप होता है। **कानूनी** का अर्थ है कि पाप के कारण अब मुझ पर अभियोग नहीं लगाया जा सकता और उसे अब मुझ पर प्रभुता करने का कोई अधिकार नहीं। और यदि यह मेरी कानूनी स्थिति है, तो यह धर्मियों की वह स्थिति है (5:19), जिसमें परमेश्वर ने मुझे रखा है और जो उसके लिए एकमात्र मान्य स्थिति है, जो मेरी है। अब कोई और स्थिति नहीं – मैं किसी एक अवसर पर धर्मी और किसी दूसरे अवसर पर पापी, या दोनों एक साथ, नहीं हूँ। यह अपने आप का खंडन करता है, और सबसे बढ़कर परमेश्वर के महान उद्धार का।

स्पष्ट करने के लिए वह तुलना सहायक है, जो पहले प्रयोग की जा चुकी है। 18 दिसम्बर 1865 को संयुक्त राज्य अमेरिका में दासता को समाप्त करनेवाला क़ानून लागू हुआ। यह हर दास पर लागू होता था। कानूनी रूप से इस दिन से सब दास स्वतंत्र थे, चाहे इस क़ानून पर हस्ताक्षर के समय वे वहाँ उपस्थित न रहे हों। यह उनके किसी योगदान के बिना और किसी दूसरे स्थान पर हुआ, फिर भी यह पूरी तरह मान्य था। अब उन्हें बस इसे सुनना था, अपने लिए इसका दावा करना था और अपने स्वामियों को छोड़ देना था।

4.8 पद 8-9: मसीह के साथ मृत्यु और जीवन में सहभागी होना

परन्तु यदि हम मसीह के साथ मर गए,

तो हमारा विश्वास है

कि उसके साथ जीएँगे भी,

क्योंकि हम जानते हैं

कि मसीह, जो मरे हुआँ में से जिलाया गया,

फिर कभी नहीं मरता;

मृत्यु का उस पर फिर प्रभुत्व नहीं रहा।

पौलुस दूसरी बार उस तथ्य से निष्कर्ष निकालता है कि हम मसीह के साथ जुड़े हुए हैं। पद 4 में यीशु के जिलाए जाने का परिणाम यह था कि हम “साथ जिलाए गए” लोगों के रूप में जीवन की नवीनता में चलें। पद 5 में पौलुस हमारे लिए यीशु के पुनरुत्थान के महत्व की पुष्टि करता है – केवल भविष्य के संबंध में नहीं, बल्कि यहाँ और अभी के हमारे जीवन के संबंध में भी। पद 8 में फिर पुनरुत्थान की बात है, परन्तु अब भविष्य के और दैहिक पुनरुत्थान की। मृत्यु में से जिलाए गए व्यक्ति के रूप में मनुष्य यीशु मसीह फिर नहीं मर सकता; उसका पुनरुत्थान का जीवन अविनाशी है। उसके साथ जुड़े होने के कारण हमारे पास वही जीवन है। आदम में हमने मृत्यु विरासत में पाई, मसीह में जीवन। मृत्यु के क्षेत्र को, या कहीं मृत्यु के राज्य को (उस क्षेत्र को, जहाँ लोग अब भी “आदम में” हैं), हम यीशु की मृत्यु और पुनरुत्थान के द्वारा छोड़ सके।

जब यीशु कब्र में था, तब मृत्यु का उस पर प्रभुत्व था। यह सचमुच एक असाधारण बात है। यीशु ने अपने आप को क्रूस की मृत्यु तक दीन किया, स्वेच्छा से मृत्यु सही; उसे तो जीवन को ही मृत्यु के हवाले करना पड़ा। तब थोड़े समय के लिए मृत्यु उस पर विजयी रही। परन्तु पिता की महिमा इसके सिवा कुछ और कर ही नहीं सकती थी कि उस अद्वितीय और सिद्ध को एक नए जीवन के लिए जिलाए।

जो मसीह के लिए सच है, वह हम पर भी लागू होता है। मृत्यु का प्रभुत्व टूट चुका है, चाहे हमारे पास, जैसा कुछ पद आगे कहा गया है, मरनहार देहें हैं। इसलिए मृत्यु पर विजय में हमारा पुनरुत्थान भी सम्मिलित है, जब मरी हुई और मिट्टी में मिल गई देहें मृत्यु के प्रभुत्व से छीन ली जाएंगी।

4.9 पद 10: मसीह, जो पाप के लिए मरा

क्योंकि वह जो मरा,

तो पाप के लिए एक ही बार सदा के लिए मरा;

परन्तु जो जीवित है,

तो परमेश्वर के लिए जीवित है।

यदि हम समझना चाहते हैं कि पाप के लिए मर जाने का हमारे लिए क्या अर्थ है, तो हमें समझना होगा कि मसीह के लिए इसका क्या अर्थ था कि वह पाप के लिए मरा। वह पाप के लिए बलिदान के रूप में मरा, इस प्रकार कि उसने हमारे पुराने मनुष्य पर आए दंड के निर्णय को सह लिया।

इस प्रकार उसने मृत्यु के द्वारा पाप की समस्या का समाधान कर दिया: एक ओर पाप का दोष चुका दिया, परन्तु साथ ही पाप की शक्ति को भी तोड़ दिया और उसे पीछे छोड़ दिया। पुनरुत्थान का नया जीवन अब पाप और मृत्यु की शक्ति के अधीन नहीं है, बल्कि वह परमेश्वर के द्वारा और परमेश्वर के लिए चलाया जानेवाला और केवल उसी को समर्पित जीवन है।

पाप की समस्या का दूसरी बार समाधान करने की आवश्यकता नहीं रही। पाप के लिए दूसरे बलिदान की आवश्यकता नहीं है, जैसा कि इब्रानियों की पत्री स्पष्ट रूप से पुष्टि करती है।

“यदि पाप की मज़दूरी मृत्यु है, तो उसकी मृत्यु हमारे लिए कितना बड़ा लाभ है, जो स्वयं निष्पाप था, जिसे परमेश्वर ने हमारे लिए पाप ठहराया, ताकि हम उसमें परमेश्वर की धार्मिकता बन जाएँ।

ऐसा नहीं कि वह क्रूस पर उतना पवित्र नहीं था, जितना उससे पहले की हर बात में था; परन्तु उसने अपने आप को दे दिया, ताकि उस सब के लिए, जो उस पर डाला गया और जिसकी ज़िम्मेदारी उसने अनुग्रह में अपने ऊपर ली, वह न्याय के अनुसार दोषी ठहराया जाए। उसने किसी बात में अपने आप को नहीं बचाया; किसी बात में परमेश्वर ने उसे नहीं छोड़ा, जिसने उसे त्याग दिया, जिसने अपने आप को हमारे पाप और उसके सब परिणामों के साथ ईश्वरीय न्याय के अधीन एक कर लिया था, ताकि हम स्वतंत्र होकर निकल सकें।”¹⁸

बलिदान का यह एक ही बार होना और उससे निकलनेवाली स्पष्ट स्थिति, अर्थात् पूरा हो चुका पक्ष परिवर्तन (Seitenwechsel), हम पर भी लागू होते हैं। और यह एक ऐसा सत्य है, जिसके बारे में हम सदा के लिए निश्चित हो सकते हैं और हमें होना भी चाहिए। इस सत्य को पहचानना और स्वीकार करना उस स्वतंत्रता का निर्णय करता है, जिसमें हम परमेश्वर की सेवा कर सकते हैं।

4.10 पद 11: अपने आप को पाप के लिए मरा हुआ, परन्तु परमेश्वर के लिए जीवित समझना

ऐसे ही तुम भी,

अपने आप को समझो

कि तुम पाप के लिए मरे हुए हो,

परन्तु मसीह यीशु में परमेश्वर के लिए जीवित।

उस सत्य के प्रति, जिसे पौलुस ने अभी-अभी खोलकर समझाया है, हमारा रवैया क्या है? हमें उसे एक ऐसी वास्तविकता के रूप में स्वीकार करना है, जो भरोसेमंद है और हमारे लिए मान्य है। “समझना” का अर्थ अपने आप को वैसा “गिनना” भी है। यह हिसाब-किताब (बहीखाते) का शब्द है: तुलन-पत्र तैयार है और बंद हो चुका है। परिणाम यह है कि मसीह का कार्य सौ प्रतिशत मेरे व्यक्तिगत खाते में जमा कर दिया गया है। उसकी मृत्यु मेरी मृत्यु है, उसका जीवन मेरा जीवन है।

यह पद, जैसा अक्सर कहा जाता है, पाप के विरुद्ध संघर्ष की कुंजी नहीं है। जब पाप की परीक्षा मेरे सामने आती है, तो मैं लगातार अपने आप को यह विश्वास नहीं दिला सकता कि मैं मरा हुआ हूँ। मैं तो देखता हूँ कि मैं बिल्कुल मरा हुआ नहीं हूँ, नहीं तो मैं परीक्षा पर कोई प्रतिक्रिया ही न करता। परीक्षा में क्या करना है, इसका वर्णन पौलुस अध्याय 8 में करता है।

18. William Kelly, *Notes on the Epistle to the Romans*, पृ. 88।

इसलिए यहाँ पहले मेरे लिए परमेश्वर के उद्धार के कार्य को भरोसे के साथ स्वीकार करने की बात है, न कि इस तथ्य को प्रतिदिन लागू करने की। मुझे उसे लागू करने की आवश्यकता नहीं, क्योंकि वह पहले ही हो चुका है। पौलुस यह नहीं कहता कि जब परीक्षा आए, तो हम प्रतिदिन पाप के लिए मरें या मरे होने का दिखावा करें। बल्कि वह समझाता है कि हम मर चुके हैं। इसका मेरे जीवन पर प्रभाव पड़ता है, क्योंकि इससे मेरे जीवन पर पाप की शक्ति टूट गई है।

जो अपने आप को पाप के लिए मरा हुआ समझता है, वह विश्वास से स्वीकार करता है कि उसका पुराना जीवन क्रूस पर समाप्त हो गया और इस प्रकार उसके जीवन में पाप का राज्य टूट गया है। उद्धार के इसी आधार पर मैं उतने ही विश्वास से उद्धार के इस तथ्य का दावा करता हूँ कि अब मेरे पास एक नया जीवन है, जिसके साथ मैं स्वतंत्र होकर परमेश्वर के लिए जी सकता हूँ। वॉचमैन नी (Watchman Nee) ठीक ही कहता है: “जानना – अपने आप को वैसा समझना – अपने आप को सौंप देना, यही ईश्वरीय व्यवस्था के अनुसार क्रम है।”¹⁹

4.11 पद 12: देह पर पाप का राज्य तोड़ दिया जाता है

इसलिए पाप तुम्हारी मरनहार देह में

राज्य न करे,

कि तुम उसकी लालसाओं की आज्ञा मानो।

यह उस बात का परिणाम है जो क्रूस पर हुई। यही गुलगुता का लक्ष्य है: पाप की तानाशाही, चाहे वह अपने छल में लगभग दिखाई न दे या अत्यन्त क्रूर ढंग से अपनी शक्ति चलाए, टूट चुकी है। यीशु के कार्य में यह सामर्थ्य है कि वह मेरे जीवन में पाप की वास्तविक शक्ति को तोड़ दे। इसी कार्य का हम सहारा लेते हैं। यही अपने आप को पाप के लिए मरा हुआ समझने का अर्थ है।

हमारी मरनहार देह (मनुष्य के अभौतिक भाग, अर्थात् भीतरी मनुष्य, के समान) पाप के परिणामों के अधीन है। देह वह साधन है, जिसके द्वारा पाप को हाथ और पाँव मिलते हैं। पाप स्वयं अब भी मुझ में है (अर्थात् मेरे शरीर में; तुलना करें 7:18), परन्तु उसे अब मुझ पर राज्य करने का अधिकार नहीं है (6:6ब, 14)। देह पाप से इतनी प्रभावित है कि वह पापकर्मों के द्वारा, उन अभिलाषाओं और लालसाओं के द्वारा बहकाई जाती है, जो सदा तृप्ति माँगती हैं।

पौलुस उद्धार के उस कानूनी पहलू पर ज़ोर देता है, जो हर विश्वासी के लिए सदा मान्य है। परन्तु यह कोई सैद्धांतिक या अमूर्त बात बनकर नहीं रह जाती। उद्धार का कानूनी पहलू वह आधार है, जिस पर मेरे प्रतिदिन के जीवन पर अब पाप शासन नहीं करता।

19. Watchman Nee, *Das normale Christenleben*, पृ. 58।

4.12 पद 13: अब अपने आप को परमेश्वर को सौंप देना

और न अपने अंगों को पाप के हवाले करो

कि वे अधर्म के साधन बनें,

परन्तु अपने आप को परमेश्वर को सौंपो,

मरे हुआँ में से जीवित जानकर,

और अपने अंगों को परमेश्वर को धार्मिकता के साधन होने के लिए।

अब हमें कुछ करने के लिए कहा जाता है। यहाँ तक कोई आज्ञा नहीं थी, सिवाय इसके कि परमेश्वर के कार्य को स्वीकार करें और उसका सहारा लें (6:11)। इससे अब उसका व्यवहार में उतारना निकलता है। देह के अंगों को सौंपने का अर्थ है अपने आप को उपलब्ध कराना। मेरे हाथ और पाँव, मेरी आँखें और कान और मेरा मुँह (सीधे शब्दों में, मेरा पूरा मानवीय अस्तित्व, अपनी सब इन्द्रियों और योग्यताओं के साथ) अब अपने उद्देश्य को पूरा करें। “जो हम हैं, वही बनना”²⁰ – यह कोई विरोधाभास नहीं, बल्कि विजयी जीवन का रहस्य और उसका तनाव भी है। हम मरे हुआँ में से जीवित हैं, क्योंकि मसीह यीशु में हमारे पास जी उठे हुए का जीवन है। विजेता का यह जीवन परमेश्वर को समर्पित है, अब अधर्म को नहीं।

4.13 पद 14: व्यवस्था के अधीन नहीं, परन्तु अनुग्रह के अधीन

क्योंकि पाप तुम पर प्रभुता न करेगा,

क्योंकि तुम व्यवस्था के अधीन नहीं,

परन्तु अनुग्रह के अधीन हो।

यह एक तथ्य है कि पाप अब हम पर राज्य नहीं करता। वह दशा बीत चुकी है। हम आगे की ओर देखते हैं, हम जीवन में कदम रखते हैं। वह जीवन परमेश्वर की व्यवस्था से निर्धारित नहीं होता, चाहे यह कितना ही अजीब लगे। पौलुस ने समझाया था कि व्यवस्था एक साधन थी, जिसके द्वारा पाप बहुत बढ़ गया। परन्तु अब हमारा जीवन परमेश्वर के अनुग्रह से निर्धारित होता है। व्यवस्था उचित माँग करती है, परन्तु आज्ञापालन के लिए कोई सामर्थ्य नहीं देती। वह अनुग्रह, जिसमें हम स्थिर हैं, हमें वह देता है जिसकी हमें परमेश्वर के लिए जीने में आवश्यकता है। यह जीवन का बिल्कुल ही दूसरा वातावरण है। परमेश्वर का अनुग्रह भरपूरी से देता है, व्यवस्था माँगती है। जो मसीही व्यवस्था से मित्रता करता है, वह वही अनुभव करेगा जिसका वर्णन रोमियों 7 में है: असमर्थता और निराशा। उद्धार के लिए हमें परमेश्वर के अनुग्रह की आवश्यकता थी, और ठीक उसी प्रकार जीवन के लिए भी हमें परमेश्वर के अनुग्रह की आवश्यकता है। हम परमेश्वर के अनुग्रह की

20. F. Godet।

सुरक्षा में, उसकी स्वीकृति में और उसकी सामर्थ्य में जीते हैं। अनुग्रह के अधीन होना उसी तथ्य के बराबर है, जिसकी चर्चा अध्याय 8 में होती है: “मसीह में” होना।

“जब मैं व्यवस्था के अधीन नहीं, परन्तु अनुग्रह के अधीन हूँ, तो आखिरकार मैं वह कर सकता हूँ और वह छोड़ सकता हूँ – जो मसीह चाहता है!”²¹

पौलुस यहाँ व्यवस्था का केवल संक्षेप में उल्लेख करता है, परन्तु इस एक वाक्य में उसके बारे में वह सब कहता है जो निर्णायक है, और अध्याय 7 में इसे और विस्तार से समझाता है। शायद इस अध्याय के सुननेवालों या पढ़नेवालों ने तुरन्त व्यवस्था के बारे में सोचा होगा कि वह एक उपयुक्त उपाय है, जिससे पाप के राज्य को तोड़ा जा सकता है।

4.14 सारांश

आदम से मसीह की ओर पक्ष परिवर्तन क्रूस के द्वारा पूरा होता है। मेरा अतीत, अर्थात् मेरा पुराना मनुष्य, जैसा परमेश्वर चाहता है वैसे ही दोषी ठहराया और न्याय किया जाता है। यीशु मसीह ने यह मेरे स्थान पर अपने ऊपर ले लिया। अब उसी में मेरा नया जीवन आरम्भ होता है। जो दावा पाप ने मेरे जीवन पर किया था, वह क्रूस पर समाप्त हो गया; मुझ पर उसकी शक्ति वहीं तोड़ दी गई।

इस खण्ड में यहाँ तक मुख्य बात यह नहीं है कि हम अब किस हद तक पवित्र या निष्पाप जीवन जीते हैं। विश्वासी में अब भी पाप है, जो उसमें तब तक रहता है जब तक वह इस देह में है। दुःख की बात है कि किसी मसीही का जीवन पापी शरीर (यूनानी **sarx**) की छाप लिए हुए हो सकता है – उस बात के बिल्कुल विपरीत, जो पौलुस यहाँ लिखता है। यहाँ (रोमियों 6:1-14 में) यह विषय नहीं है! पौलुस आदम से मसीह की ओर, पाप से धार्मिकता की ओर, मृत्यु से जीवन की ओर मौलिक और जड़ से हुए परिवर्तन को समझाता है।

जो मसीही यह भूल गए हैं, या जो स्वयं अपने आप को पाप के लिए मरा हुआ समझने या उसके लिए धीरे-धीरे मरने का प्रयत्न करते हैं, वे इस खण्ड को उसकी पूर्णता में शब्दशः अपने लिए ग्रहण करें।

जो मसीही पाप से प्रेम करते हैं, उन्हें उनकी वास्तविक और उद्धार-स्थिति के अनुसार की स्थिति का यह वर्णन स्पष्ट करना चाहता है कि वे एक बड़े विरोधाभास में जी रहे हैं। पाप के लिए मर चुकने के बावजूद पाप में जीना एक विडम्बना है।

वह मृत्यु, जो हम – मसीह के साथ – मरे हैं, हमारे मिट जाने का अर्थ नहीं रखती। बाइबल के अर्थ में मृत्यु (आत्मिक भी और दैहिक भी) उन बातों का अलग हो जाना है, जो एक साथ जुड़ी हुई हैं। पुराने मनुष्य की मृत्यु के द्वारा पाप मुझ से अलग कर दिया गया है और संबंध काट दिया गया है, जिससे पाप की शक्ति टूट गई है।

21. Hans-Joachim Eckstein।

4.15 गुलगुता का क्रूस और पाप

यह हमारे लिए हुआ है!

रोमियों 1 – 5:11: प्रायश्चित्त

रोमियों 5:12 – 8:13: छुटकारा

पापकर्मों की समस्या

पाप की समस्या

पापी कर्म और दोष का प्रश्न

पाप, पापकर्मों के स्रोत के रूप में

क्रूस पर बहाए गए यीशु मसीह के लहू के द्वारा हमें पापों की क्षमा मिली है।

हम मसीह के साथ क्रूस पर चढ़ाए गए हैं। हमारा पुराना मनुष्य मृत्यु के हवाले कर दिया गया।

मसीह हमारे पापों के लिए मरा।

मसीह पाप के लिए और हमारे उस पापी अस्तित्व के लिए मरा, जिसकी छाप स्वभाव से हमारे पुराने मनुष्य पर थी।

4.16 रोमियों 6:15-23: स्वतंत्र किए गए लोग, जो अनुग्रह के अधीन जीते हैं

इस अध्याय के दूसरे भाग में पौलुस (उस बात से निष्कर्ष निकालते हुए, जो उसने पहले भाग में परमेश्वर के उद्धार के कार्य के बारे में बताई है) इस पर जोर देता है कि कोई एक ही समय में केवल एक स्वामी की सेवा कर सकता है, दो स्वामियों की नहीं।

4.17 उद्धार का निश्चयार्थ और उद्धार का आज्ञार्थ

जो पढ़ने में जटिल लगता है, वह वास्तव में एक सहायक अभिव्यक्ति है। बात एक ही सिक्के के दो पहलुओं की है। “निश्चयार्थ” (इंडिकेटिव) और “आज्ञार्थ” (इम्पेरेटिव) दो शब्द हैं, जो व्याकरण से आते हैं। धर्मविज्ञानी इन्हें “उद्धार” शब्द के साथ जोड़कर प्रयोग करते हैं, ताकि संक्षेप में बता सकें कि “उद्धार के दो पहलू या दो आयाम” क्या हैं। उद्धार का निश्चयार्थ (इंडिकेटिव) दिखाता है कि मसीह ने हमारे लिए क्या पूरा किया है, अर्थात् उद्धार की वस्तुगत वास्तविकता। इस पहलू में वह अटल उद्धार सम्मिलित है, जो परमेश्वर ने हर विश्वासी को सचमुच दे दिया है और जो उसके लिए मान्य है।

उद्धार से एक बदला हुआ और नया जीवन निकलता है। उद्धार नवीनता में जीवन और आचरण के लिए बाध्य करता है। यही उद्धार का आज्ञार्थ (इम्पेरेटिव) है, पवित्र जीवन के लिए परमेश्वर की पुकार। उद्धार में पाया हुआ अनुग्रह हमें सिखाता है कि हम अभक्ति और सांसारिक अभिलाषाओं का इन्कार करें और धार्मिकता तथा भक्ति से जीवन बिताएँ (तुलना करें तीतुस 2:12)। कोई उद्धार को ईश्वरीय उद्धार के नैतिक दायित्व के साथ में पाए बिना नहीं पाता। जो उद्धार के आज्ञार्थ को गम्भीरता से नहीं लेता, उसे अपने आप को जाँचना चाहिए कि क्या वह उद्धार का दावा अपने लिए कर सकता है।

निश्चयार्थ किसी वास्तविक घटना को दर्शाता है और इस प्रकार उद्धार की वास्तविकता का वर्णन करता है। उद्धार का आज्ञार्थ पवित्र जीवन के लिए आदेश और प्रोत्साहन है। दोनों उद्धार के अंग हैं। रोमियों 6 में भी दोनों पहलू साफ़ पहचाने जा सकते हैं। पद 1 से 10 उद्धार के निश्चयार्थ का वर्णन करते हैं, जबकि पद 11 से उद्धार के आज्ञार्थ की चर्चा होती है।

उद्धार का आज्ञार्थ हमसे उद्धार कमाने को नहीं कहता, बल्कि पाए हुए उद्धार से जीने को कहता है। उसकी परख का क्षेत्र अनुग्रह के राज्य के अधीन है, जहाँ क्षमा और उदार पुनःस्थापना है। उद्धार इसलिए नहीं दिया गया कि बलवानों को छौंटा जाए और उन्हें अलग कर दिया जाए जो सफल नहीं होंगे। उद्धार के सब आज्ञार्थों का उद्देश्य यह है कि हम विश्वास में सचमुच परमेश्वर के आज्ञाकारी हों; उनका अर्थ यह नहीं कि विश्वास असफल हो सकता है। यद्यपि हमारा उद्धार निश्चित है और खोया नहीं जा सकता, फिर भी उसके अनुसार जीने की चेतावनियाँ और उपदेश इस तथ्य का विरोध नहीं करते। बल्कि वे हमें “राह पर बनाए रखने” के लिए हैं – विश्वास के उस सकारे मार्ग पर, जो जीवन की ओर ले जाता है।

सिंहावलोकन²²

उद्धार का तथ्य – उद्धार का निश्चयार्थ

वरदान: मसीह के द्वारा दिया गया

जो हम मसीह में पहले से हैं ...

हम पाप के लिए मर चुके हैं। रोमियों 6:2

हम मसीह के साथ मर चुके हैं। कुलुस्सियों 3:3

हम धर्मी ठहराए गए हैं ... रोमियों 5:1

हम अब शरीर में नहीं हैं। रोमियों 8:9

हम मसीह के बलिदान के द्वारा एक ही बार सदा के लिए पवित्र किए गए हैं! इब्रानियों 10:10

हम बुलाए गए हैं। इफिसियों 4:1; रोमियों 8:28

सब कुछ हमें दिया गया है ...

उद्धार को अपनाना – उद्धार का आज्ञार्थ

दायित्व: मसीह के लिए

... वही हम केवल मसीह में **बन सकते हैं**।

अपने आप को पाप के हवाले मत करो! रोमियों 6:13

अपने अंगों को मार डालो! कुलुस्सियों 3:5;
रोमियों 8:13

... और हमें धार्मिकता से जीना है। 1 तीमुथियुस 6:11

अब शरीर के अनुसार मत जीओ! रोमियों 8:12

उस पवित्रता के पीछे लगे रहो, जिसके बिना कोई प्रभु को नहीं देखेगा! इब्रानियों 12:14

अपनी बुलाहट के योग्य चाल चलो! इफिसियों 4:1

... इसलिए हमें सब कुछ **अपनाना है**।

22. Peter H. Uhlmann, Heimenhausen, स्विट्ज़रलैंड, के अनुसार, उनकी कृपापूर्ण अनुमति से।

हमने नए मनुष्य को, अर्थात् मसीह को, पहन लिया है। कुलुस्सियों 3:10-11; इफिसियों 4:24

प्रभु यीशु मसीह को पहन लो! रोमियों 13:14

हमें पूरी क्षमा मिली है। इफिसियों 1:7

हम एक दूसरे को क्षमा करने के लिए बाध्य हैं! इफिसियों 4:32

परमेश्वर ने हमें अपना प्रेम दिया। रोमियों 5:5

प्रेम में चलो! इफिसियों 5:1-2

हमें परमेश्वर के साथ मेल है और परमेश्वर की शान्ति है। रोमियों 5:1; फिलिप्पियों 4:7

मेल-मिलाप के पीछे लगे रहो! 1 पतरस 3:11

हमें मसीह में स्वतंत्रता है। रोमियों 8:2; गलातियों 5:1

इसलिए स्वतंत्रता में बने रहो, ताकि प्रेम से एक दूसरे की सेवा करो! गलातियों 5:13

परमेश्वर हमें विजय देता है। 1 कुरिन्थियों 15:57

जब हम संघर्ष करते हैं, तब हम विजय को अपनाते हैं। 2 तीमुथियुस 2:5 आदि

हम प्रभु में ज्योति हैं। इफिसियों 5:8क

ज्योति की सन्तान की तरह चलो, या: अपना उजियाला चमकने दो! इफिसियों 5:8ख; मत्ती 5:16

हम उद्धार की नई व्यवस्था का अनुभव करते हैं
...

... और नई सृष्टि की प्रतीक्षा करते हैं।

मसीह हमारा जीवन है। कुलुस्सियों 3:4; गलातियों 2:20

हम मसीह के प्रकट होने की प्रतीक्षा करते हैं। कुलुस्सियों 3:4

मसीह में हमें छुटकारा मिला है ... इफिसियों 1:7

... और हम अपनी देह के छुटकारे की प्रतीक्षा करते हैं। रोमियों 8:23

परमेश्वर ने हमें अपनी सन्तान और पुत्रों के रूप में गोद लिया है ... रोमियों 8:15; 1 यूहन्ना 3:2

... और हम इसके प्रकट होने की बाट जोहते हैं। रोमियों 8:23; 1 यूहन्ना 3:2

नया मनुष्य अपने सृजनहार के स्वरूप के अनुसार सृजा गया है: मसीह। इफिसियों 4:24

हम (अपने जीवन में) प्रभु के स्वरूप में बदलते जाते हैं। 2 कुरिन्थियों 3:18

हमारे पास अनन्त जीवन है ... यूहन्ना 3:36

... और फिर भी: अनन्त जीवन को थाम ले! 1 तीमुथियुस 6:12

कलीसिया के रूप में हम एक देह हैं। इफिसियों 4:4

इसलिए आत्मा की एकता बनाए रखो। इफिसियों 4:3

हम मसीह में पहले से ही सिद्ध हैं ... कुलुस्सियों ... परन्तु अभी पूर्णता तक नहीं पहुँचे। फिलिप्पियों
2:10 3:12

परमेश्वर सब कुछ करता है – सौ प्रतिशत! तू सब कुछ अपना ले – सौ प्रतिशत!

“डरते और काँपते हुए अपने उद्धार का कार्य पूरा करते जाओ; क्योंकि परमेश्वर ही है, जो अपनी सुइच्छा के लिए तुम में इच्छा करने और काम करने, दोनों का प्रभाव डालता है।” फिलिप्पियों 2:12

अभी से

पर अभी नहीं

होना – विश्वास की स्थिति

बनना – विश्वास को जीना

परमेश्वर की प्रभुसत्ता और अनुग्रह मसीही की ज़िम्मेदारी और उसका कार्य

हम पहले से ही पूरी तरह बचाए गए हैं – परन्तु अभी पूर्णता तक नहीं पहुँचे!

दोनों पक्ष इस एक आदेश में आकर मिलते हैं: **जो तू है, वही बन!**

“हर बैटरी का एक ऋणात्मक और एक धनात्मक ध्रुव होता है। यही विपरीतता इस बात की शर्त है कि तनाव (वोल्टेज) बना रहे। तभी बिजली बह सकती है, ताकि बत्ती जले। ठीक इसी प्रकार हम तभी जीवित (और बढ़ते हुए) मसीही हैं, जब हम उद्धार के तथ्य और उद्धार को अपनाने के दोनों ‘ध्रुवों’ के प्रति सचेत रहते हैं और उद्धार को अपने जीवन में उतारते हैं। यही तनाव हमें नए जीवन की गतिशीलता देता है।”²³

4.18 पद 15: अनुग्रह का लक्ष्य

तो क्या हुआ? क्या हम पाप करें,

क्योंकि हम व्यवस्था के अधीन नहीं,

परन्तु अनुग्रह के अधीन हैं?

कदापि नहीं!

फिर कोई पौलुस की शिक्षा से गलत निष्कर्ष निकाल सकता था। तो अब मसीही का जीवन अनुग्रह के अधीन है, व्यवस्था के अधीन नहीं। क्या इसका अर्थ यह है कि कोई इस स्वतंत्रता का दुरुपयोग कर सकता है और निरंकुश जीवन जी सकता है? कदापि नहीं; यह फिर एक बेतुका निष्कर्ष होगा। क्योंकि तब कोई इस बात को अनदेखा कर देगा:

4.19 पद 16: पाप के दास या धार्मिकता के दास

क्या तुम नहीं जानते कि

23. Peter Uhlmann, Heimenhausen, स्विट्ज़रलैंड, का उद्धरण, उनकी कृपापूर्ण अनुमति से।

जिसकी आज्ञा मानने के लिए तुम अपने आप को दासों की तरह सौंप देते हो,

उसी के दास हो, जिसकी आज्ञा मानते हो:

चाहे पाप के, जिसका अन्त मृत्यु है,

चाहे आज्ञाकारिता के, जिसका अन्त धार्मिकता है?

जो अनुग्रह को और व्यवस्था से स्वतंत्रता को पाप करने की छूट मान लेता है, वह भूल जाता है कि ऐसा करके वह अपने आप को पाप के हवाले कर देता है और उसे फिर से अपना शासक बना लेता है। कोई सुनहरा बीच का मार्ग नहीं है, जिस पर कोई बिना टकराव के दोनों स्वामियों का आदर कर सके। केवल दो ही प्रकार की अधीनता है – या तो पाप से निर्धारित जीवन, या परमेश्वर के प्रति आज्ञाकारिता में चाल-चलन।

4.20 पद 17: मन से आज्ञाकारी – अब पाप के दास नहीं

परन्तु परमेश्वर का धन्यवाद हो

कि तुम जो पाप के दास थे,

तौभी मन से आज्ञाकारी हो गए

शिक्षा के उस साँचे के,

जिसके तुम सौंपे गए थे!

पौलुस रोमियों की परीक्षा नहीं लेता और उनके उद्धार पर सन्देह नहीं करता। वह उनसे यह नहीं पूछता कि अब वे किसके दास हैं, बल्कि बिना किसी सन्देह के यह कहता है कि पाप की छाप लिए हुए उनका दासत्व बीत चुका है। वह आनन्दित होता है और परमेश्वर का धन्यवाद करता है। रोमियों 5:8 में उसने पहले ही कहा था कि हम कभी पापी थे, अर्थात् अब नहीं हैं। यही बात वह यहाँ एक बार फिर पक्की करता है। चाहे दुःख की बात है कि हम अब भी पाप करते हैं, फिर भी हम अब पाप के दासत्व में नहीं हैं।

यह “स्थानान्तरण” परमेश्वर का कार्य था। उसने हमें मृत्यु के क्षेत्र से निकालकर ले आया और हमें जीवन दे दिया। जीवन के क्षेत्र का वर्णन इन अध्यायों में “शिक्षा के साँचे” के द्वारा प्रभावशाली ढंग से किया गया है। मसीह में उद्धार के बारे में परमेश्वर की इस शिक्षा को जानना अत्यन्त महत्वपूर्ण है। यह शिक्षा वह आधार है, जिस पर जीवन की नवीनता के नियमों को पहले समझना आवश्यक है, ताकि फिर उनके अनुसार जीया भी जा सके। शिक्षा हमारे अनुभव से उत्पन्न नहीं होती, बल्कि वह मार्ग दिखाती है। उसी से हम अपने अनुभव को नापते और परखते हैं। पवित्रशास्त्र की शिक्षा हमें सुधारती है, उल्टा नहीं।

“शिक्षा का साँचा” इस बात का संकेत है कि यह शिक्षा अमूर्त धाराओं से भरी किसी प्रकार की कानून की पुस्तक नहीं है। वह “जीवन की बुद्धि” है और इस प्रकार हमारे जीवन को बदलना चाहती है। इसीलिए

प्रेरित इसे इस प्रकार कहता है: हम “शिक्षा के साँचे ... के साँपे गए” हैं – अर्थात् इस उद्देश्य से कि वह हम में कुछ उत्पन्न करे।

विशेषज्ञों के द्वारा विशेषज्ञों के लिए बहुत सी वैज्ञानिक शिक्षाएँ और सिद्धांत हैं। परमेश्वर की शिक्षा परमेश्वर की हर सन्तान के लिए है – चाहे परमेश्वर का प्रेम उसे किसी भी पृष्ठभूमि से निकालकर लाया हो। यह शिक्षा जीवन के निकट है और जीवन के लिए आवश्यक है। ये अध्याय, जिन्हें समझना निश्चय ही सदा आसान नहीं है, धर्मविज्ञानियों का कोई अपना क्षेत्र नहीं हैं, बल्कि हमारे मसीही होने के अस्तित्व से जुड़े प्रश्न हैं। बहुत कुछ इस पर निर्भर करता है कि हमने इन्हें समझा है या नहीं। जिसने इनका उत्तर अपने लिए व्यक्तिगत रूप से नहीं पाया, वह कई वर्ष खो सकता है।

परमेश्वर ने हमें शिक्षा के साँचे को साँप दिया; परन्तु साथ ही सुसमाचार के प्रति हमारी आज्ञाकारिता परमेश्वर के कार्य करने की शर्त थी। यह आज्ञाकारिता “मन से” हुई। यह आज्ञाकारिता का ऐसा कदम था, जो अन्तरतम से उठा। यह कोई ऊपरी आज्ञाकारिता नहीं थी, बल्कि जीवन का एक सच्चा और स्थायी निर्णय था। परमेश्वर हमारा हृदय चाहता है; वह चाहता है कि आज्ञाकारिता पूरे विश्वास और आनन्द से हो। इसके सिवा सब कुछ परमेश्वर के लिए बेकार है और उसमें केवल बाहरी रूप और दिखावटी पवित्रता होती है।

4.21 पद 18: धार्मिकता के दास

और पाप से स्वतंत्र होकर

तुम धार्मिकता के दास बन गए।

आदम से मसीह की ओर इस “ईश्वरीय स्थानान्तरण” ने हमें पाप से स्वतंत्र कर दिया है। यह पौलुस ने अध्याय 6 के पहले भाग में समझाया है।

छुटकारे का अर्थ पाप को “हटा देना” नहीं है, जैसे किसी घातक ट्यूमर को निकाल दिया जाता है। इसी चित्र का प्रयोग करते हुए पौलुस के कथन को इस प्रकार समझाया जा सकता है: ट्यूमर का लेज़र से उपचार किया गया, क्योंकि पाप का क्रूस पर न्याय किया गया है, उसे शरीर (यूनानी *sarx*) में दोषी ठहराया गया (8:3)। परन्तु साथ ही पाप की देह को भी निष्प्रभावी कर दिया गया, अर्थात् इस ट्यूमर के पास अब कोई काया (कोई कार्यक्षेत्र) नहीं है, जिसमें वह फैल सके। मुझे अब रोगी नहीं कहा जाता, यद्यपि ट्यूमर अब भी वहाँ है। उसकी वृद्धि रोक दी गई है। दूसरे शब्दों में: पाप अब भी मुझ में है (मेरे शरीर में, मेरे शारीरिक स्वभाव में), जब तक मैं अपनी मरनहार देह में हूँ। फिर भी इस कारण मैं अपने अस्तित्व में अब पापी नहीं हूँ, बल्कि मसीह में एक पवित्र जन हूँ।

हम पाप के प्रभुत्व से स्वतंत्र किए गए हैं, हम अब पाप के दास नहीं हैं। इसके विपरीत: अब हम परमेश्वर की धार्मिकता के दास बन गए हैं।

4.22 पद 19: अपने आप को परमेश्वर की धार्मिकता और पवित्रता के लिए उपलब्ध कराना

मैं तुम्हारे शरीर की निर्बलता के कारण
मनुष्यों की रीति पर कहता हूँ।
क्योंकि जैसे तुमने अपने अंगों को
अशुद्धता के
और अधर्म के दास करके सौंपा था,
कि अधर्म हो,
वैसे ही अब अपने अंगों को दास करके सौंप दो
धार्मिकता के,
कि पवित्रता हो।

पौलुस की शिक्षा इतनी “मानवीय” है कि उसे ग़लत समझना लगभग असंभव है। वह उनके शरीर की निर्बलता का ध्यान रखता है। यह शब्द एक कमज़ोर आत्मिक दशा को दर्शाता है। पत्र पानेवाले उस अभिव्यक्ति को समझने में सक्षम नहीं थे, जिसे पौलुस इस शिक्षा के लिए सामान्यतः चुनता। उनकी आत्मिक दशा अपर्याप्त थी और उसे वृद्धि और नवीनीकरण की आवश्यकता थी, जैसा पौलुस बाद में लिखता है। क्या इससे हमें भी लाभ नहीं होता?

इसके बाद एक पुकार आती है, उद्धार का एक आज्ञार्थ (इम्पेरेटिव): अपने आप को दासों के रूप में धार्मिकता के लिए उपलब्ध कराओ, ताकि “जीवन की नवीनता” सचमुच प्रकट हो।

“पवित्रता” या “पवित्रीकरण” के लक्ष्य से हमारी स्थिति का वह मौलिक परिवर्तन अभिप्रेत है, जिसने हमें पवित्र जन, अर्थात् परमेश्वर के लिए अलग किए हुए लोग बना दिया है। दूसरी ओर, जो धर्मी ठहराए गए हैं और पवित्र किए गए हैं, उनके लिए उद्धार का यह दायित्व है कि वे परमेश्वर की धार्मिकता और पवित्रता के अनुसार दृढ़ता से अपना जीवन बिताएँ।

4.23 पद 20-22: निष्फलता से अनन्त जीवन तक

क्योंकि जब तुम पाप के दास थे,
तब धार्मिकता की ओर से स्वतंत्र थे।
तो जिन बातों से अब तुम लज्जित होते हो,

उनसे उस समय तुम्हें क्या फल मिलता था?

क्योंकि उनका अन्त तो मृत्यु है।

परन्तु अब पाप से स्वतंत्र होकर

और परमेश्वर के दास बनकर

तुम्हें वह फल मिला है जिससे पवित्रता प्राप्त होती है,

और उसका अन्त अनन्त जीवन है।

सचमुच यह एक काला-सफ़ेद चित्र है, जिसे पौलुस यहाँ खींचता है। क्योंकि अपने नए जन्म से पहले, अपनी स्थिति के परिवर्तन से पहले, पत्र पानेवालों का ईश्वरीय धार्मिकता से कोई लेना-देना नहीं था, बल्कि वे पाप के दास थे। ऐसा नहीं था कि पहले दोनों का कोई मिश्रण था – ठीक वैसे ही जैसे अब मसीही होने के नाते उनके लिए दोनों का कोई मिश्रण नहीं है। प्रभु यीशु ने इसके बारे में कहा कि कोई दो स्वामियों की नहीं, बल्कि केवल एक ही स्वामी की सेवा कर सकता है।

अब पत्र पानेवालों को पीछे मुड़कर देखना था। पाप उनके जीवन में केवल एक अमूर्त साथी नहीं रहा था, बल्कि उसने अपना कर वसूला था और उन्हें ऐसे कामों और बातों तक पहुँचाया था, जिनके कारण वे अब लज्जित होते हैं। ऐसा जीवन मृत्यु की ओर ले जाता है। वहाँ केवल वही एक विकल्प है, जिसका वर्णन अगले पद में है।

पाप और उसकी शक्ति से छुटकारा, और अब परमेश्वर की दासों के रूप में सेवा करने की सच्ची स्वतंत्रता, एक नई पहचान, एक नई स्थिति को अपने में समेटे हुए हैं। यह अब ऐसी बातें उत्पन्न करती है, जिनके लिए अब लज्जित होने की आवश्यकता नहीं, बल्कि जो संबंधित लोगों के जीवन में पवित्रता का फल लाती हैं। जीवन की नवीनता परमेश्वर के लिए फल लाती है और उसका लक्ष्य अनन्त जीवन है। यह जीवन परमेश्वर के लिए फल लाने के द्वारा कमाया नहीं जाता। बल्कि यह परमेश्वर के उद्धार का एक पक्का अंग है, जैसा अगला पद दिखाता है।

यहाँ अनन्त जीवन से मसीह में जी उठे हुआ का वह जीवन अभिप्रेत है, जिस तक हम भविष्य में पहुँचेंगे। परमेश्वर के लिए जीए गए जीवन के अन्त में पूर्णविराम नहीं, बल्कि कोलन (:) है: परमेश्वर के साथ अबाध संगति में एक अकल्पनीय, महिमामय जीवन हमारी प्रतीक्षा कर रहा है। अनन्त जीवन का अर्थ अविनाशिता है। नए नियम से और विशेष रूप से प्रेरित यूहन्ना से हम यह भी जानते हैं कि इस जीवन में केवल “लम्बाई” या “मात्रा” ही नहीं, बल्कि सबसे बढ़कर इस ईश्वरीय जीवन का “गुण” सम्मिलित है।

परमेश्वर के लिए जीए गए जीवन का लक्ष्य अनन्त जीवन है। इसी पर हमारी दृष्टि लगी है, और हम परमेश्वर की आनेवाली महिमा की आशा पर घमण्ड करते हैं।

4.24 पद 23: अनन्त दंड के बदले अनन्त जीवन

क्योंकि पाप की मज़दूरी तो मृत्यु है,

परन्तु परमेश्वर का अनुग्रह का वरदान अनन्त जीवन है,

जो मसीह यीशु

हमारे प्रभु में है।

यह वचन एक वाक्य में न केवल रोमियों 6 की विषय-वस्तु को, बल्कि पूरे सुसमाचार को समेट देता है। पहले मनुष्य ने पाप “कर डाला”। इसके लिए उसे भुगतान करना होगा। या उल्टा कहें: उसे एक ऐसे काम का भुगतान मिलता है, जो अच्छा नहीं, बल्कि बुरा था। परन्तु यह “सौदा” पलटा नहीं जा सकता। मृत्यु को न लौटाया जा सकता है, न बदला जा सकता है।

मज़दूरी या वेतन वह है, जो किसी ने कमाया है। परन्तु परमेश्वर का उत्तर इससे भिन्न है। उसकी ओर से अनुग्रह का वरदान आता है, एक बिना कमाया हुआ उपहार। मृत्यु के प्रति उसका उत्तर जीवन है। परन्तु यह केवल मृत्यु का रद्द हो जाना नहीं है, जैसे लाज़र के साथ हुआ, जिसे यीशु ने जिलाया। क्योंकि लाज़र अपने जिलाए जाने के बाद किसी समय फिर मर गया। इसके विपरीत परमेश्वर का वरदान एक पूरी तरह नया जीवन है, क्योंकि यह मसीह यीशु में मिलता है। मसीह का जीवन जी उठे हुए का जीवन है; यह पुनरुत्थान का जीवन है, जो मृत्यु के प्रभाव-क्षेत्र से परे और उसकी पहुँच से बहुत दूर है।

यह जीवन अनन्त है, क्योंकि यह परमेश्वर का अपना जीवन है। यह हमारा जीवन बन सका, क्योंकि यह जीवन उस “पुत्र में” है, जो मनुष्य बना (1 यूहन्ना 5:11-13)।

मसीह यीशु, परमेश्वर का अभिषिक्त, हमसे दूर नहीं है। वह हमारा व्यक्तिगत प्रभु है, जिसका हमारे साथ घनिष्ठ संबंध है। वह अब हमारा स्वामी है, वह हमारा परमेश्वर है।

5. रोमियों की पत्री में व्यवस्था

व्यवस्था शब्द रोमियों की पत्री में 72 बार आता है। कुल मिलाकर पौलुस नए नियम में इस शब्द का प्रयोग 119 बार करता है। यह सदा मूसा की व्यवस्था नहीं होती, जैसा कि हर बार के संदर्भ से पहचाना जा सकता है। मूसा की व्यवस्था रोमियों की पत्री के बड़े विषयों में से एक है। यह सिंहावलोकन विभिन्न अर्थों को बेहतर समझने में सहायता कर सकता है।

शब्द	अर्थ	संदर्भ-सूची
		2:12, 13, 14, 17, 18, 20, 23, 25 3:19, 20, 21, 31 4:13, 14, 15, 16
व्यवस्था (उपपद के साथ और बिना), व्यवस्था के अधीन, परमेश्वर की इच्छा, सत्य का साकार रूप, व्यवस्था की विधियाँ, आज्ञा, परमेश्वर की व्यवस्था, परमेश्वर की ओर से व्यवस्था, धार्मिकता की व्यवस्था	सामान्यतः यह सदा मूसा की व्यवस्था है। रोमियों की पत्री में व्यवस्था का नैतिक भाग अभिप्रेत है; बलिदान के नियम, अर्थात् विधि-विधान की व्यवस्थाएँ, कम ही या बिल्कुल नहीं। व्यवस्था का यह भाग केवल यहूदियों को दिया गया था।	5:13, 20 6:14, 15 7:1, 4, 5, 6, 7, 8, 9, 10, 11, 12, 13, 14, 21, 22, 25 9:4, 31; 8:3, 4, 7 10:4, 5; 13:8, 10
“लिखित (दूसरे अनुवाद करते हैं: अक्षर की पुरानी रीति में, अर्थात् लिखित [व्यवस्था] में”)	लिखी हुई व्यवस्था, दोनों पटियाएँ, मूसा की पाँचों पुस्तकें भी	2:27, 29 7:6

विश्वास की व्यवस्था	कर्मों और कर्मों पर आधारित धार्मिकता के विपरीत विश्वास और भरोसे का सिद्धांत	3:27, 28
अपने लिए आप ही व्यवस्था; हृदय में लिखा हुआ व्यवस्था का काम; विवेक	व्यवस्था का वह नैतिक भाग, जो परमेश्वर के अनन्त स्वभाव और उसकी माँगों (प्रेम; 13:10) के अनुरूप है। इस व्यवस्था को कुछ अन्यजाति लोग मूसा की आज्ञाओं को जाने बिना भी जानते थे। जब-जब कोई अन्यजाति व्यक्ति स्वभाव से प्रेम की व्यवस्था का पालन करता है, तब वह ऐसा करता है, परन्तु वह बार-बार उसके विरुद्ध पाप भी करता है।	2:14, 15
पति की व्यवस्था	वह व्यवस्था, जो पति से संबंधित है (अर्थात् मूसा की व्यवस्था, जो पत्नी को पति से बाँधती है)	7:2, 3
मेरी बुद्धि की व्यवस्था	उस नए जीवन का प्रभाव और सिद्धांत, जो परमेश्वर की सेवा करना चाहता है। परमेश्वर की सेवा करना नए जीवन का एक प्राकृतिक नियम है, क्योंकि परमेश्वर की व्यवस्था नए जीवन में जमी हुई है।	7:23
पाप और मृत्यु की व्यवस्था	एक अटल सिद्धांत, जिसके अनुसार पाप नियम से मनुष्य पर हावी रहता है और पाप बिना किसी निकास के मृत्यु तक ले जाता है	7:23 8:2
जीवन की आत्मा की व्यवस्था	मसीह में, जो मृत्यु पर विजयी अर्थात् जी उठा हुआ है, जीवन के पवित्र आत्मा की व्यवस्था (सिद्धांत, सामर्थ्य का नियम) कार्य करती है; वह पाप और मृत्यु की व्यवस्था से अधिक बलवान है।	8:2
	तुलना: गुरुत्वाकर्षण के प्राकृतिक नियम पर केवल एक दूसरे नियम, अर्थात् वायुगतिकी (एयरोडायनामिक्स) के नियम, के द्वारा ही विजय पाई जा सकती है।	

6. रोमियों 7: व्यवस्था से स्वतंत्र

अध्याय 5 और 6 के विषय के विकास में एक चढ़ाव अनुभव होता है, जो अध्याय 7 के पद 6 तक बना रहता है। परन्तु फिर अध्याय 7 के दूसरे भाग में हम एक अन्धकारमय स्थिति से टकराते हैं, जो विचारों के प्रवाह में बिल्कुल फ़िट होती नहीं दिखती।

अध्याय 7 एक बीच में डाला गया खण्ड है²⁴, जिसमें पौलुस व्यवस्था के साथ हमारे संबंध, उसके प्रभाव और उसके लक्ष्य पर विचार करता है। मूसा की व्यवस्था, तोरा, का उल्लेख वह रोमियों 6:14-15 में पहले ही दो बार कर चुका था, परन्तु आश्चर्यजनक परिणामों के साथ: वह मसीही के जीवन के लिए (चाहे वह यहूदी हो या अन्यजाति) अब निर्णायक नहीं है। मसीही अनुग्रह के अधीन है, अब व्यवस्था के अधीन नहीं। केवल एक वाक्य में वह एक मौलिक और दूरगामी तथ्य बता देता है। अन्यजाति व्यक्ति के लिए शायद यह समझ में आनेवाली बात थी, परन्तु एक यहूदी के लिए? उसके लिए यह एक उत्तेजना थी, बल्कि शायद परमेश्वर की निन्दा भी। ऐसी प्रतिक्रियाओं की अपेक्षा करते हुए पौलुस यहाँ कोई प्रश्नचिह्न नहीं छोड़ना चाहता, और इसलिए एक पूरे अध्याय में – एक लम्बे कोष्ठक-वाक्य में – इस विषय पर विचार करता है।²⁵

यदि रोमियों 6:23 के ठीक बाद 8:1 आता, अर्थात् अध्याय 7 होता ही नहीं, तो हम (अन्यजातियों) में से आए मसीही होने के नाते) शायद किसी बात की कमी अनुभव न करते। फिर भी इस विषय के पूरे संदर्भ में रोमियों 7 की शिक्षा अनिवार्य है। रोमियों 5 से 8 तक की बड़ी मार्गदर्शक रेखा को इस प्रकार सारांश में कहा जा सकता है:

आदम से मसीह तक, एक निष्फल जीवन से एक ऐसे जीवन तक, जो परमेश्वर के लिए फल लाता है और अब पाप के अधीन नहीं है। परमेश्वर ने यह कैसे किया, और मैं आज कैसे इस योग्य हूँ

कि सचमुच “जीवन की नवीनता” में चलूँ? अब यह प्रश्न सामने आता है कि क्या इसके लिए सचमुच व्यवस्था की आवश्यकता नहीं है, जैसा अध्याय 6 में पहले ही कहा गया था। आखिर वह तो स्वयं परमेश्वर ने दी थी, यह दिखाने के लिए कि मनुष्य को कैसे जीना चाहिए।

24. मैं पूरे अध्याय 7 को 8:1 तक एक कोष्ठक-वाक्य मानता हूँ। क्योंकि पद 1-6 विषय की दृष्टि से अध्याय 6 से संबंधित नहीं हैं, बल्कि कोष्ठक-वाक्य की भूमिका बनाते हैं।

25. वैसे यही बात पौलुस यहूदियों का ध्यान रखते हुए अध्याय 9 – 11 में भी करता है। वह समझाता है कि एक ओर सुसमाचार केवल यहूदियों के लिए नहीं, बल्कि सब मनुष्यों के लिए क्यों है। परन्तु साथ ही वह इस बात पर जोर देता है कि वाचा की प्रजा से की गई सब प्रतिज्ञाएँ भविष्य में पूरी होंगी।

6.1 रोमियों 7 का अर्थ और उसका स्थान

रोमियों की पत्री के इस अध्याय को विवादास्पद ढंग से समझा गया है। ज्वलंत प्रश्न यह है कि यह अध्याय किसी मनुष्य की कौन सी दशा का वर्णन करता है। सबसे प्रसिद्ध व्याख्याएँ ये हैं:

- एक मसीही की सामान्य दशा
- एक असामान्य और अनचाही अपवाद-दशा
- एक ऐसे मनुष्य की दशा, जिसका नया जन्म नहीं हुआ
- एक नया जन्म पाए हुए मनुष्य की दशा, जिसके पास पवित्र आत्मा नहीं है।

सचमुच इसकी व्याख्या हमारे मसीही जीवन के लिए अस्तित्व से जुड़ा विषय है। क्योंकि बहुत कुछ दाँव पर है: क्या सुसमाचार सचमुच और स्थायी रूप से मनुष्यों को बदल सकता है? या हम केवल अपने आप को धोखा दे रहे हैं? अध्याय 7 से यह निष्कर्ष भी निकाला जा सकता है कि भलाई करने का प्रयास अधिकतर प्रयास ही बनकर रह जाएगा। क्या वह यथार्थवादी सही है, जो दावा करता है कि पाप पर विजय स्वर्ग में ही मिलेगी? तो रोमियों 7 को कैसे समझना चाहिए?

6.2 आत्मा का शरीर से संघर्ष?

अध्याय 7 में एक मसीही के उस निरन्तर संघर्ष का वर्णन नहीं है, जिसमें शरीर (यूनानी *sarx*) और आत्मा एक दूसरे के विरुद्ध उठ खड़े होते हैं और आपस में जूझते हैं, जैसा कि गलातियों 5:16-25 में वर्णित है। क्योंकि वहाँ पवित्र आत्मा की सामर्थ्य में विजय की बात है, जो रोमियों 7 में कहीं भी दिखाई नहीं देती। यहाँ वर्णित अनुभव में केवल निराशा दिखती है। मनुष्य पाप की शक्ति के नीचे कराहता है। वह केवल अपने आप को देखता है और सामर्थ्य केवल अपने भीतर ही खोजता है। विजय का वर्णन तो वास्तव में रोमियों 6 में पहले ही हो चुका है। परन्तु वह कैसी विजय है, यदि वह वैसी दिखे जैसा अध्याय 7 वर्णन करता है? रोमियों 7 सामान्य मसीही जीवन का वर्णन नहीं करता, बल्कि उस मसीही की दयनीय दशा का, जिसने व्यवस्था को अपने जीवन का नियम बना लिया है और अपनी ही शक्ति से उसका पालन करने का प्रयत्न करता है। वह उस पर विश्वास नहीं करता, जो 6:14-15 कहता है: हम अब व्यवस्था के अधीन नहीं हैं। इसलिए उसे यह कड़वा अनुभव होता है कि वह ऐसा नहीं कर पाता। यह उसे निराशा की कगार पर ले आता है (“मैं कैसा अभागा मनुष्य हूँ”, पद 24)।

6.3 एक ही समय में धर्मी और पापी?

मार्टिन लूथर (Martin Luther) ने कहा कि हम “एक ही समय में धर्मी और पापी”²⁶ हैं। लूथर के अनुसार, रोमियों 7 में ही पापी होना विशेष रूप से प्रकट होता है। परन्तु अध्याय 5 में हम पहले ही देख चुके हैं कि हम अब “पापी” नहीं हैं, बल्कि थे (5:8; 5:19)। यही परमेश्वर का वचन कहता है। रोमियों 7 यह नहीं कहता कि अपनी स्थिति के अनुसार हम अब भी पापी हैं। बल्कि यह अध्याय यह प्रकट करता है कि परमेश्वर की व्यवस्था परमेश्वर की महिमा के लिए जीए जानेवाले जीवन का मापदंड नहीं है। यदि हम अब भी पाप करते हैं, तो इसका अर्थ यह नहीं कि हम अब भी पापी हैं। जब हम पाप करते हैं, तो हम ऐसा पवित्र जनों के रूप में करते हैं – ऐसे लोगों के रूप में, जो फिर भी पवित्र जन बने रहते हैं।

मसीह में और आत्मा के द्वारा जीवन की नवीनता मूसा की या किसी और व्यवस्था से निर्धारित नहीं होती। व्यवस्था का संबंध पुराने मनुष्य से है, नए से नहीं। परन्तु यदि कोई व्यवस्था को जीवन का मापदंड मान लेता है, तो देर-सबेर वह ऐसी ही स्थिति में पहुँच जाएगा, जैसी यहाँ वर्णित है। वैसे यह उन पर भी लागू होता है, जो अपने अनुभव में एक बार रोमियों 7 को छोड़कर रोमियों 8 में आ गए हैं। जब कभी कोई व्यवस्थावादी हो जाता है और व्यवस्था को मसीही का मानदंड बना लेता है, तब “फिर से फिसल जाना” हो सकता है। इस दृष्टि से यह अध्याय उस मसीही के अनुभव का भी वर्णन करता है, जो व्यवस्था से वास्तविक छुटकारे को जानता है, फिर भी अपनी ही शक्ति से व्यवस्था का पालन करने का प्रयत्न करता है।

सामान्य मसीही जीवन का वर्णन रोमियों 8 में है। रोमियों 7 मसीही के उस प्रतिदिन के जीवन का वर्णन नहीं करता, जिसे परमेश्वर चाहता है। यदि परमेश्वर के उस महान उद्धार का, जिसकी क्रीमत उसे अपने ही पुत्र की मृत्यु के रूप में चुकानी पड़ी, यही परिणाम होता, तो यह एक कड़वी निराशा होती।

6.4 नया जन्म पाया हुआ या नहीं?

7:14 से वर्तमान काल (7:7-11 के भूतकाल के विपरीत) स्पष्ट करता है कि यह मनुष्य और उसका अनुभव एक मसीही का है।

जहाँ अध्याय 5:12 से अध्याय 6 के अन्त तक (या अध्याय 7:6 तक भी) दो बड़ी रेखाओं का वर्णन होता है, वहाँ पौलुस उन्हें बीच में रोकता है, ताकि अध्याय 8 में उन्हें फिर आगे बढ़ाए। इनके बीच (अर्थात् अध्याय 7 में) एक अपवाद-स्थिति मिलती है, जो केवल उसी पर लागू होती है, जो व्यवस्था को जानता है। संबंधित व्यक्ति परमेश्वर की सेवा करना चाहता है, जो किसी अविश्वासी मनुष्य के बारे में आवश्यक रूप से

26. लूथर का सिद्धांत: एक ही समय में धर्मी और पापी (simul justus et peccator)। “अब देखो, बात वैसी ही है जैसी मैंने ऊपर कही: ‘पवित्र जन उसी समय, जब वे धर्मी हैं, पापी भी हैं; धर्मी वे इसलिए हैं कि वे मसीह पर विश्वास करते हैं, जिसकी धार्मिकता उन्हें ढाँपती है और उनके नाम गिनी जाती है। परन्तु पापी वे इसलिए हैं कि वे व्यवस्था को पूरा नहीं करते (और) पापमय अभिलाषा से रहित नहीं हैं, बल्कि वे उन रोगियों के समान हैं, जो वैद्य की देखभाल में हैं’ – ऐसे रोगी, जो सचमुच और वास्तव में रोगी हैं, परन्तु आरम्भ के रूप में और आशा में स्वस्थ हैं, या अच्छा कहें: स्वस्थ किए गए हैं, अर्थात् स्वस्थ होने की प्रक्रिया में हैं”,

Römerbriefvorlesung 1515/16।

नहीं कहा जा सकता। एक अविश्वासी धार्मिक हो सकता है और परमेश्वर को खोज सकता है, परन्तु अन्त में वह अपनी ही इच्छा पूरी करेगा। साथ ही, एक धार्मिक व्यक्ति आवश्यक रूप से यह स्वीकार नहीं करेगा कि वह पूरी तरह बुरा है। परन्तु रोमियों 7 का व्यक्ति आत्म-ज्ञान की इसी अवस्था तक पहुँचता है। यह पहचान कि हम पूरी तरह भ्रष्ट हैं, परन्तु परमेश्वर और उसकी व्यवस्था पूर्ण रूप से सिद्ध हैं, केवल परमेश्वर के आत्मा के प्रकाश से ही आ सकती है। इसलिए यह माना जा सकता है कि यहाँ (7:14 और आगे) एक नया जन्म पाए हुए मनुष्य की बात है।

उसकी असमर्थता का कारण यह भी बताया जाता है कि उसके पास (अभी) पवित्र आत्मा नहीं है, क्योंकि पौलुस पद 6 में एक बार उल्लेख करने (“आत्मा की नई रीति में”) के बाद अध्याय 8 में ही पवित्र आत्मा पर विस्तार से बात करता है। परन्तु 7:7-25 में आत्मा का उल्लेख न होने का कारण यह है कि पौलुस (अध्याय 8 की तैयारी के रूप में) पहले व्यवस्था के साथ संबंध और शरीर की शक्तिहीनता को दिखाना चाहता है। इस मनुष्य में आत्मा का होना कोई सहायता नहीं है, क्योंकि आत्मा इसलिए नहीं आया कि व्यवस्था का पालन करने में हमारी सहायता करे।

यदि रोमियों 7 में किसी ऐसे व्यक्ति की बात होती, जिसका अभी नया जन्म नहीं हुआ, तो इस अध्याय की सीख अन्त में पहले से समझाई गई शिक्षा की पुनरावृत्ति ही होती; क्योंकि यह बात कि कोई अधर्मी – चाहे धार्मिक हो या नहीं – परमेश्वर को किसी प्रकार प्रसन्न नहीं कर सकता, पत्रों के पहले अध्यायों में ही विस्तार से मिलती है। पौलुस के मन में इससे अधिक है। जिसका वह यहाँ वर्णन करता है, वह शरीर का स्वभाव और (नया जन्म पाए हुए में भी) परमेश्वर को प्रसन्न करने में उसकी असमर्थता है। यह दिखाया जाना है कि ठीक वही छुटकारा पाया हुआ मनुष्य, जो आगे भी व्यवस्था के मार्ग से परमेश्वर को प्रसन्न करना चाहता है, 7:14-25 की इस दुविधा का अनुभव करता है – और तब तक, जब तक वह अपनी ही शक्ति से व्यवस्था का पालन करना चाहता है।

6.5 रोमियों 7: एक आवश्यक अनुभव?

एक मत यह भी है कि रोमियों 7 हर मसीही के लिए व्यावहारिक पवित्रीकरण का सामान्य और आवश्यक अनुभव भी है। इस मत के अनुसार, जब कोई मनुष्य मन फिराता है और आभारी होता है कि उसका परमेश्वर के साथ मेल है, तो कुछ समय बाद उसे रोमियों 7 का अनुभव होता है। वह पाप की शक्ति को अनुभव करता है और उसके सामने टिक नहीं पाता। यह निराशा उसी क्षण समाप्त होती है, जब वह समझता है कि रोमियों 8 का क्या अर्थ है: मसीह ने सब कुछ पूरा कर दिया है। तभी वह पहचानेगा कि विजय की सामर्थ्य उसके अपने भीतर नहीं, बल्कि उसमें है, जो परमेश्वर ने किया है और पवित्र आत्मा के द्वारा करता है।

परन्तु इस क्रम को विश्वास के जीवन के लिए किसी प्रकार का अनिवार्य नियम नहीं माना जा सकता। यह अध्याय पहले उस पर लागू होता है, जो व्यवस्था को जानता है, और ये सामान्यतः यहूदी थे। यहाँ सबसे

पहले यहूदियों (अर्थात् यहूदी मसीहियों) को संबोधित किया गया है। अन्यजाति लोग मूसा की व्यवस्था के अधीन नहीं थे।

इसके अतिरिक्त, जो मसीही रोमियों 6 की शिक्षा (व्यवस्था के अधीन नहीं, परन्तु अनुग्रह के अधीन) और 7:1-6 की शिक्षा (“व्यवस्था के लिए मरे हुए”) को पूरी तरह स्वीकार करता और जीवन में उतारता है, उसके लिए रोमियों 7 की दुर्दशा में पड़ने की कोई आवश्यकता नहीं है। इसके साथ मैं फिर से जोर देता हूँ कि विजयी मसीही जीवन का वर्णन अध्याय 8 में ही है। इसलिए यदि कोई, जिसके लिए व्यवस्था अनजानी है, अध्याय 7 से भी परिचित न हो, तो शायद वह वहाँ वर्णित समस्या को भी न जाने। अतः अध्याय 5 से 8 से मसीही जीवन की किसी सामान्य प्रक्रिया या प्रगति का निष्कर्ष निकालने की कोई आवश्यकता नहीं है।

परन्तु इस अध्याय 7 को इतनी आसानी से टाला नहीं जा सकता, क्योंकि बहुत से मसीहियों का अनुभव अक्सर ठीक वहाँ वर्णित स्थिति के अनुरूप होता है। यदि यह उन पर लागू होता है, जो व्यवस्था को जानते हैं, तो आज हमें कहना होगा कि उसे केवल यहूदी ही नहीं, बल्कि सब मसीही भी जानते हैं, और बहुतों ने उसे अपने जीवन का नियम बना लिया है। आदम से मिले अपने पुराने स्वभाव और मसीह में अपनी उद्धार-स्थिति के विषय में यहूदी और अन्यजाति मूल रूप से भिन्न नहीं हैं। इसलिए वर्णित अनुभव, जब हम आज उसका अनुभव करते हैं, यहूदी मसीहियों का भी हो सकता है और अन्यजाति मसीहियों का भी। बहुत से मसीहियों ने “रोमियों-7 का अनुभव” किया है। बहुत से अब भी उसी में हैं, क्योंकि वे इसे सामान्य मसीही जीवन मानते हैं। परन्तु बहुत से ऐसे भी हैं, जिन्होंने “रोमियों-8 का अनुभव” किया है। प्रेरित रोमियों 8 को सामान्य मसीही जीवन मानता है। सामान्य बात यह होनी चाहिए कि मसीही आत्मा से जीएँ और शरीर के अनुसार न चलें (तुलना करें गलातियों 5:16-26; 1 कुरिन्थियों 3:1-3)। यही वह जीवन है, जिसे परमेश्वर चाहता है और जिसके लिए उसने सब कुछ उपलब्ध कराया है।

परन्तु हम में से बहुतों ने “रोमियों-7 का” यह पीड़ादायक “अनुभव” क्यों किया? क्योंकि अपने मन फिराने के बाद हमने देखा कि पाप कितनी बड़ी शक्ति है। तब हमने उसके विरुद्ध लड़ने का प्रयत्न किया, परन्तु गलत हथियार से और गलत दिशा में देखते हुए। हमने अपनी ही शक्ति लगाई। हमने यह नहीं समझा कि मसीह ने हमारे लिए सब कुछ पूरा कर दिया है और साथ ही अपने आत्मा के द्वारा हमें जयवन्त होने की पूरी सामर्थ्य देता है। इस दृष्टि से हम बहुत आभारी हो सकते हैं कि यह अध्याय हमारे पास है, क्योंकि इसके द्वारा हम अपने मसीही जीवन के इस कठिन दौर को (यदि वह कभी आया हो) परमेश्वर के वचन से समझा भी सकते हैं और उसे उसका सही स्थान भी दे सकते हैं। तब हम दूसरों को, जो इस संकट में जी रहे हैं, निकलने का मार्ग दिखा सकते हैं।

6.6 रोमियों 7 का मनुष्य कौन है?

इस पर बहुत अनुमान लगाए गए हैं कि यहाँ वर्णित व्यक्ति आखिर कौन है। क्या यह सचमुच प्रेरित पौलुस का व्यक्तिगत अनुभव है, जो तो “मैं” के रूप में बात करता है? कुछ बातें इसके पक्ष में हो सकती हैं, कुछ

इसके विरोध में। यह प्रश्न कितना ही रोचक क्यों न हो, हम यहाँ इसकी आगे छानबीन नहीं करेंगे।

मेरा विश्वास है कि पौलुस उदाहरण के रूप में उस बात के बारे में बोलता है, जिसे बहुत से मसीही जानते हैं और जिसका उन्होंने अनुभव किया है। यह इतना अधिक महत्वपूर्ण है कि इसलिए पौलुस स्वयं “मैं” की भूमिका ले लेता है, जो कोई बहुत असामान्य बात भी नहीं है (यह भी देखें गलातियों 2:18; 1 कुरिन्थियों 10:30)।²⁷

6.7 रोमियों 7:1-6: व्यवस्था के लिए मरे हुए

पहले छः पद मौलिक ढंग से व्यवस्था के साथ मसीही के संबंध को समझाते हैं। जैसे अध्याय 6 में पाप के संबंध में, वैसे ही यहाँ भी पहले कानूनी पक्ष का वर्णन किया गया है। हम वास्तव में नहीं मरे, बल्कि मसीह हमारे स्थान पर मरा। यह मृत्यु हमारे नाम ऐसे गिनी जाती है, मानो हम सचमुच मर गए हों – यहाँ इस परिणाम के साथ कि हम व्यवस्था के लिए मर गए हैं।

6.7.1 पद 1: व्यवस्था केवल उन्हीं पर लागू होती है जो जीवित हैं

हे भाइयो, क्या तुम नहीं जानते (क्योंकि मैं उनसे बात कर रहा हूँ जो व्यवस्था को जानते हैं) कि जब तक मनुष्य जीवित रहता है, तब तक व्यवस्था उस पर प्रभुता करती है?

सचमुच ऐसा लगता है कि पौलुस यहाँ मनुष्यों की रीति पर बात करता है और एक बिल्कुल सरल तर्क प्रस्तुत करता है, जो एक महत्वपूर्ण आत्मिक सत्य को समझाने का काम करता है। व्यवस्था, या कहें हर व्यवस्था, केवल जीवित मनुष्यों पर लागू होती है, जो आज्ञापालन या आज्ञा-उल्लंघन के रूप में व्यवस्था के प्रति प्रतिक्रिया कर सकते हैं। एक मरे हुए का किसी भी व्यवस्था से अब कोई लेना-देना ही नहीं रहता।

6.7.2 पद 2-3: व्यवस्था से छूटने का एकमात्र मार्ग

क्योंकि विवाहित स्त्री व्यवस्था के द्वारा पति से तब तक बँधी है जब तक वह जीवित है; परन्तु यदि पति मर जाए, तो वह पति की व्यवस्था से छूट गई। इसलिए यदि पति के जीते जी वह किसी दूसरे पुरुष की हो जाए, तो व्यभिचारिणी कहलाएगी; परन्तु यदि पति मर जाए, तो वह उस व्यवस्था से स्वतंत्र है, यहाँ तक कि यदि किसी दूसरे पुरुष की हो जाए, तो भी व्यभिचारिणी नहीं ठहरती।

27. इस पर एम. आरहेलगर (M. Arhelger) का एक उद्धरण, जो एक यूनानी व्याकरण का हवाला देते हैं: “किसी सर्वमान्य बात को सजीव ढंग से किसी एक व्यक्ति के उदाहरण से, मानो वर्तमान में घटती हुई सोचकर, प्रस्तुत करने के लिए बोलचाल की भाषा उत्तम पुरुष और मध्यम पुरुष एकवचन को चुनती है” (F. Blass, A. Debrunner, F. Rehkopf: *Grammatik des neutestamentlichen Griechisch*, Göttingen 1979, पृ. 231, § 281 पर)।

एक उदाहरण इस कानूनी स्थिति को गहराई से समझाने और एक और पहलू जोड़ने के लिए है। यदि कोई व्यवस्था से बचने का प्रयत्न करे (जो तो केवल मृत्यु के द्वारा ही हो सकता है), तो वह लाक्षणिक अर्थ में व्यभिचार करेगा। मृत्यु के सिवा व्यवस्था की पकड़ से बचने की कोई संभावना नहीं है। यही विवाह की व्यवस्था का उदाहरण है। विवाह की इस व्यवस्था ने पुरुष और स्त्री को कानूनी रूप से जीवन भर के लिए अटूट रूप से जोड़ दिया है, जैसा कि आरम्भ से परमेश्वर का अभिप्राय था। विवाह की व्यवस्था दम्पति पर तब लागू नहीं रहती, जब एक साथी मर जाता है, यहाँ इस उदाहरण में पति। परन्तु यदि वैध पति के जीवित रहते स्त्री किसी दूसरे पुरुष के साथ रहे, तो वह व्यभिचार करती है। ठीक यही स्थिति उसकी है, जो व्यवस्था के अधीन है: मृत्यु के सिवा न कोई छूटना है, न कोई छुटकारा। तभी एक नया विवाह-संबंध हो सकता है। यदि कोई मृत्यु के सिवा किसी और मार्ग से व्यवस्था से बचना चाहे, तो वह और भी अधिक अपराधी होगा और लाक्षणिक अर्थ में व्यभिचार करेगा।

इस चित्र में पति व्यवस्था का प्रतीक है, जबकि पत्नी उन मसीहियों का प्रतिनिधित्व करती है, जिनसे पौलुस यहाँ बात कर रहा है। तो हम व्यवस्था से कैसे छुटकारा पा सकते हैं?

6.7.3 पद 4: वह, जिसके अब हम हैं – मसीह

इसलिए हे मेरे भाइयो, तुम भी मसीह की देह के द्वारा व्यवस्था के लिए मार डाले गए, कि उस दूसरे के हो जाओ, जो मरे हुआँ में से जिलाया गया, ताकि हम परमेश्वर के लिए फल लाएँ।

क्योंकि व्यवस्था से छुटकारा केवल मृत्यु के द्वारा ही है, इसलिए यही बात हम पर भी लागू होती है। अब पौलुस यीशु मसीह की उस मृत्यु को, जिसका वर्णन वह अध्याय 6 में पाप के संबंध में कर चुका है, इसी प्रकार व्यवस्था के साथ संबंध पर लागू करता है।²⁸

इस चित्र के पात्र बदल जाते हैं, और स्थिति इस प्रकार बनती है: विश्वासी की तुलना पत्नी से की जाती है। पति व्यवस्था का प्रतीक है। जैसे ही पति मरता है, व्यवस्था अमान्य हो जाती है।

परन्तु व्यवस्था नहीं मरी (और पाप भी नहीं; तुलना करें अध्याय 6), बल्कि हम मरे हैं। परन्तु यह मृत्यु किसी दूसरे ने अपने ऊपर ले ली। इसी चित्र में बने रहें, तो नया पति मसीह है। वह हमारे स्थान पर मरा।

“मार डाले गए” शब्द हमें उसके प्राणदण्ड की याद दिलाता है। पौलुस का यही अभिप्राय है, जब वह कहता है कि वह व्यवस्था के द्वारा व्यवस्था के लिए मर गया (गलातियों 2:19-20)। व्यवस्था का उल्लंघन करनेवाले को मरना ही होगा। पौलुस ने कभी व्यवस्था का उल्लंघन किया था, परन्तु पौलुस मर गया – मसीह में, जिसने व्यवस्था के उल्लंघन के इस कानूनी परिणाम को अपने ऊपर ले लिया। परन्तु उसके साथ मर जाने में ही साथ-साथ व्यवस्था के प्रभाव-क्षेत्र से बच निकलने का मार्ग भी था।

28. गलातियों 6:14 में हमारे साथ मर जाने का तीसरा परिणाम मिलता है: हम संसार के लिए मर गए हैं।

यीशु मसीह की मृत्यु उसकी मृत्यु थी, जिसे हमारे स्थान पर पाप ठहराया गया। उसकी देह का उल्लेख हमें उसके प्राणदण्ड की और क्रूस पर परमेश्वर के न्याय की पूरी भयानकता की याद दिलाता है। यह एक भयावह मृत्यु थी, जिसमें हमारा पुराना मनुष्य उसके साथ क्रूस पर चढ़ाया गया।

यहाँ भी एक परिवर्तन की बात है। व्यवस्था के साथ संबंध तोड़ दिया जाता है, और एक नया संबंध बनाया जाता है, जिसकी तुलना यहाँ विवाह की वाचा से भी की गई है। हम जी उठे हुए से जुड़े हैं; अब हम एक ऐसे मनुष्य के हैं, जो मरा और जी उठा। जो स्त्री विवाह करती है, वह पति का नाम और पद ग्रहण करती है; वैसे ही हम भी, क्योंकि अब इस संबंध के द्वारा हम “मसीह में” हैं।

6.7.4 पद 5: व्यवस्था धार्मिकता को नहीं, बल्कि पापों को बढ़ावा देती है

क्योंकि जब हम शरीर में थे, तो पापों की अभिलाषाएँ, जो व्यवस्था के द्वारा थीं, हमारे अंगों में काम करती थीं, ताकि मृत्यु के लिए फल लाएँ।

मन फिराने से पहले के हमारे अतीत के बारे में पौलुस एक नया शब्द प्रस्तुत करता है। हम “शरीर में” थे (देखें 8:8-9)। इससे हमारी भौतिक देह नहीं, बल्कि एक दशा अभिप्रेत है: हम आदम की वंश-रेखा में थे। इसलिए शरीर का संबंध पाप से होना ही है: “शरीर में” “पापों की अभिलाषाएँ काम करती थीं”। यह शरीर उस मानवीय अस्तित्व का वर्णन करता है, जिसमें पाप और उसकी अभिलाषाएँ भरी हुई हैं। यहाँ हमारे भीतर के शरीर की बात नहीं, बल्कि **शरीर में होने** की बात है। आदम के वंशज के रूप में इस दशा का जीवन-क्षेत्र केवल पापी शरीर में है, और वह पाप के सिवा कुछ और कर भी नहीं सकती। इसलिए प्रभु यीशु, जब वह नए जन्म की आवश्यकता के बारे में बोलता है, कहता है: “जो शरीर से जन्मा है, वह शरीर है; और जो आत्मा से जन्मा है, वह आत्मा है” (यूहन्ना 3:6)। यद्यपि इस स्थान पर नए जन्म का विषय नहीं उठाया गया है, फिर भी सिद्धांत रूप में बात वही है: परमेश्वर के लिए फल शरीर से नहीं आ सकता। इसलिए एक नया जन्म आवश्यक है।

व्यवस्था ने पाप को “बहुत बढ़ा दिया” (5:20)। उसने पाप को केवल दिखाया ही नहीं, बल्कि पाप को बढ़ाया। इससे स्पष्ट हो जाता है कि जब कोई मसीही अपने आप को व्यवस्था के अधीन कर देता है, तो क्या होता है। यह इस अध्याय में आगे देखा जाएगा, जहाँ ठीक इसी अनुभव का वर्णन है।

6.7.5 पद 6: व्यवस्था से परे एक नई आराधना

परन्तु अब हम व्यवस्था से छूट गए हैं (उससे ऊपर उठा लिए गए हैं), क्योंकि जिसके बन्धन में हम थे, उसके लिए हम मर गए, ताकि हम आत्मा की नई रीति से सेवा करें, न कि अक्षर की पुरानी रीति से।

व्यवस्था ने किसी को न छोड़ा, न दोषमुक्त ठहराया; उसने सदा अपना (न्यायपूर्ण) दोष का निर्णय सुनाया। परन्तु क्योंकि हम (अर्थात् हमारा पुराना मनुष्य) मर गए हैं, इसलिए मानो एक “नए विवाह-संबंध” में बँधने का मार्ग खुला है, जो फिर कभी मृत्यु से समाप्त नहीं होगा।

“अक्षर” (शब्दशः जो लिखा हुआ है) वह व्यवस्था है, जो आज्ञापालन की माँग करती है, परन्तु उसे पूरा करने के लिए आवश्यक सामर्थ्य नहीं देती। परन्तु अब हम व्यवस्था से “ऊपर उठा लिए गए हैं”, हम पार पहुँचा दिए गए हैं। अब हम मसीह यीशु में हैं, उसमें हमारे पास जीवन है और हमारे भीतर पवित्र आत्मा है। इस आत्मा के प्रभाव, सामर्थ्य और बोलने के बारे में पौलुस बाद में लिखेगा। पद 6 में इस अध्याय में एकमात्र बार आत्मा का नाम आता है, अध्याय 8 से बिल्कुल भिन्न।

जैसे अध्याय 6 में **जीवन की नवीनता** की बात है, वैसे ही यहाँ **आत्मा की नई रीति** की (दूसरा अनुवाद: “वह नई बात, [अर्थात्] आत्मा”)। पुरानी बातें बीत गई हैं, नई बातें हो गई हैं। हमारे पास एक नया जीवन है, और हमारे पास परमेश्वर का आत्मा है।

6.8 रोमियों 7:7-14: सिद्ध व्यवस्था

जब व्यवस्था के साथ मसीही का संबंध स्पष्ट रूप से निश्चित हो गया है (व्यवस्था के लिए मरे हुए, ताकि किसी दूसरे के, अर्थात् मसीह के, हो जाएँ), तो वास्तव में कोई सीधे अध्याय 8:1 पर भी जा सकता था। परन्तु अब क्या आता है? अब व्यवस्था का पक्ष-समर्थन आता है। यह यहूदी मसीही को संबोधित है, परन्तु हर उस व्यक्ति को भी, जिसने या तो व्यवस्था के साथ विश्वासी का संबंध नहीं समझा है (देखें 7:1-6), या जो सोचता है कि वह फिर भी उसकी सहायता से लक्ष्य तक पहुँचने का प्रयत्न कर सकता है। वह व्यवस्था के साथ जुड़ जाता है – घातक परिणामों के साथ। अब उसके अनुभव का वर्णन किया जाता है।

यदि पौलुस के द्वारा अभी विवाह के संबंध में प्रयोग किए गए उदाहरण को इस मसीही पर लागू करें, तो कहा जा सकता है: वह एक प्रकार से व्यभिचार करता है; वह मानो एक नए पति, अर्थात् मसीह, से जुड़ा हुआ है, जबकि वह व्यवस्था के साथ संबंध जोड़ लेता है (गलातियों 2:18)।

व्यवस्था मसीही के लिए जीवन का नियम नहीं है (या: जीवन का तत्व नहीं, जैसे मछली के लिए भूमि नहीं है)। यह तब भी लागू होता है, जब वह – और इसके सिवा हो भी नहीं सकता – मसीही होने के नाते स्वाभाविक रूप से परमेश्वर की व्यवस्था की नैतिक आज्ञाओं को पूरा करता है (8:4)। परन्तु मूसा की व्यवस्था को पूरा करना उसके जीवन का कार्य नहीं है। मसीही मूसा के प्रभुत्व के अधीन नहीं है। अब बात यह है कि स्वयं मसीह को जीवन की विषय-वस्तु और जीवन का नियम माना जाए, मसीह से जुड़े रहें और उसके आत्मा की सामर्थ्य पाएँ। जीवन की नवीनता और “आत्मा की नई रीति” उन निषेधों से नहीं बनी, जिनसे व्यवस्था की पहचान होती थी। स्वयं मसीह हमारे हृदयों में आकार लेता है और आत्मा के फल के द्वारा दिखाई देता है। मसीही होना आज्ञाओं के पालन में नहीं, बल्कि भीतर से होनेवाले परिवर्तन में है – मसीह की समानता की ओर। बात आज्ञाओं की नहीं, बल्कि एक व्यक्ति की है। वही लक्ष्य है।

परन्तु इससे हम कदापि व्यवस्थाहीन नहीं हो गए: हम यीशु मसीह की सेवा करते हैं। हम दासों की तरह, या कहें स्वामी की सम्पत्ति बने सेवकों की तरह, उसकी सेवा करते हैं – उसकी, जो हमारा प्रभु और स्वामी है और जिसकी वैध सम्पत्ति हम हैं। हम उसकी आज्ञाओं का पालन करते हैं; उनमें “मसीह की व्यवस्था” है (गलातियों 6:2; तुलना करें 1 कुरिन्थियों 9:21)। हम नियम के अनुसार मसीह के अधीन हैं।

इस अध्याय में स्पष्ट होता है कि व्यवस्था (ठीक इसलिए कि उसमें अधिकतर निषेध हैं) उन्हें संबोधित नहीं करती, जो मसीह में धर्मी ठहराए गए हैं। इसलिए पौलुस कहता है कि व्यवस्था धर्मी के लिए नहीं, बल्कि अधर्मियों के लिए ठहराई गई है (1 तीमुथियुस 1:9), ताकि उनका पाप प्रकट करे और उन्हें मसीह के पास ले आए।

6.8.1 पद 7: पाप की पहचान व्यवस्था के द्वारा होती है

तो हम क्या कहें? क्या व्यवस्था पाप है? कदापि नहीं! परन्तु व्यवस्था के बिना मैं पाप को नहीं पहचानता। क्योंकि यदि व्यवस्था न कहती: “लालच न करना”, तो मैं लालच को भी न जानता।²⁹

यह प्रश्न तो जैसे अपने आप सामने आ खड़ा होता है! यदि व्यवस्था ऐसी बात है, जिससे प्रभु यीशु की क्रूस की मृत्यु से कम किसी बात के द्वारा छुटकारा नहीं मिलता, तो व्यवस्था में कुछ गड़बड़ होनी चाहिए। फिर से पौलुस का दृढ़ “नहीं” आता है। यदि कुछ गड़बड़ है, तो उसका कारण मनुष्य में है।

यदि हम यह सीख चुके हैं कि हम अब व्यवस्था के अधीन नहीं हैं, और यदि साथ ही इस व्यवस्था में सब कुछ ठीक है, तो अब पौलुस समझाएगा कि इस व्यवस्था की असली बात क्या है।

व्यवस्था ने प्रकट कर दिया है कि पाप क्या है। व्यवस्था के आधार पर ठीक-ठीक कहा जा सकता था कि पाप, अर्थात् उल्लंघन, किस बात में था। इसके द्वारा मनुष्य को जानना था कि पाप क्या है। इस स्थिति में वह एक यहूदी है, परन्तु अन्ततः हर वह व्यक्ति अभिप्रेत है, जिसका इस व्यवस्था से सम्पर्क हुआ है।

पौलुस अपने विचार को आगे बढ़ाने के लिए दस आज्ञाओं में से अन्तिम आज्ञा को उदाहरण के रूप में लेता है। शायद लालच के निषेध का उल्लंघन सबसे अधिक फैला हुआ पाप है – एक छिपा हुआ पाप, जिसे हर सुननेवाला या पढ़नेवाला अपने जीवन से जानता है। हमें ऐसी किसी वस्तु का लालच नहीं करना चाहिए, जो दूसरे की है। यह ऐसा पाप है, जो पहले केवल मेरे हृदय में होता है और आवश्यक नहीं कि किसी संबंधित काम के रूप में पूरा हो। इस अध्याय में तो मोटे-मोटे पापकर्मों की बात नहीं है। पाप की शक्ति पहले भीतर तीव्रता से अनुभव की जाती है, न कि केवल कामों से पहचानी जाती है।

29. निर्गमन 20:17; तुलना करें व्यवस्थाविवरण 5:21।

आइए, हम इस पद का पालन इस अर्थ में भी करें कि हम व्यवस्था का, परमेश्वर के मापदंड का, प्रचार करें, ताकि खोए हुएों में पाप की पहचान उत्पन्न हो। इस पहचान के बिना वे एक उद्धारकर्ता की आवश्यकता को नहीं समझेंगे।

6.8.2 पद 8: व्यवस्था पाप को बढ़ावा देती है

परन्तु पाप ने आज्ञा के द्वारा अवसर पाकर मुझ में सब प्रकार का लालच उत्पन्न किया; क्योंकि व्यवस्था के बिना पाप मरा हुआ है।

जब आज्ञा मनुष्य से मिलती है, तो तुरन्त आज्ञापालन नहीं होता, जो कि अपेक्षित प्रतिक्रिया होती। नहीं, पाप एक हठीली शक्ति के रूप में प्रकट होता है। पाप ईश्वरीय आज्ञा को ठीक वही करने का अवसर बना लेता है, जिसका व्यवस्था निषेध करती है। बात केवल इतनी नहीं कि पाप किसी सोए हुए कुत्ते की तरह जगा दिया जाता है। पाप का सबसे महत्वपूर्ण गुण यह है कि वह परमेश्वर की आज्ञा के विरुद्ध विद्रोह करता है।

लालच केवल किसी एक ही वस्तु की ओर नहीं होता। उसकी दृष्टि हर उस वस्तु पर होती है, जो चाहने योग्य है; इसमें वह बहुमुखी है और एक शक्तिशाली चुम्बक के समान है, जो सब कुछ अपनी ओर खींचने का प्रयत्न करता है।

अध्याय 5 में पहले ही स्पष्ट रूप से दिखाया जा चुका है कि व्यवस्था के बिना भी (और व्यवस्था से स्वतंत्र रूप से भी) पाप था। केवल वह अपने वास्तविक रूप में, परमेश्वर-विरोधी सिद्धांत के रूप में, प्रकट नहीं था।

व्यवस्था के बिना पाप “मरा हुआ” है; व्यवस्था के बिना किसी पर पाप का दोष नहीं लगाया जा सकता।

तो परमेश्वर ने व्यवस्था क्यों दी, यदि व्यवस्था के बिना पाप मरा हुआ था? क्या वह व्यवस्था के बिना सदा के लिए मरा हुआ न रहता? व्यवस्था बीच में आ गई, ताकि पाप बहुत बढ़ जाए (तुलना करें 5:20)। पाप की बीमारी, जिसने आदम से हर मनुष्य को जकड़ लिया है, मानो व्यवस्था से चंगी नहीं की जा सकी; उसकी केवल पहचान की गई। गलातियों को पौलुस लिखता है कि व्यवस्था “मसीह तक पहुँचानेवाला शिक्षक” (गलातियों 3:24; ER, जर्मन बाइबल अनुवाद) थी; अर्थात् व्यवस्था ने यीशु के बलिदान की आवश्यकता दिखाई (गलातियों 3:23-26)। इसी अर्थ में हमें अपने सुसमाचार-प्रचार में भी उसका प्रयोग करना चाहिए।

6.8.3 पद 9-11: व्यवस्था से सामना मृत्यु तक ले जाता है

मैं तो व्यवस्था के बिना पहले जीवित था; परन्तु जब आज्ञा आई, तो पाप जी उठा, और मैं मर गया। और वही आज्ञा, जो जीवन के लिए दी गई थी, मेरे लिए मृत्यु का कारण ठहरी। क्योंकि

पाप ने आज्ञा के द्वारा अवसर पाकर मुझे धोखा दिया, और उसी के द्वारा मुझे मार डाला।

पौलुस उदाहरण के रूप में (अर्थात् आवश्यक नहीं कि किसी ऐसी बात के रूप में, जिसका उसने स्वयं अनुभव किया हो, क्योंकि एक फरीसी के रूप में वह शायद कभी “व्यवस्था के बिना” नहीं जीया) व्यवस्था दिए जाने की घटना को फिर से प्रस्तुत करता है: “... परन्तु जब आज्ञा आई”।

व्यवस्था के बिना मनुष्य पाप के प्रति सचेत नहीं होता, क्योंकि वह उसकी पहचान नहीं कर सकता। जब उसे व्यवस्था दी जाती है, तो पाप उसके सामने अधिक से अधिक प्रकट होते जाते हैं: इसी अर्थ में “पाप जी उठा”। इसके साथ यह भी है कि कुल मिलाकर और भी अधिक पाप किए जाते हैं, क्योंकि व्यवस्था के द्वारा पाप भड़काया जाता है, और वह अपने स्वभाव से ही व्यवस्था के विरुद्ध काम करता है।

तो ऐसी स्थितियाँ होती हैं, जिनमें पाप जी उठता है, जबकि विश्वासी यह बिल्कुल नहीं चाहता (क्योंकि वह तो व्यवस्था का पालन करना चाहता है)। तब उसे ऐसा लगता है, मानो वह मर रहा हो। वह उस वचन को जानता है, जो भावार्थ में कहता है: “यह करो, तो तुम जीवित रहोगे!” परन्तु बिना किसी आशा के वह अपने लिए व्यवस्था का निर्णय स्वीकार कर लेता है और “मर जाता है”। यह मरना यीशु मसीह की वह मृत्यु नहीं है, जो पाप और व्यवस्था से छुड़ाती है (और न मसीह के साथ मरना है); यह वह मृत्यु है, जिसमें व्यवस्था के सामने उसकी पूरी असमर्थता और निर्बलता समाई हुई है।

असमर्थता के साथ-साथ व्यवस्था के द्वारा मृत्यु भी अभिप्रेत हो सकती है, जैसा पौलुस कहता है: वह व्यवस्था के द्वारा (व्यवस्था के लिए) मर गया। पाप मार डालता है। परमेश्वर की आज्ञा केवल यही नहीं दिखाती कि मैं कितनी विद्रोही प्रतिक्रिया करता हूँ, बल्कि यह भी कि मेरे विद्रोह का परिणाम मृत्यु है – जिससे बचा नहीं जा सकता। इस दृष्टि से पाप मार डालता है।

पाप एक शत्रु है, जिसने व्यवस्था का अपने लाभ के लिए उपयोग किया। पाप ने कैसे धोखा दिया? क्या उसने मसीही को धोखा देकर इस बात के लिए बहकाया कि वह व्यवस्था को जीवन के नियम के रूप में अपना ध्यान-केन्द्र बनाए, यह सोचकर कि अब मसीही होने के नाते वह उसे पूरा कर सकता है? इस अध्याय के कुछ शब्द हमें अदन की वाटिका की स्थिति की याद दिलाते हैं, जहाँ वह भी था, जिसने धोखा दिया – जो आरम्भ से झूठा है।

व्यवस्था ने नहीं मारा, पाप ने मारा। इस अनुच्छेद में बात परमेश्वर की व्यवस्था का पक्ष-समर्थन करने की है। वह जीवन के लिए दी गई थी, परन्तु मनुष्य को अपनी हार स्वीकार करनी पड़ती है: वह व्यवस्था का पालन उस सीमा तक नहीं कर सकता कि उसके द्वारा परमेश्वर के सामने धर्मी ठहरे।

बाइबल में व्यवस्था केवल इसी “नकारात्मक” प्रकाश में नहीं दिखती। व्यवस्था, जैसा पुराने नियम में अक्सर देखा जा सकता है (केवल भजन संहिता 19 और 119 के बारे में सोचिए), इस्राएल को दिया गया एक विशेष वरदान थी। व्यवस्था एक बड़ी आशीष थी। रोमियों 7 में पाप की पहचान कराने के व्यवस्था के उस विशेष कार्य पर ज़ोर दिया गया है, जो मनुष्य की विफलता और असमर्थता को उभारता है।

“नकारात्मक” प्रकाश से यही अभिप्राय है: व्यवस्था अच्छी है, परन्तु सहायता नहीं करती, क्योंकि मनुष्य अच्छा नहीं है।

यहाँ उठाए गए प्रश्न इस रूप में पुराने नियम में शायद ही मिलते हैं। मसीहियों पर व्यवस्था लादना उन यहूदीवादियों का बहकावा था, जो पौलुस के पीछे-पीछे यात्रा करते थे, ताकि उसके द्वारा स्थापित कलीसियाओं को उलझन में डालें।

जब अनुग्रह का सुसमाचार फैलने लगा, तभी पुराने और नए के बीच, मूसा की व्यवस्था और सुसमाचार के अनुग्रह के बीच, यह संघर्ष आरम्भ हुआ। इसी कारण विशेष रूप से पौलुस ने, जो व्यवस्था का प्रमाणित ज्ञाता था, रोमियों, कुरिन्थियों, गलातियों और कुलुस्सियों को लिखी अपनी पत्रियों में उद्धार के मार्ग और मसीही के जीवन-नियम के रूप में मूसा की व्यवस्था के “विरुद्ध” इतनी स्पष्टता से अपना पक्ष रखा।

6.8.4 पद 12: फिर भी व्यवस्था अच्छी है

इसलिए व्यवस्था पवित्र है, और आज्ञा पवित्र और धर्मी और अच्छी है।

समस्या व्यवस्था नहीं, बल्कि मनुष्य में बसा पाप है। व्यवस्था में वे सब गुण हैं, जो व्यवस्था देनेवाले के रूप में स्वयं परमेश्वर में हैं।

यह सारांश स्पष्ट कर देता है कि हमारे व्यवस्था के लिए मर जाने और अब से अनुग्रह के अधीन होने का कारण क्या है: वह व्यवस्था की गुणवत्ता नहीं, बल्कि उसका पालन करने में मनुष्य की असमर्थता है।

6.8.5 पद 13: एक बार फिर – व्यवस्था का कार्य

तो क्या वह जो अच्छी थी, मेरे लिए मृत्यु ठहरी? कदापि नहीं! परन्तु पाप,³⁰ ताकि वह पाप के रूप में प्रकट हो, उस अच्छी वस्तु के द्वारा मेरे लिए मृत्यु उत्पन्न करनेवाला हुआ, ताकि आज्ञा के द्वारा पाप अत्यन्त ही पापमय ठहरे।

फिर भी यह प्रश्न उठता है: परमेश्वर की व्यवस्था, अर्थात् परमेश्वर की इच्छा, मेरी मृत्यु का अर्थ कैसे रख सकती है? – उत्तर: व्यवस्था मृत्यु उत्पन्न नहीं करती; नहीं, पाप उसे उत्पन्न करता है। अच्छी आज्ञा के द्वारा पाप दबाया और ढाँपा नहीं जाता, बल्कि उघाड़ दिया जाता है।

क्या पाप और भी अधिक पापमय हो सकता है? – पाप को जितना वह पहले से है, उससे बुरा नहीं बनाया जा सकता; परन्तु यहाँ प्रश्न यह है कि हम पाप को कैसे देखते और आँकते हैं। पाप को हल्का करके

30. इस पद के शब्द, जो इस स्थान पर कई जर्मन बाइबल अनुवादों में (Elb और ER में भी) पूरा वाक्य नहीं बनाते, इस प्रकार समझे जाने चाहिए: “तो क्या वह जो अच्छी थी, मेरे लिए मृत्यु ठहरी? कदापि नहीं! बल्कि वह पाप था ...” (तुलना करें उदाहरण के लिए Schlachter, Schl 2000 और Menge)।

आँका जा सकता है, अपने विवेक को सुन्न किया जा सकता है। परन्तु परमेश्वर की पवित्र व्यवस्था मुझे पाप को सही ढंग से देखने और आँकने की क्षमता लौटा देती है। व्यवस्था का उद्देश्य यह है कि पाप को वैसे देखा जाए, जैसे परमेश्वर उसे देखता है, ताकि वह मुझे उद्धारकर्ता की ओर धकेल दे।

6.9 रोमियों 7:14-25: व्यवस्था के अधीन एक मसीही के अनुभव

6.9.1 पद 14-15: अच्छी इच्छा और निर्बल शरीर

क्योंकि हम जानते हैं कि व्यवस्था तो आत्मिक है, परन्तु मैं शारीरिक हूँ, पाप के हाथ बिका हुआ; क्योंकि जो मैं करता हूँ, उसे मैं नहीं पहचानता (स्वीकार नहीं करता); क्योंकि जो मैं चाहता हूँ, वह नहीं करता, परन्तु जिससे मुझे घृणा है, वही करता हूँ।

अब प्रकाश व्यवस्था से हटकर मनुष्य पर पड़ता है। व्यवस्था आत्मिक है: वह परमेश्वर की ओर से आती है। परन्तु मनुष्य शारीरिक है: मनुष्य का अस्तित्व, या कहें उसका स्वभाव, पापी है। वह जानता है कि वह पाप के हाथ बिका हुआ है, अन्धेरे कुएँ में यूसुफ़ के समान अकेला छोड़ा हुआ। मनुष्य एक ऐसे विरोधाभास में फँसा है, जिसकी उसके पास कोई व्याख्या नहीं है। वह नहीं समझता कि सब कुछ उसकी इच्छा से भिन्न क्यों होता है। उसने तो परमेश्वर और उसकी व्यवस्था के पक्ष में निर्णय लिया था। तो अब यह क्यों: जो वह चाहता है (एक ऐसे व्यक्ति के रूप में, जो परमेश्वर की सेवा करना चाहता है), उसे करने में असमर्थ होकर वह उसके उलट करने को विवश है। ठीक यही उस पाप की शक्ति और तानाशाही को दिखाता है, जिसके हाथ वह “बिका हुआ” है।

6.9.2 पद 16: व्यवस्था से सहमति

और यदि जो मैं नहीं चाहता वही करता हूँ, तो मैं मान लेता हूँ कि व्यवस्था भली (उत्तम) है।

इस स्थिति में मनुष्य को यह भी मानना पड़ता है कि व्यवस्था उत्तम, आत्मिक और अच्छी है। अपने विषय में मनुष्य की समझ कदम-दर-कदम बढ़ती है। मनुष्य व्यवस्था को, और इस प्रकार उसके देनेवाले को, सही ठहराता है। अब वह बुराई की जड़ को ढूँढ़ निकालने की स्थिति में है। वह उसे कहीं और नहीं, बल्कि अपने ही भीतर पाएगा:

6.9.3 पद 17-21: मुझ में बसा हुआ पाप

परन्तु अब उसे मैं नहीं करता, बल्कि मुझ में बसा हुआ पाप करता है। क्योंकि मैं जानता हूँ कि मुझ में, अर्थात् मेरे शरीर में, कोई अच्छी वस्तु वास नहीं करती; इच्छा तो मुझ में है, परन्तु जो भला है, उसे करना मैं नहीं पाता (स्वीकार नहीं करता)। क्योंकि जिस अच्छे काम की मैं इच्छा

करता हूँ, वह नहीं करता, परन्तु जिस बुराई की इच्छा नहीं करता, वही करता हूँ। परन्तु यदि मैं वही करता हूँ जिसकी इच्छा नहीं करता, तो उसे मैं नहीं करता, बल्कि मुझ में बसा हुआ पाप करता है। तो मैं अपने लिए, जो भलाई करना चाहता है, यह व्यवस्था पाता हूँ कि बुराई मेरे पास रहती है।

बुराई की जड़ ढूँढ़ ली गई है: वह पाप, जो मनुष्य में बसा हुआ है। अध्याय 5:12 में पौलुस वर्णन करता है कि आदम के द्वारा पाप संसार में कैसे आया। यहाँ उसका वर्णन उस सिद्धांत के रूप में किया गया है, जो उस दिन से मनुष्य में घर किए हुए है। पाप मेरे आसपास के संसार में कोई अमूर्त सिद्धांत नहीं है, जिससे बचा जा सके (उदाहरण के लिए किसी मठ में)। पाप ने मनुष्य में, उसके हृदय में, रहने का अधिकार प्राप्त कर लिया है। पाप स्वयं बुराई करता है। यहाँ रोमियों 7 में वर्णित मनुष्य ने स्रोत ढूँढ़ लिया है। परन्तु वह अपने पाप की ज़िम्मेदारी टालता नहीं, मानो उसका इससे कोई संबंध न हो। पाप ज़िम्मेदार नहीं है; मनुष्य स्वयं अपने करने और न करने के लिए ज़िम्मेदार है। उसमें पाप बसा है, और इसलिए उसके शरीर में कुछ भी “अच्छा” (ER) नहीं मिलता। अपने विषय में यह समझ व्यवस्था के द्वारा आई है।

अच्छा है व्यवस्था का पालन करना। यहाँ सिद्धांत रूप में परमेश्वर की व्यवस्था की, अर्थात् मूसा की व्यवस्था की, बात है। व्यवस्था का यही प्रभाव (देखें 7:8-9 में बिना उपपद के “व्यवस्था” की अभिव्यक्ति) हर उस नियम का होता है, जिसे मैं व्यवस्था की तरह स्वयं अपने ऊपर लाद लेता हूँ। इस अध्याय में एक ऐसे नया जन्म पाए हुए मनुष्य की बात है, जो परमेश्वर को प्रसन्न करने के लिए अपने ऊपर अच्छे और सही नियम लादता है। परन्तु भूल यह है कि वह अपनी ही शक्ति से इन नियमों (परमेश्वर की व्यवस्था) को पूरा करने का प्रयत्न करता है, और इस प्रकार अपने भीतर के पाप को चुनौती देता है, बिना इस संबंध को समझे। जो अपने आप को “करना ही पड़ेगा” के सिद्धांत³¹ के अधीन कर देता है, वह मसीह पर और आत्मा की सामर्थ्य पर दृष्टि किए बिना केवल अपने आप पर और अपने नियमों पर दृष्टि करता है।

6.9.4 पद 22-23: दो व्यवस्थाएँ और उनका प्रभाव

क्योंकि मैं भीतरी मनुष्य के अनुसार परमेश्वर की व्यवस्था से प्रसन्न रहता हूँ; परन्तु मुझे अपने अंगों में दूसरी व्यवस्था दिखाई देती है, जो मेरी बुद्धि की व्यवस्था से लड़ती है और मुझे पाप की व्यवस्था के बन्धन में डालती है, जो मेरे अंगों में है।

“आत्म-निदान” अब केवल भीतर बसे हुए उस पाप की पहचान तक सीमित नहीं रहता, जो केवल उपस्थित ही नहीं, बल्कि नियम के अनुसार अपनी बात मनवाता भी है। क्योंकि जैसे बुराई का एक स्रोत है, वैसे ही इस बात का भी कोई कारण होना चाहिए कि संबंधित व्यक्ति को उसमें आनन्द क्यों आता है, जो परमेश्वर की ओर से आता है। इसका कारण “भीतरी मनुष्य” का अस्तित्व है। यह पाप के सामने खड़ा है और तुलना

31. H. P. Medema, *Der Brief an die Römer*, पृ. 111।

योग्य स्थानों (इफिसियों 3:16; 2 कुरिन्थियों 4:16) के अनुरूप, जहाँ भी “भीतरी मनुष्य” की बात है, विश्वासी के नए जीवन का प्रतिरूप है। भीतरी मनुष्य केवल बाहरी मनुष्य, अर्थात् देह, के विपरीत ही नहीं है। “भीतरी मनुष्य” से केवल प्राण या आत्मा अभिप्रेत नहीं है, क्योंकि ये तो हर जन्म लेनेवाले मनुष्य में होते हैं। भीतरी मनुष्य को पहले मनुष्य-सम्बन्धी दृष्टिकोण (मानवशास्त्रीय रूप से) से नहीं समझना है, जो मनुष्य के भीतरी पहलू का वर्णन करता है।³² बल्कि भीतरी मनुष्य को उद्धार की दृष्टि से (उद्धार-शास्त्रीय रूप से) समझना है। उद्धार ने अभी हमारी देह को नहीं पकड़ा है; हमें पहले आत्मिक जीवन दिया गया, जो बाहर से अभी दिखाई नहीं देता। देह की पूर्णता पुनरुत्थान या रूपान्तरण में ही होगी। यहाँ मनुष्य में कुछ नया आरम्भ हुआ है, जो परमेश्वर को खोजता है। उसका नया जन्म हुआ है।

भीतरी मनुष्य के पास एक “बुद्धि” (यूनानी *nous*, अर्थात् सोचने की बुद्धि) है। यह पवित्र आत्मा के द्वारा नई की गई सोच है। इस सोचने की बुद्धि के लिए यह एक स्वाभाविक नियम है कि वह वही चाहे, जो परमेश्वर चाहता है। परन्तु पाप, जो यहाँ मनुष्य में एक विजयी शत्रु के रूप में है, अधिक बलवान है। वह भी अपने साथ एक “प्राकृतिक नियम” लाया है। पाप पाप करता है, यही उसकी व्यवस्था (उसका नियम) है। एक निराश मनुष्य इसे अनुभव करता है, जैसा अगला पद कहता है:

6.9.5 पद 24: निराशा

मैं कैसा अभाग मनुष्य हूँ! मुझे इस मृत्यु की देह से कौन छुड़ाएगा?

मनुष्य का आत्म-निदान समाप्त होता है, और यह पीड़ा भरी पुकार निकलती है। वह केवल अपनी देह को छोड़ देना नहीं चाहता, मानो प्राचीन यूनानियों का समाधान पाप की समस्या का उत्तर हो। उनका समाधान यह था कि देह को सारी बुराई का कारण माना जाए और आत्मा में स्वतंत्रता पाई जाए। “मृत्यु की देह” पाप के प्रभाव के अधीन मानवीय देह है – उस पाप के, जो उसके पूरे मानवीय अस्तित्व में अधिकार जमाते हुए फैल जाता है।

मृत्यु की देह, अध्याय 6 की पाप की देह के समान, वास्तव में मनुष्य की भौतिक देह ही है। पाप के कारण वह मृत्यु के लिए ठहराई गई है (रोमियों 8:10-13)। यूनानी समाधान से अन्तर यह है कि मसीही देह को (यद्यपि वह मृत्यु के लिए ठहराई गई है) स्वीकार करता है और प्रभु को उपलब्ध कराता है। वह ऐसा कर सकता है, क्योंकि अब स्वयं मसीह पवित्र आत्मा के द्वारा इस देह में वास करता है। अन्तिम समाधान फिर देह के पुनरुत्थान में है (न कि देह से बाहर निकल जाने में); परन्तु तब तक मनुष्य आत्मा के द्वारा देह की बुरी क्रियाओं को मार सकता है (रोमियों 8:12-13)।

32. Jürg Buchegger, *Der neue Mensch in Christus und seine tägliche Erneuerung*, पृ. 199, में: *Ein Mensch – was ist das?*, Wuppertal, 2004।

यहाँ की इस पुकार के साथ संबंधित व्यक्ति केवल छुटकारे की ही नहीं, बल्कि सबसे बढ़कर एक छुड़ानेवाले की लालसा करता है! व्यवस्था का अक्षर भावनाहीन होकर माँग करता था, बिना सामर्थ्य दिए। छुड़ानेवाला, हमारा प्रभु यीशु मसीह, वही है, जिसने अनुग्रह और प्रेम में हर व्यक्ति के लिए व्यक्तिगत रूप से अपना प्राण दिया और जो सामर्थ्य देता है (फिलिप्पियों 4:13; 2 कुरिन्थियों 12:9 आदि)।

6.9.6 पद 25: रोमियों 7 की सीख

मैं अपने प्रभु यीशु मसीह के द्वारा परमेश्वर का धन्यवाद करता हूँ! तो फिर मैं आप बुद्धि से तो परमेश्वर की व्यवस्था की सेवा करता हूँ, परन्तु शरीर से पाप की व्यवस्था की।

पहली बार उद्धारकर्ता का नाम लिया जाता है। यही उस विशाल कारागार के द्वार की कुंजी है, जिसमें विश्वासी ने स्वयं अपने आप को बन्द कर लिया है। यदि कोई है, जो इस स्थिति से बचाता है, तो वह यीशु मसीह, हमारा प्रभु है। यह एक ऐसे विश्वासी की ओर संकेत करता है, जो अपने प्रभु के विषय में बोलता है। अब आखिरकार दिशा और लक्ष्य सही हैं। बाइबल के किसी भी दूसरे अध्याय से अधिक, रोमियों 7 में “मैं” और “मैं” और फिर “मैं” पढ़ने को मिलता है। समस्या इसी में है। शायद पौलुस ने यह उदाहरण जान-बूझकर इसी प्रकार चुना, ताकि “मैं” और “स्वयं” की ओर तथा व्यवस्था की ओर ले जानेवाले मार्ग से साफ़-साफ़ चेतावनी दे। जब तक हमारा ध्यान अपने ही भीतरी संघर्ष पर टिका है, तब तक हम मसीह को नहीं देख सकते और आत्मा के मार्ग पर नहीं चल सकते। निराश मसीही अब पहले की तरह अपना लंगर अपनी ही नाव में नहीं डालता, बल्कि उसे यीशु मसीह में डाल देता है।³³

अचानक का यह धन्यवाद दुर्दशा में निर्णायक मोड़ है। धन्यवाद का अर्थ है: मैं कुछ नहीं करता, बल्कि कोई दूसरा मेरे लिए कुछ करता है। अध्याय 8 दिखाता है कि धन्यवाद किस बात के लिए है, अर्थात् मसीह में परमेश्वर के उद्धार के उस कार्य के लिए, जिसने न केवल मेरे दोष की समस्या को, बल्कि मेरी “पाप की समस्या” को भी सुलझा दिया। जो मैं स्वभाव से हूँ, वह हटा दिया गया और समाप्त कर दिया गया। सीनै पर्वत, व्यवस्था के पर्वत, पर कठिन चढ़ाई समाप्त हो गई है। गुलगुता और वहाँ उद्धार और जीवन के लिए दिया गया अनुग्रह अब लक्ष्य है!

अध्याय 7 का अन्त उन दो स्वभावों को आमने-सामने रखता है, जो विश्वासी में हैं (7:25)। परन्तु इस स्थान पर यह शरीर और आत्मा के बीच का निरन्तर प्रतिदिन का संघर्ष नहीं है (जैसा गलातियों 5 में वर्णित है), बल्कि यह क्रान्तिकारी पहचान है कि विश्वासी में दो नियम कार्य करते हैं। मुझ में दो सिद्धांत हैं: एक ओर – शरीर से – मैं पाप की सेवा करता हूँ। इस सिद्धांत का उद्गम अब स्पष्ट रूप से पहचान लिया गया है: यह मेरे शरीर में बसा हुआ पाप है। दूसरी ओर – नई की गई सोचने की बुद्धि से – मैं परमेश्वर की व्यवस्था

33. William MacDonald, *Kommentar zum NT*, खण्ड 1, पृ. 641।

की सेवा करता हूँ। यह उद्गम भी समझ में आता है: यह भीतरी मनुष्य है – परमेश्वर का दिया हुआ नया जीवन।

शरीर (यूनानी **sarx**) “पुराने अहं” की, अभक्त और सांसारिक की, इस वर्तमान युग की – हाँ, उस सब की गतिशक्ति है, जो पाप अपने साथ लाया है। सोचने की बुद्धि वह साधन है, जिसके द्वारा भीतरी मनुष्य परमेश्वर की व्यवस्था को पूरा करना चाहता है। 7:25 में पौलुस इस दुविधा को सारांश में कहता है: नई की गई सोच के द्वारा वह परमेश्वर की व्यवस्था से आनन्दित होता है, शरीर के द्वारा वह पाप के नियम की सेवा करता है। यह व्यक्ति, अर्थात् “मैं”, है, जो या तो एक की या दूसरे की सेवा करता है – और वह भी अपने निर्णय की पूरी ज़िम्मेदारी के साथ। इस प्रकार दो योग्यताओं या क्षमताओं की बात की जा सकती है³⁴, जिनका उपयोग मैं अपने हर काम के लिए करता हूँ। दोनों क्षमताओं में से एक सदा सक्रिय रहती है; कुछ भी तटस्थ नहीं है। हर कार्य (सीधे शब्दों में, जो कुछ मैं सोचता और करता हूँ) इन योग्यताओं में से किसी एक से निर्धारित होता है। तो अब आत्मा की योग्यता मेरे जीवन में कैसे प्रबल होती है?

हम उत्सुक हैं कि पौलुस क्या उत्तर देता है और कौन सा मार्ग दिखाता है। परन्तु एक वाक्य में हम उत्तर को पहले से इस प्रकार कह सकते हैं: जो व्यवस्था नहीं कर सकी, वह अब मसीह ने हमारे लिए कर दिया है (ऐतिहासिक तथ्य के रूप में), और आत्मा आज उसे हम में “पूरा करता है” (वास्तविक अनुभव के रूप में)।³⁵

34. Charles C. Ryrie, *Ausgewogen statt abgehoben*, Dillenburger 1994, पृ. 43। अंग्रेज़ी शब्द “capacity” का अर्थ “योग्यता” भी है।

35. Gordon Fee, *Der Geist Gottes und die Gemeinde*, Metzingen, 2005, पृ. 188।

7. रोमियों 8:1-11: आखिरकार स्वतंत्र!

पहले पाँच अध्यायों में एक ओर परमेश्वर की धार्मिकता और दूसरी ओर मनुष्य के (चाहे यहूदी हो या अन्यजाति) दोष और पाप के विषय में तर्कों की कड़ी मसीह के लहू के द्वारा उद्धार तक पहुँची (3:23-25)। परमेश्वर ने अपने पुत्र को प्रायश्चित्त के रूप में दे दिया। यीशु का लहू परमेश्वर की न्यायपूर्ण माँग को पूरा करता है। परन्तु परमेश्वर ने यीशु को, जब उसने अपने आप को हमारे लिए बलिदान कर दिया, हमें धर्मी ठहराने के लिए मरे हुएों में से जिलाया। अब परमेश्वर, पवित्र और धर्मी न्यायी, उसे धर्मी ठहराता है, जो यीशु मसीह पर और उस परमेश्वर पर विश्वास करता है, जिसने उसे मरे हुएों में से जिलाया। अध्याय 5:1 में पौलुस सारांश देता है:

इसलिए जब हम विश्वास से धर्मी ठहराए गए, तो परमेश्वर के साथ हमारा मेल है!

यहाँ तक पहुँचकर कोई सोच सकता था कि पत्नी का चरम बिन्दु आ गया है, इतना कि इससे आगे कोई और चरम बिन्दु लगभग संभव ही नहीं। परन्तु फिर पौलुस उससे गहरी समस्या को उठाता है। 5:12 से बात अब दोष और प्रायश्चित्त की नहीं, बल्कि मनुष्य के नैतिक अस्तित्व की है। बात पाप की है – एक शक्ति के रूप में और एक ऐसे सिद्धांत के रूप में, जो हर मनुष्य के साथ अटूट रूप से जुड़ा हुआ है। जो किसी मनुष्य ने किया है, वह उसे क्षमा किया जा सकता है। जो वह (नैतिक दृष्टि से) है, उसे क्षमा नहीं किया जा सकता, क्योंकि ऐसा करके पाप को उचित ठहराया जाता।

अध्याय 5 में पौलुस पाप के उद्गम और प्रभाव को समझाता है, अध्याय 6 में पाप से छुटकारे को। अध्याय 7 में पौलुस ने मसीही के साथ व्यवस्था के संबंध पर विचार किया है। उसके दूसरे भाग में उसने एक ऐसे मनुष्य के अनुभव का वर्णन किया है, जिसके बारे में हम मान सकते हैं कि वह परमेश्वर की सन्तान है। यह मसीही अच्छे उद्देश्यों से परमेश्वर को प्रसन्न करने का प्रयत्न करता है, इस प्रकार कि उसने व्यवस्था को अपने जीवन का नियम बना लिया। परन्तु उसने निर्णायक बात को अनदेखा कर दिया है: मसीही व्यवस्था के लिए मर चुका है, जैसे वह पाप के लिए मर चुका है। उसने यह नहीं समझा कि सीनै की व्यवस्था एक पूरी “व्यवस्था-प्रणाली” का प्रतीक है, जिसमें उपलब्धि का सिद्धांत लागू होता है। परन्तु व्यवस्था तो इसीलिए दी गई थी कि शरीर की निर्बलता और असमर्थता को प्रमाणित करे। उसने स्पष्ट कर दिया कि मनुष्य पापी है और उसे परमेश्वर के हस्तक्षेप की आवश्यकता है। व्यवस्था के द्वारा पाप जी उठा (7:9); व्यवस्था के द्वारा पाप अत्यन्त ही पापमय ठहरा (7:13)। यदि कोई विश्वासी अक्षर की इस पुरानी रीति से जुड़ जाता है, तो उसका अन्त निराशा में होगा, क्योंकि उसमें बसा हुआ पाप उसकी नई की गई इच्छा से अधिक बलवान होगा।

“मैं कैसा अभागा मनुष्य हूँ!” – यह कथन इस अनुभूति से निकलता है कि पाप अजेय है। रोमियों 7 में मसीही केवल अपने आप को देखता है; वह यह नहीं देखता कि वह मसीह में धर्मी ठहराया गया है, धोया गया है और पवित्र किया गया है। उसने मसीह में अपनी नई पहचान को नहीं पहचाना। जो अपनी नई पहचान को समझ लेता है (जैसा अध्याय 8 में वर्णित है), उसे अब यह कहने की आवश्यकता नहीं: “मैं कैसा अभागा मनुष्य हूँ!” फिर भी: जब-जब वह ठोकर खाता है, या कहे पाप करता है, और इस प्रकार उसमें “शरीर का काम” (गलातियों 5:19) पाया जाता है, तब-तब उसे परमेश्वर के सामने सच्चाई से इसे दोषी ठहराना और अंगीकार करना चाहिए। हर सच्चे पाप-अंगीकार के साथ शोक और पश्चात्ताप जुड़ा होता है। यह आत्मिक वृद्धि का अंग भी है और उसकी शर्त भी।

रोमियों 8 हमारे लिए जीवन का द्वार पूरा खोल देता है: मसीह में दोषमुक्ति और आत्मा में स्वतंत्रता – महिमा की ओर जाते हुए परमेश्वर के पुत्रों और सन्तान के रूप में। हम अभी पहुँचे नहीं हैं; हम अभी मृत्यु की देह में हैं और एक ऐसी सृष्टि में हैं, जो विनाश के अधीन है।

7.1 अभी से – पर अभी नहीं

हम आशा के लिए बचाए गए हैं (रोमियों 8:24-25; ER, जर्मन बाइबल अनुवाद)। हमारा धर्मी ठहराया जाना, जिसने हमें पापी से धर्मी बना दिया, निश्चित है, परन्तु केवल विश्वास के द्वारा प्राप्त होता है। जो हमारे पास विश्वास में है, वह “अभी से” है। परन्तु यह स्पष्ट है कि हम अभी सिद्धता तक नहीं पहुँचे हैं। सबसे सुन्दर बात अभी आनी है, और उसे हम “अभी नहीं” कहते हैं।

मसीह का नया युग: अनन्त जीवन, आत्मा का कार्य, अनुग्रह, स्वतंत्रता, पुनरुत्थान, नवीनीकरण, शान्ति, धार्मिकता, पूर्णता

मसीह का पहला आगमन और उसका कार्य “अभी से” को पूरा करता है: धर्मी ठहराया जाना, आत्मा का वरदान

विश्वास और आशा में पार्थिव जीवन – अभी से – पर अभी नहीं

वर्तमान युग

मसीह का दूसरा आगमन “अभी नहीं” को पूरा करता है:

- आनेवाली महिमा 8:18
- लेपालकपन, हमारी देह का छुटकारा 8:23
- परमेश्वर की सन्तान की महिमा की स्वतंत्रता 8:21
- सृष्टि स्वतंत्र की गई 8:21

आदम का युग: पाप, मृत्यु, शरीर, व्यवस्था, दासत्व, नश्वरता, विनाश, व्यर्थता

यह चित्र इस प्रतीत होनेवाले विरोधाभास को और इन दोनों बिन्दुओं के बीच के तनाव को स्पष्ट करने के लिए है। वृत्त वह मिलन-क्षेत्र है, जहाँ आदम का युग अभी समाप्त नहीं हुआ, परन्तु मसीह का युग आरम्भ हो चुका है। इस समय में परमेश्वर की प्रजा को भविष्य का जीवन पहले से दे दिया गया है, जबकि साथ ही पूर्णता अभी शेष है।

विश्वास, आशा और विश्वास में धीरज से टिके रहने का यह समय उद्धार के आज्ञार्थों (इम्पेरेटिव) के साथ चलता है। उनके प्रोत्साहन, चेतावनियाँ और ज़ोरदार संकेत हमारे लिए हैं और हमें अन्त तक टिके रहने के लिए प्रेरित करने के लिए हैं, ताकि हम विश्वास की पूरी मैराथन दौड़ पूरी कर सकें। परमेश्वर का अनुग्रह अपने आत्मा के द्वारा यह कर दिखाएगा कि हम लक्ष्य तक पहुँचें। यही अध्याय 8 का विषय है। जब हम पौलुस में और पूरे नए नियम में **अभी से – पर अभी नहीं** पर संतुलित ढंग से ध्यान देते हैं, तो हमारी आशा जाग उठती है। अध्याय 6 – 8 इस मार्गदर्शक विचार का एक स्पष्ट उदाहरण हैं।

उद्धार का निश्चयार्थ (इंडिकेटिव) **अभी से** के अनुरूप है, अर्थात् उसके, जो हमें पहले ही मिल चुका है। उद्धार का आज्ञार्थ उस पर दृष्टि लगाता है, जो **अभी नहीं** है, परन्तु जिस तक हम पहुँचेंगे: अनन्त जीवन की महिमा और एक स्वतंत्र की गई सृष्टि। परमेश्वर का उद्धार मानवीय कार्य, निर्णय और धीरज को बाहर नहीं करता। हमें वही बनना है, जो हम हैं। चेतावनी और प्रतिज्ञा, उपदेश और आश्वासन साथ-साथ खड़े हैं और एक दूसरे को कभी बाहर नहीं करते।

7.2 निर्णायक मोड़

अध्याय 8 शायद इस पत्र की “सबसे ऊँची” पर्वत-चोटी है और पूरी बाइबल की सबसे ऊँची चोटियों में से एक। जब पाप से छुटकारा पूरी तरह स्पष्ट हो गया है, तो पौलुस दिखाता है कि छुड़ाए हुए का मार्ग परमेश्वर के लक्ष्य (पूर्णता) तक पहुँचने के लिए कहाँ और किन जीवन-परिस्थितियों से होकर जाएगा।

“यह अध्याय हमें मसीही धर्म के सबसे भीतरी घेरे में और उसके हृदय तक ले जाता है; यह परम आनन्द की उस विशेष दशा का, उस सबसे शुद्ध और समझ तक पहुँचे हुए आनन्द का, वर्णन करता है, जिसके समान कुछ भी, दूर-दूर तक भी, देने में संसार किसी प्रकार सक्षम नहीं है।”³⁶

7.3 पद 1: दोषमुक्ति – अब कोई दंड की आज्ञा नहीं

इसलिए अब जो मसीह यीशु में हैं, उन पर दंड की आज्ञा नहीं। (कोई दंड का निर्णय नहीं)³⁷

36. C. J. Ellicott और W. Sanday (संपा.), *A Bible Commentary for Bible Students*, पृ. 233।

37. कुछ हस्तलिपियाँ ऐसी हैं, जो निम्नलिखित अनुवाद की गवाही देती हैं: इसलिए अब उन पर कोई भी दंड की आज्ञा नहीं, जो मसीह यीशु में (हैं); (वे) ऐसे लोग (हैं), जो शरीर के अनुसार नहीं, बल्कि आत्मा के अनुसार चलते हैं। जो मसीह में हैं, उनकी स्थिति आत्मा के अनुसार उनके चाल-चलन के कारण नहीं है: बल्कि मसीह में होने का तर्कसंगत परिणाम यह है कि वे आत्मा के अनुसार चलें। अक्सर स्थिति और दशा को अनुचित रूप से एक दूसरे से बहुत दूर कर दिया जाता है – एक ऐसी बात, जिसे पौलुस नहीं समझ पाता। यह अनुवाद उद्धार के निश्चयार्थ और उद्धार के आज्ञार्थ की एकता के पूरी तरह अनुरूप है। अतः बात कर्मों के द्वारा उद्धार की नहीं, बल्कि उद्धार के सामान्य परिणाम के रूप में जीवन के परिवर्तन की है।

यह बाइबल के सबसे महान और सबसे सारगर्भित वाक्यों में से एक है। यह वचन हर भय को भगा देता है। यह एक खोए हुए संसार में, जो न्याय की ओर बढ़ रहा है, जयजयकार की पुकार है। उन मनुष्यों के लिए, जो अपने पाप की पहचान के कारण निराशा से पीड़ित हैं, इस शुभ समाचार का अस्तित्व तक पहुँचनेवाला प्रभाव है: छुटकारा, शान्ति, निश्चय और सुरक्षा। मसीह में यह स्थान, या कहें यह स्थिति, किसी भी परमाणु-बम-रोधी बंकर से अधिक सुरक्षित है। मसीह में हम पर कुछ भी नहीं आ सकता, क्योंकि वह पहले उस पर आता। और वह हर बात का सामना कर सकता है। यहाँ यह परमेश्वर का दंड का निर्णय है, जो न्यायपूर्वक हम पर पड़ता, यदि उसने उसे अपने ऊपर न ले लिया होता। और क्योंकि हम उसमें हैं और सदा बने रहेंगे, इसलिए हम इसी निश्चय के साथ प्रतिदिन के जीवन से गुजरते हैं। सारे कानूनी प्रश्न सुलझ गए हैं। हमें केवल धर्म के रूप में खड़ा ही नहीं किया गया, बल्कि हम मसीह के साथ अटूट रूप से जुड़े भी हैं: मसीह में होने का अर्थ इसके सिवा कुछ नहीं कि जब परमेश्वर हम पर दृष्टि डालता है, तो वह हमें नहीं, बल्कि मसीह को देखता है।

यह आधारभूत कथन हमें आश्वासन देता है कि न्याय के दिन का भविष्य का दोषी ठहराया जाना और अनन्त दंड हमारे लिए, जो मसीह में हैं, भविष्य से अतीत में खिसका दिए गए हैं: हमारा दोषी ठहराया जाना पहले ही हो चुका है।

यह दंड इसलिए वापस नहीं लिया गया या रद्द नहीं किया गया कि परमेश्वर बस हम पर अनुग्रह करता है। परमेश्वर का स्वभाव नहीं बदलता। वह अपनी महिमा, अपनी पवित्रता और धार्मिकता को कभी नहीं छोड़ेगा और न उनका इन्कार करेगा। तो फिर जो मसीह में हैं, उनके लिए दंड क्यों नहीं है? – क्योंकि मसीह पर हमारे, अर्थात् हमारे पुराने मनुष्य के, विरुद्ध दंड का निर्णय पूरा किया गया (6:6; 8:3)। वह उस पर पड़ा, हम पर नहीं। दंड से सुरक्षा इसमें नहीं है कि यीशु अपने जीवन में सिद्ध था और उसने व्यवस्था को पूरा किया। नहीं, दंड का निर्णय केवल सुनाया ही नहीं जाना था, बल्कि पूरा भी किया जाना था, और यह क्रूस पर और यीशु की मृत्यु में हुआ। उसका पवित्र जीवन नहीं, बल्कि उसकी मृत्यु हमारा उद्धार है।

एक दिन हर मनुष्य को उस अनन्त की उपस्थिति में आना होगा। यह क्रोध का दिन और परमेश्वर के सच्चे न्याय के प्रकट होने का दिन है (रोमियों 2:5)। उस दिन मनुष्यों की गुप्त बातों का न्याय होगा (रोमियों 2:16)। हम सब परमेश्वर के न्याय-आसन के सामने खड़े किए जाएँगे, और हर एक अपना-अपना लेखा देगा (रोमियों 14:10)। वह क्षण जब भी आए, हम मसीह में हैं। हम अभी से धर्मी बना दिए गए हैं, इसलिए हमें उस क्षण से डरने की आवश्यकता नहीं। हमें किसी मुकदमे की प्रतीक्षा नहीं करनी है। न्याय पहले ही हो चुका है। परमेश्वर का क्रोध (रोमियों 1:18) हम पर नहीं पड़ता; हम मसीह के लहू के द्वारा धर्मी ठहराए गए हैं और क्रोध से बचाए जाएँगे (रोमियों 5:9)।

विश्वास में हम अब मसीह में अपनी उद्धार-स्थिति को थामते हैं। परन्तु उस दिन वह प्रकट हो जाएगी; तब वह अनुभव की हुई और दिखाई देनेवाली वास्तविकता होगी: वहाँ परमेश्वर के सिंहासन के सामने पूरी दोषमुक्ति और सन्तान के रूप में स्वीकृति! तब हम विश्वास से देखने तक पहुँच गए होंगे।

परमेश्वर ने हमें मसीह में पहुँचा दिया है (1 कुरिन्थियों 1:30)। यह परमेश्वर के न्याय से पूर्ण सुरक्षा है, परन्तु साथ ही जी उठे हुए में एक बिल्कुल नए जीवन का आरम्भ भी। इस विषय के लिए, जिसकी चर्चा विशेष रूप से वही करता है, पौलुस “मसीह में होना”³⁸ अभिव्यक्ति का प्रयोग करता है। यह मसीही विश्वास का हृदय है, मसीह के साथ सबसे घनिष्ठ संबंध, जो अब परमेश्वर के सिंहासन पर है। इससे कम कुछ नहीं, यही अब परमेश्वर के सामने विश्वासी की कानूनी (न्यायिक) स्थिति में सम्मिलित है, और यही बात उसके जीवन के उस नए वातावरण पर भी लागू होती है, जिसमें वह अब लाया गया है। यह उसकी स्थिति का भी वर्णन करता है और उसके जीवन के धर्मी ठहराए जाने और उसकी गतिशक्ति का भी। “मसीह में होना” का अर्थ है “मसीह में जीना”। ए. टी. पियर्सन (A. T. Pierson) ने “मसीह में” शब्दों की तुलना एक छोटी सी चाबी से की है, जो किसी महल के बड़े फाटक के विशाल ताले को खोल सकती है। मसीह में हम परमेश्वर के सिंहासन तक पहुँचा दिए गए हैं। वहाँ हम उस प्रिय में, परमेश्वर के पुत्र में, ग्रहण किए गए हैं।

जब कोई नई स्थिति (“मसीह में”) में आना चाहता है, तो बात न भावना की है, न अपने प्रयत्न की। एक मसीही को इस स्थिति तक पहुँचने के लिए परिश्रम करने की आवश्यकता नहीं। यह ऐसा होता, मानो कोई एक कमरे में हो और फिर भी बार-बार उसी कमरे में प्रवेश करने का प्रयत्न करता रहे, जैसी तुलना वॉचमैन नी (Watchman Nee) ने की है।

7.4 पद 2: जीवन की आत्मा की व्यवस्था के द्वारा स्वतंत्र किए गए

क्योंकि जीवन की आत्मा की व्यवस्था ने मसीह यीशु में मुझे पाप और मृत्यु की व्यवस्था से स्वतंत्र कर दिया।

विश्वासी मसीह यीशु में, अपने “नए घर” में, क्या पाता है? जब वह मसीह में है, तो अब वह किस बात का सहभागी है? वहाँ वह उस पूरी जीवन-शक्ति का सहभागी होता है, जो मसीह के पास पुनरुत्थान में है।

दो व्यवस्थाओं – या दो नियमों – को आमने-सामने रखा गया है। एक शक्ति मृत्यु की ओर काम करती है, दूसरी जीवन की ओर। जो मसीह से जुड़ा है, वह पाप और मृत्यु पर विजय पा सकता है। एक व्यवस्था ने दूसरी को तोड़ दिया है, क्योंकि वह अधिक बलवान है। बात दो व्यवस्थाओं के साथ-साथ चलने की नहीं, बल्कि मसीह में विजय की है। यह बिल्कुल व्यावहारिक रूप से मसीही का अनुभव बनना है, जिसे पौलुस आगे भी समझाता है। परन्तु पहले विजय लड़कर प्राप्त की जानी चाहिए, ताकि कोई ऐसी जीवन की आत्मा की व्यवस्था का दावा कर भी सके। यह लड़ाई मसीही को नहीं लड़नी है; किसी दूसरे ने उसके लिए यह विजय लड़कर पा ली है: मसीह ने।

38. नए नियम में यह शब्द और इसके समान अभिव्यक्तियाँ, जो मसीह के साथ हमारे संबंध को दर्शाती हैं, 190 से अधिक बार आती हैं।

पाप और मृत्यु की व्यवस्था की तुलना गुरुत्वाकर्षण के नियम से की गई है। एक पक्षी इस नियम पर वायुगतिकी (एयरोडायनामिक्स) के नियम के द्वारा विजय पाता है। पक्षी भूमि पर नहीं गिरता, बल्कि जहाँ चाहे उड़ जाता है। उड़ना एक योग्यता है, जो स्वभाव से उसमें है, बिना इसके कि वह इसके लिए जी-तोड़ परिश्रम करे। उसे इसका बोध नहीं कि ऐसा करते हुए वह गुरुत्वाकर्षण के नियम को तोड़ता है। वह वही करता है, जिसके लिए वह सृजा गया। इसी प्रकार जीवन की आत्मा की इस व्यवस्था ने मसीही को स्वतंत्र कर दिया है, और यह उसमें लगातार काम करती रहती है। पवित्र आत्मा ही है, जो यह स्वतंत्रता देता है और इसे जीवित बनाए रखता है। मसीही इस व्यवस्था के प्रभाव के बारे में निश्चित हो सकता है, और यह – पक्षी के समान – उसके लिए सामान्य बात होनी चाहिए।

अध्याय 8 मुख्य रूप से पवित्र आत्मा के विषय में है, जबकि अध्याय 7 अपने मानवीय “मैं” के विषय में है। पवित्र आत्मा, मसीह का आत्मा, जीवन का आत्मा है। आदम में और उसके सब वंशजों में पाप और मृत्यु की व्यवस्था काम करती थी। मसीह में अब कहीं अधिक बड़ी सामर्थ्य के साथ आत्मा और जी उठे हुए का जीवन काम करते हैं।

7.5 पद 3: परमेश्वर गुलगुता पर पाप की समस्या का समाधान करता है

क्योंकि जो काम व्यवस्था के लिए असंभव था, इसलिए कि वह शरीर के कारण निर्बल थी, उसे परमेश्वर ने किया, अर्थात् अपने ही पुत्र को पापमय शरीर की समानता (समरूपता) में और पाप के लिए भेजकर, शरीर में पाप को दोषी ठहराया ...

व्यवस्था न तो पाप की समस्या का समाधान कर सकती थी, और न जीवन और वह सामर्थ्य दे सकती थी, जिससे उसका पालन किया जाए और उसके अनुसार जीया जाए। वह मनुष्य को नैतिक रूप से सुधार नहीं सकती थी या नया नहीं बना सकती थी। शरीर (यूनानी *sarx*; आदम के वंशजों की स्वाभाविक और इसलिए पापी तथा सांसारिक गतिशक्ति) शक्तिहीन और असमर्थ था। परन्तु परमेश्वर ने सब कुछ गति में ला दिया, क्योंकि वह अनुग्रहकारी और दयालु है। जो हम नहीं कर सके, वह **उसने** किया। कितना छुटकारा देनेवाला वचन है यह, जो इस संदर्भ में विशेष रूप से उनके लिए है, जो स्वयं अब भी कुछ करना चाहते हैं और अपने आप को करने और करना-ही-पड़ेगा की विवशता के अधीन कर लेते हैं!

7.5.1 परमेश्वर मनुष्य बनता है

यह परमेश्वर ने किया। यह उस सब का अन्तिम अन्त है, जो मनुष्य कर सकते हैं या करना चाहते हैं। परमेश्वर महान, अकल्पनीय काम करता है: उसने अपने एकलौते पुत्र को भेजा। उसने न स्वर्गदूत भेजे, न कोई मनुष्य। उसने अपना पुत्र दे दिया, जिसके साथ वह अनन्त प्रेम और अनन्त संगति में जुड़ा है। परमेश्वर पुत्र मनुष्य बना। वह “पापमय शरीर” में जन्मा नहीं, बल्कि पापमय शरीर की “समानता” में भेजा गया। वह मनुष्यों के समान बना, परन्तु पाप के बिना। पाप के बिना, परन्तु पाप के लिए वह भेजा गया। उसका

ईश्वरीय मिशन यह था कि वह पाप के लिए बलिदान बने। “पाप के लिए” अभिव्यक्ति पुराने नियम में अक्सर पापबलि के लिए प्रयुक्त होती है। ठीक यही बलिदान उसे बनना था, क्योंकि उस समय तक के सब बलिदान केवल पाप का स्मरण ही करा सकते थे! कि वह पाप के लिए यह एक ही बार का बलिदान बनेगा – इसका बोध उसे अपने निष्पाप जीवन के हर क्षण में था।

वचन देहधारी हुआ, परन्तु पाप के बिना। पाप सब मनुष्यों में था; उसके स्वभाव को “शरीर में पाप” कहा गया है। यीशु के विषय में केवल यह सच था कि वह शरीर में (मानवीय अस्तित्व में) था – पाप के बिना। यह वह अनिवार्य शर्त थी, जिस पर कोई समझौता नहीं हो सकता था, ताकि वह दूसरों के लिए पाप का बलिदान बन सके।

“पापमय शरीर की समानता” अभिव्यक्ति में एक ओर इस बात पर ज़ोर है कि परमेश्वर पुत्र सचमुच मनुष्य बना (“समानता” का अर्थ यहाँ “मिलता-जुलता होना” से अधिक है, क्योंकि नहीं तो उसकी सच्ची मानवता पर सन्देह करने की गुंजाइश रहती)। दूसरी ओर इस अभिव्यक्ति में यह है कि उसकी मानवता सब मनुष्यों की तरह पाप की पकड़ में नहीं थी।

7.5.2 गुलगुता

वह हुआ, जो समझ से परे है: परमेश्वर ने “शरीर में पाप” को दंड दिया (दोषी ठहराया) और इसके लिए अपने पुत्र को पापबलि बनाया। इस प्रकार परमेश्वर ने उस पर पाप के विरुद्ध दंड का निर्णय पूरा किया। मसीह ने हमारे पापी अस्तित्व को अपने ऊपर ले लिया (उसने अपने आप को वह बना लिया, जो हम थे) और हमारे स्थान पर अपने आप को परमेश्वर के पवित्र न्याय के सामने कर दिया। परमेश्वर ने अपने पुत्र को नहीं छोड़ा (8:32)! अध्याय 6:6 में पौलुस यही बात कहता है: हम उसके साथ क्रूस पर चढ़ाए गए हैं। अध्याय 7:4 में वह इसे दूसरे शब्दों में बताता है (“मसीह की देह के द्वारा मार डाले गए”)। क्रूस पर पाप के विरुद्ध मुकदमा चलाया गया और मृत्युदण्ड पूरा किया गया। उद्धारकर्ता ने दंड और पाप की मज़दूरी के रूप में मृत्यु, दोनों को हमारे स्थान पर अपने ऊपर ले लिया!

यद्यपि वह उसके प्रेम का अनन्त पुत्र है, फिर भी परमेश्वर ने क्रूस पर उसके साथ सबसे बड़े पापी के समान व्यवहार किया – उसके समान, जिस पर मानवजाति का सारा पाप लदा था। परमेश्वर का क्रोध बिना किसी दया के उस पर पड़ा, जो पवित्र और धर्मी था और पाप से घृणा करता था। उसे हमारे लिए पाप (और पापबलि) ठहराया गया (2 कुरिन्थियों 5:21)। इस घटना में मानवजाति के इतिहास के सबसे अन्धकारमय घण्टे समाए हुए हैं। उस दिन दोपहर 12 बजे से तीसरे पहर 3 बजे तक छाया हुआ असाधारण, सारी पृथ्वी पर फैला अन्धकार इस रहस्य की गवाही देता है। जो हुआ, उसका कोई साक्षी नहीं बन सका। परमेश्वर अपने ही पुत्र को मारता है, जो शारीरिक रूप से अपनी शक्ति के अन्त पर है, परन्तु पूरी चेतना के साथ पवित्र परमेश्वर का सामना करता है। तब वह अपना प्राण मृत्यु के हवाले कर देता है। उद्धारकर्ता वे सबसे महत्वपूर्ण शब्द, जो कभी बोले गए, सारे ब्रह्मांड में पुकारकर कहता है: “पूरा हुआ।”

इस प्रकार हम समझते हैं कि जो मसीह यीशु में हैं, उनके लिए अब कोई दंड हो ही नहीं सकता। उसने उसे अपने ऊपर ले लिया है। उसने अपने आप को परमेश्वर की पूर्ण पवित्रता और धार्मिकता के हवाले कर दिया, इस प्रकार कि जो हम स्वभाव से थे (“आदम में” हमारी स्थिति के सब लक्षण), उसे उसने अपने ऊपर लाद लिया, मानो वह उसके लिए ज़िम्मेदार हो। जिस सब के मैं योग्य था, वह उसने मुझसे ले लिया। यह एक ईश्वरीय बलिदान था, और यह उन सब के लिए है, जो अब मसीह में हैं। यह हमारी विफलता, हमारे पाप और परमेश्वर की सेवा करने में हमारी असमर्थता के प्रति परमेश्वर का उत्तर है। उसने हमारे पापकर्मों से और पाप से हमारे धर्मी ठहराए जाने को एक पूर्ण रूप से न्यायपूर्ण और इसलिए अचुनौतीपूर्ण आधार पर रख दिया है। परमेश्वर की माँग पूरी हो गई। कुछ नया रचने के लिए पुराने का न्याय करना आवश्यक था: पाप को यीशु के शरीर में (देहधारी हुए वचन में) परमेश्वर के अपने मापदंडों के अनुसार, उसकी धार्मिकता, पवित्रता और महिमा के अनुरूप, दोषी ठहराया जाना था। इसके द्वारा परमेश्वर की हर प्रकार से महिमा हुई और उसकी माँगें पूरी तरह संतुष्ट हुईं। यीशु का जिलाया जाना और सिंहासन पर बैठाया जाना इसका प्रमाण है। अपने पुत्र के छुटकारे के कार्य में परमेश्वर पूर्ण विश्राम में आ गया है।

परन्तु आइए, हम ध्यान दें कि उद्धार के इस कार्य का लक्ष्य क्या है:

7.6 पद 4: परमेश्वर की व्यवस्था अब सचमुच पूरी होती है

... ताकि व्यवस्था की धर्मी माँग हम में पूरी हो, जो शरीर के अनुसार नहीं, परन्तु आत्मा के अनुसार चलते हैं।

यीशु की पूरी हो चुकी बलिदान की मृत्यु के द्वारा उद्धार अब हमारे व्यावहारिक जीवन में, हमारे चाल-चलन में, आकर मिलता है। उद्धार का लक्ष्य यह है कि अब (अध्याय 7 के विपरीत) मसीही के द्वारा व्यवस्था सचमुच पूरी हो। यह पद रोमियों 7 का उत्तर है! अध्याय 7 का अध्ययन करने के बाद तो यह प्रश्न बचा रह गया था कि क्या परमेश्वर की व्यवस्था कभी भी केवल पाप को उघाड़ने के कार्य से आगे नहीं बढ़ेगी। क्योंकि परमेश्वर की व्यवस्था धर्मी और पूर्ण रूप से अच्छी है, इसलिए यह तो परमेश्वर की हार के बराबर होता, यदि कोई भी – निश्चय ही यीशु को छोड़कर – उसे पूरा न कर सके। और बात ऐसी ही है: अब जो मसीह में हैं, वे व्यवस्था को पूरा करते हैं। व्यवस्था की माँग अब उनमें पूरी होती है, और वह भी परमेश्वर के आत्मा के द्वारा।

यहाँ मूसा की व्यवस्था की हर आज्ञा की बात नहीं है। रोमियों 7 के मनुष्य की समस्या विधि-विधान की व्यवस्था नहीं, बल्कि मूसा की व्यवस्था का नैतिक भाग था। अपनी स्थिति की दुविधा को वह दस आज्ञाओं में से अन्तिम आज्ञा (एक नैतिक प्रकार की आज्ञा) से जोड़ता है: “लालच न करना!” (7:7; निर्गमन 20:17; तुलना करें व्यवस्थाविवरण 5:21)। नैतिक आज्ञाओं पर पाप प्रकट होता है (यह भी देखें याकूब 2:8-11)। लालच, या कहें अनुचित अभिलाषा की लालसा (चाहे किसी भी वस्तु की हो), ऐसी बात है, जिससे हमारा प्रतिदिन सामना होता है और जो हमारे हृदय में आरम्भ होती है।

यह आज्ञा अब विश्वासी के द्वारा पवित्र आत्मा की सामर्थ्य में पूरी होती है। इस प्रकार वह लालच का सामना कर सकता है और उस पर विजय पा सकता है। इससे भी बढ़कर, वह यह पाएगा: जब वह जान-बूझकर आत्मा के मार्ग पर चलता है, तो उसके लिए लालच का आकर्षण अधिक से अधिक घटता जाता है। वह अब उसे अपने अधिकार में नहीं लेना चाहता, जो अनुचित है और दूसरों का है – वह, जो (पार्थिव मापदंडों के अनुसार) बड़ा, सुन्दर और बेहतर है।

पौलुस का “नया” नीति-शास्त्र, अर्थात् “आत्मा की नई रीति” (7:6), पुराने या नए नियमों या व्यवस्थाओं में नहीं है। बल्कि हम आत्मा की सामर्थ्य में भविष्य का जीवन आज ही जीते हैं – एक ऐसा जीवन, जो स्वयं परमेश्वर के स्वभाव को प्रकट करता है, जैसा हमने उसे मसीह यीशु में जाना है। इस जीवन का मापदंड मूसा की व्यवस्था नहीं, बल्कि मसीह की व्यवस्था है (गलातियों 6:2), वह सत्य, जो मसीह में है (इफिसियों 4:20-22) और पूरे नए नियम में हमारे सामने आता है। निश्चय ही मसीह की व्यवस्था और मूसा की व्यवस्था एक दूसरे का कभी विरोध नहीं कर सकतीं, क्योंकि उनका उद्गम और रचयिता एक ही है। मूसा की व्यवस्था का केन्द्र प्रेम है, और यही मसीह की व्यवस्था का भी केन्द्र है। परन्तु बादवाली व्यवस्था में प्रेम कहीं आगे तक जाता है: स्वयं मसीह और उसका प्रेम मापदंड हैं।

7.6.1 मूसा की व्यवस्था और उसकी वैधता

हमें “परमेश्वर की अनन्त नैतिक व्यवस्था”³⁹ और मूसा की उस व्यवस्था में अन्तर करना होगा, जिसकी वैधता समय से सीमित है। परमेश्वर की अनन्त नैतिक व्यवस्था इस बात का पूर्ण मानदंड है कि परमेश्वर के सामने क्या उचित है और क्या अनुचित। यह मनुष्य के प्रति परमेश्वर के पवित्र और अपरिवर्तनीय स्वभाव की अभिव्यक्ति है। परमेश्वर की नैतिक व्यवस्था सदा से रही है, क्योंकि ये उसके अनन्त स्वभाव की माँगें हैं। मनुष्य मूसा की व्यवस्था के अधीन हुए बिना भी परमेश्वर की पूर्ण नैतिक व्यवस्था के अनुरूप जी सकते हैं।

ठीक इसी नई स्थिति को पौलुस यहाँ समझाता है। जहाँ तक उद्धार के मार्ग और जीवन के मापदंड का प्रश्न है, मसीही मूसा की व्यवस्था से स्वतंत्र है। परन्तु इस कारण वह कभी “व्यवस्थाहीन” नहीं है। अब वह नियम के अनुसार मसीह के अधीन है (1 कुरिन्थियों 9:21), और वहाँ कम से कम वे नियम लागू होते हैं, जो मूसा की व्यवस्था के नैतिक भाग में दिए गए हैं।⁴⁰ “मसीह की व्यवस्था” (गलातियों 6:2), जो जीवन

39. Ernst G. Maier, *Die biblische Lehre von den Heilszeiten*, Hünfeld, 2007, पृ. 80 और आगे। “परमेश्वर की अनन्त नैतिक व्यवस्था” शब्द बाइबल में उतना ही नहीं मिलता, जितना दूसरे धर्मवैज्ञानिक शब्द (त्रिएकता, पुराना और नया स्वभाव आदि), परन्तु यह किसी बाइबल-सत्य को संक्षेप में व्यक्त करने के लिए उपयोगी है।

40. नए नियम में दस आज्ञाएँ: सब की आज्ञा को छोड़कर शेष सभी नौ (नैतिक) आज्ञाएँ नए नियम में केवल दोहराई ही नहीं गईं, बल्कि और कड़ी की गई हैं और/या निषेध से एक सकारात्मक आज्ञा में बदल दी गई हैं! पहली आज्ञा: 1 कुरिन्थियों 8:4-6; दूसरी आज्ञा: 1 कुरिन्थियों 10:7, 14; तीसरी आज्ञा: कुलुसियों 3:8; पाँचवीं आज्ञा: इफिसियों 6:2; छठी आज्ञा: मत्ती 5:22; 1 यूहन्ना 3:16; सातवीं आज्ञा: मत्ती 5:28; इफिसियों 5:25; आठवीं आज्ञा: इफिसियों 4:28; 1 यूहन्ना 3:17; नौवीं आज्ञा: इफिसियों 4:25; दसवीं आज्ञा: इफिसियों 5:5; 1 तीमुथियुस 6:10 आदि।

की आत्मा की व्यवस्था है (8:2), और प्रेम की (नई) आज्ञा (यूहन्ना 13:34; 15:12 आदि) मूसा की व्यवस्था से जुड़ती तो हैं और कहीं उसका विरोध नहीं करतीं, परन्तु वे उससे कहीं आगे जाती हैं। अब विश्वासी परमेश्वर और मसीह का अनुकरण करनेवाले बन गए हैं। यही बात लागू होती है: प्रेम में चलो, मसीह के उस प्रेम में, जिसने अपने आप को मृत्यु तक दे दिया (इफिसियों 5:2)! यह एक व्यवस्था से बढ़कर है। मूसा की व्यवस्था यहाँ मानो पीछे रह जाती है, और परमेश्वर के पुत्र और उसके छुटकारे के कार्य के प्रकाशन के प्रकाश में इस नए मानक के साथ नहीं चल पाती। यह एक संबंध की अभिव्यक्ति है; यह लेपालकपन (पुत्रत्व) है, यह व्यक्तिगत अगुवाई है, यह नई सृष्टि है (गलातियों 6:15-16)।

परमेश्वर के अनन्त नैतिक सिद्धांतों का प्रकाशन और उनका लागू होना उद्धार के इतिहास के विभिन्न युगों में बदलता है। यद्यपि मूसा की व्यवस्था ने अपनी वैधता खो दी है, फिर भी परमेश्वर के वे अनन्त नैतिक सिद्धांत, जो मूसा की व्यवस्था में प्रकट होते हैं, बने रहते हैं। क्योंकि वे हमें मसीह की व्यवस्था में फिर से मिलते हैं। एक उदाहरण पौलुस रोमियों 13:8-10 में देता है। नए जीवन की आज्ञा यह है कि हम एक दूसरे से प्रेम रखें। इससे हम मूसा की व्यवस्था को भी पूरा करते हैं, क्योंकि प्रेम व्यवस्था का सार है (गलातियों 5:14-15; 1 तीमथियुस 1:5-11; मत्ती 22:34-40)। यह सार, अर्थात् प्रेम, मसीह की व्यवस्था के भी अनुरूप है।

मसीह एक ओर मूसा की व्यवस्था का अन्त है, परन्तु उसका लक्ष्य और उसकी पूर्ति भी (रोमियों 10:4)। केवल उसी ने मूसा की व्यवस्था का पूरी तरह पालन किया। परन्तु इससे भी आगे, मनुष्य यीशु मसीह में परमेश्वर की अनन्त नैतिक व्यवस्था पूरी तरह प्रकट होती है। मसीह अनन्त वचन (यूहन्ना 1:1-3) के रूप में अपने व्यक्तित्व में परमेश्वर की इच्छा और व्यवस्था की सिद्ध अभिव्यक्ति है। “मसीह की व्यवस्था” में परमेश्वर की अनन्त नैतिक व्यवस्था का सिद्ध प्रकाशन है, और इस रूप में वह पुराने नियम की व्यवस्था से बढ़कर है। इसलिए मसीही का मापदंड अब मूसा की व्यवस्था का अक्षर नहीं, बल्कि एक व्यक्ति है: स्वयं मसीह आत्मा के द्वारा हमारे हृदयों पर लिखा गया है।

दूसरे शब्दों में: नई वाचा के तथ्य लागू हो जाते हैं। व्यवस्था हृदयों में (अर्थात् मनुष्य की इच्छा और निर्णय के केन्द्र में) रोपी जाती है, ताकि संबंधित लोग भीतर से पवित्र आत्मा की सामर्थ्य के द्वारा इस व्यवस्था के अनुसार जी सकें। यह व्यवस्था किसी और के द्वारा नहीं, बल्कि स्वयं मसीह के द्वारा साकार होती है (इब्रानियों 8:10; 10:16; 2 कुरिन्थियों 3:6, 18; यिर्मयाह 31:31-34; 32:40; यहैजकेल 36:24-27)।

7.7 पद 5: शरीर के अनुसार या आत्मा के अनुसार होना

क्योंकि जो शरीर के अनुसार हैं, वे शरीर की बातों पर मन लगाते हैं; परन्तु जो आत्मा के अनुसार हैं, वे आत्मा की बातों पर।

पौलुस उन दोनों रेखाओं को, जिन्हें उसने रोमियों 5:12 में आरम्भ किया था, आगे भी खींचता रहता है। इस संदर्भ में वह इस विषय में नहीं लिखता कि कोई मसीही आत्मिक जीवन जीता है या शारीरिक। उसे अब भी मौलिक अन्तर की चिन्ता है। “शरीर के अनुसार होना” का अर्थ है अब भी आदम के परिवार का होना। परन्तु जो “आत्मा के अनुसार हैं”, वे “मसीह में” हैं। फिर भी दोनों स्थितियाँ कोई अमूर्त बात नहीं हैं। जीवन, सोच और कर्म पर छाप पड़ती है – या तो आत्मा की या शरीर की। शरीर अविश्वासी पर छाप डालता है, आत्मा विश्वासी पर।

शरीर मनुष्य का पापी अस्तित्व है – वह, जो वह अपने पूरे अस्तित्व और जीवन-शैली में भीतर बसे हुए पाप के कारण बन गया है। अविश्वासी “शरीर” है (यूहन्ना 3:6)। वह शरीर से और शरीर के अनुसार जीता है; उसका ध्यान अपने आप पर और इस संसार की बातों पर लगा रहता है। वह चाहे भी, तो और कुछ नहीं कर सकता। वह अपने शरीर से निर्धारित होता है। उसकी इच्छा, सोच और कार्य पर सांसारिक, दिखाई देनेवाली और लौकिक बातों की गतिशक्ति की छाप है।

इसके विपरीत मसीही “आत्मा के अनुसार” है। इसका अर्थ है कि आत्मा ने उसे उद्धार दे दिया है और वह वहीं से अपना नया उद्गम पाता है: जो आत्मा से जन्मा है, वह आत्मा है (यूहन्ना 3:6)। इसके आधार पर जीवन की एक नई दिशा, नई रुचियाँ और अनन्त तथा स्वर्गीय बातों की ओर दृष्टि उत्पन्न होती है।

7.8 पद 6-7: मृत्यु और जीवन, शत्रुता और शान्ति

क्योंकि शरीर का मन मृत्यु है, परन्तु आत्मा का मन जीवन और शान्ति है; इसलिए कि शरीर का मन परमेश्वर से शत्रुता है, क्योंकि वह परमेश्वर की व्यवस्था के अधीन नहीं है, और न हो सकता है।

अन्तर इससे अधिक स्पष्ट नहीं हो सकता। शरीर की लालसा (उसकी मनोवृत्ति) अपने भीतर मृत्यु को, अर्थात् नश्वरता और विनाश को, लिए हुए है। जो मनुष्य अब भी शरीर में है, वह इसे नहीं पहचानता। वह सोचता है कि वह अपनी मर्ज़ी से जी सकता है, परन्तु वह पाप के हाथों संचालित होता है। उसे यह पता नहीं चलता कि यह जीवन (शारीरिक और अनन्त, दोनों) मृत्यु की ओर ले जाता है। वह मृत्यु को, यद्यपि वह उससे डरता है, एक सामान्य बात समझता है और शरीर और मृत्यु के इस संबंध को नहीं पहचानता।

परन्तु परमेश्वर का आत्मा जीवन और शान्ति उत्पन्न करता है। यह जीवन जैविक नहीं, बल्कि आत्मिक, या कहे अनन्त, जीवन है। परमेश्वर के साथ मेल इस नए जीवन का आधार है। शान्ति में सब मनुष्यों की लालसा समाई है, परन्तु वह केवल पवित्र आत्मा की सामर्थ्य में प्राप्त होती है। आत्मा में जीवन की पहचान यही शान्ति है; यह ऐसी शान्ति है, जो विश्वासी को भरोसे के साथ परमेश्वर के हाथ में विश्राम करने देती है। पौलुस अपनी शिक्षा-पत्रियों में समझाता है कि यह आत्मिक जीवन और यह शान्ति हमारे मानवीय अस्तित्व में कैसे दिखाई देते हैं। यहाँ वह अभी उसी मौलिक तुलना पर टिका है, जो अमूर्त प्रतीत होती है।

पापी शरीर का स्वभाव कोई निष्क्रिय बात नहीं है। वह, चाहे इस रूप में पहचाना न जाए, परमेश्वर से शत्रुता में है। शरीर व्यवस्था को अस्वीकार करता है। शरीर के लिए परमेश्वर का अधिकार एक शत्रु है। परमेश्वर को जीवन से बाहर कर देना शरीर का स्वभाव है। शरीर परमेश्वर की व्यवस्था का पालन करने में असमर्थ भी है और अनिच्छुक भी। यह मसीही पर भी लागू होता है। उसका शरीर, या कहें उसका पुराना शारीरिक स्वभाव, जो नई उद्धार-स्थिति में भी अब तक उसमें है, ठीक वैसा ही व्यवहार करता है (जब उसे इसकी छूट मिलती है) और वह भी व्यवस्था का पालन नहीं कर सकता। हमारे भीतर का शरीर भी परमेश्वर से शत्रुता है। परन्तु हम “शरीर में” नहीं हैं, जैसा अगला पद दिखाता है:

7.9 पद 8-9: शरीर में और आत्मा में होना

परन्तु जो शरीर में हैं, वे परमेश्वर को प्रसन्न नहीं कर सकते। परन्तु तुम शरीर में नहीं, बल्कि आत्मा में हो, यदि सचमुच परमेश्वर का आत्मा तुम में बसता है। परन्तु यदि किसी में मसीह का आत्मा नहीं, तो वह उसका नहीं।

“शरीर में होना” – इस अभिव्यक्ति से वह अभिप्रेत है जो मनुष्य स्वभाव से आदम के वंशज के रूप में है। उसका जीवन, उसके सारे अस्तित्व और सारे कामों में, इसी से ढलता और निर्धारित होता है। यह उसके जीवन का तत्व है, जैसे जल मछली का तत्व है। पौलुस कहता है कि यह बात बिना किसी संदेह के स्पष्ट होनी चाहिए कि शरीर (यूनानी *sarx*) में रहते हुए परमेश्वर को कभी भी प्रसन्न नहीं किया जा सकता – व्यवस्था की सहायता लेकर भी नहीं।

मसीही अब “आदम में” नहीं, बल्कि “मसीह में” है, और यहाँ इसे इस तथ्य के बराबर रखा गया है कि वह “आत्मा में” है। क्योंकि परमेश्वर का आत्मा हर विश्वासी में बसता है, इसलिए जब से इस आत्मा ने उस पर अधिकार कर लिया है, वह “आत्मा में” भी है। जब हम आत्मा में हैं, तो हम पवित्र आत्मा के व्यक्तित्व में हैं, ठीक वैसे ही जैसे हम मसीह के व्यक्तित्व में हैं। यह ईश्वरीय व्यक्ति, परमेश्वर का आत्मा, मसीह की ही तरह हम में बसता है। इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि अब हमारी दशा का वर्णन “आत्मा में” के रूप में किया जाता है। हम “मसीह में” हैं, और हम “पवित्र आत्मा में” हैं। दूसरे शब्दों में, हम परमेश्वर में हैं (कुलुस्सियों 3:3; 1 थिस्सलुनीकियों 1:1; 2 थिस्सलुनीकियों 1:2; 1 यूहन्ना 4:15-16; यहूदा 1)। यही हमारा नया “घर” है, हमारे जीवन का नया वातावरण, जो जीवन, अनुग्रह, शान्ति और धार्मिकता से भरा है। “आत्मा में होना” का अर्थ है कि अब से परमेश्वर का आत्मा हम में अपना फल उत्पन्न करता है और हमारी मनोवृत्ति, अर्थात् हमारी लालसा, को दिशा देता है। यह आत्मा यीशु मसीह से भिन्न या उससे स्वतंत्र होकर तो कार्य नहीं करता, जिसमें हमें रखा गया है। इसलिए इसी आत्मा को “मसीह का आत्मा” भी कहा जाता है। इस नए जीवन में मसीह केंद्र और लक्ष्य है, और परमेश्वर का आत्मा इसी बात को सबसे अधिक महत्व देता है कि हमारे जीवन में मसीह की बड़ाई हो।

यदि किसी विश्वासी के जीवन में मसीह का कोई स्थान न हो और वह व्यक्ति उससे प्रेम न करे, तो इसका एक ही परिणाम हो सकता है: वह उसका नहीं है। यह आत्म-परीक्षण का आह्वान है, ताकि कोई झूठी सुरक्षा में न झूलता रहे।

यहाँ मसीह का आत्मा उस मुहर के समान है, जो इस बात का प्रतीक है कि कोई किसकी सम्पत्ति है। यद्यपि यहाँ पवित्र आत्मा की मुहर का उल्लेख नहीं है (तुलना करें इफिसियों 1:13), फिर भी स्वामित्व-सूचक शब्द (अर्थात् यह तथ्य कि सर्वनाम “उसका” मसीह से सम्बन्धित होने के अर्थ में प्रयोग किया गया है) इसी पहलू की ओर संकेत करता है।

7.10 पद 10-11: परमेश्वर का आत्मा और हमारी देह का उद्धार

परन्तु यदि मसीह तुम में है, तो देह तो पाप के कारण मरी हुई है, परन्तु आत्मा धार्मिकता के कारण जीवन है। और यदि उसी का आत्मा, जिसने यीशु को मरे हुआओं में से जिलाया, तुम में बसता है, तो जिसने मसीह को मरे हुआओं में से जिलाया, वह तुम्हारी मरनहार देहों को भी अपने उस आत्मा के कारण, जो तुम में बसता है, जीवित करेगा (या: अपने उस आत्मा के द्वारा, जो तुम में बसता है)।

7.10.1 हमारी उद्धार-स्थिति – उद्धार का निश्चयार्थ – “अभी से”

- हम मसीह यीशु में हैं।
- हम आत्मा में हैं।
- हम आत्मा के अनुसार हैं।
- पवित्र आत्मा हम में है।
- हमारे पास मसीह का आत्मा है।
- मसीह हम में है।

मसीह और आत्मा के बीच एक उल्लेखनीय सामंजस्य है। ये दो भिन्न व्यक्ति हैं, परन्तु इनका लक्ष्य एक है। ईश्वरत्व में, पिता, पुत्र और पवित्र आत्मा की त्रि-एकता में, इससे भिन्न हो भी नहीं सकता। त्रिएक परमेश्वर हमारे उद्धार में कार्य कर रहा था, और वह अब हमारे पवित्रीकरण में भी कार्य कर रहा है!

7.10.2 जीना और मरना

अध्याय 5 से 8 में मृत्यु की बात बार-बार आती है। सबसे आगे दैहिक मृत्यु है, परन्तु उसे अनन्त मृत्यु (परमेश्वर के दंड के निर्णय का परिणाम) से अलग नहीं किया जा सकता। हमारी देह अब भी पाप के इसी परिणाम के अधीन है। स्पष्ट है कि पौलुस यहाँ भीतरी पक्ष – तुम में मसीह – को बाहरी पक्ष से, अर्थात् देह से, अलग करता है। देह मरी हुई है (मृत्यु के वश में, मरती हुई) – पाप के कारण। परन्तु यह बात भीतरी

पक्ष पर लागू नहीं होती, क्योंकि वह जीवन की आत्मा के हाथ में है। परमेश्वर का उद्धार पहले मनुष्य के भीतरी पक्ष पर प्रभाव डालता है। इस भीतरी पक्ष का विस्तार से वर्णन नहीं किया गया (उदाहरण के लिए “प्राण” या “आत्मा” जैसे शब्दों के प्रयोग से), बल्कि उसे केवल पुरुषवाचक सर्वनाम “तुम” से सूचित किया गया है। यहाँ जिस आत्मा का उल्लेख है, वह इस संदर्भ में मनुष्य की आत्मा नहीं, बल्कि ईश्वरीय आत्मा है। उसी ने जीवन की आत्मा की व्यवस्था के द्वारा जीवन उत्पन्न किया है (8:2)।

जैसे पाप मृत्यु के लिए उत्तरदायी है, वैसे ही विश्वासी के जीवन के लिए परमेश्वर की धार्मिकता उत्तरदायी है। धार्मिकता नए जीवन की नींव है। यीशु मसीह के धार्मिकता के एक काम से जीवन के लिए धर्मी ठहराया जाना हुआ (5:18); हमें धर्मियों की स्थिति में पहुँचा दिया गया है (5:19)।

हम अब भी उस देह में हैं, जो अपने तत्व में किसी अविश्वासी की देह से भिन्न नहीं है। यह बात कि मसीह हम में है, पार्थिव जीवन में देह पर कोई प्रभाव नहीं डालती। इससे देह अभी अमर नहीं हो जाती। परन्तु यह स्थिति केवल अस्थायी है, क्योंकि मसीह में पुनरुत्थान की सामर्थ्य देह को भी अपने में ले लेगी। सम्पूर्ण मनुष्य, एक पूरी इकाई के रूप में, ईश्वरीय उद्धार का लक्ष्य है। बात केवल “प्राण के उद्धार” की नहीं, बल्कि कहीं बढ़कर मूल सृष्टि की पुनर्स्थापना की है।

और यह कहना भी अधूरा होगा, क्योंकि उद्धार केवल परमेश्वर के स्वरूप में सृजे गए आदम की मूल दशा को पुनर्स्थापित नहीं करता, बल्कि हमें उसके पुत्र के स्वरूप में बदल देगा (8:29)। क्योंकि वह दिन आ रहा है, जब हम उसके, यीशु के, समान होंगे (1 यूहन्ना 3:2)। उस दिन हम फिर उस “मिट्टी के” का स्वरूप (आदम का स्वरूप) धारण नहीं करेंगे, बल्कि उस स्वर्गीय का स्वरूप, अर्थात् मसीह का (1 कुरिन्थियों 15:49)। पुनरुत्थान यह प्रदर्शित करेगा कि परमेश्वर ने अपनी ही महिमा के लिए और हमारे उद्धार के लिए पाप के सब परिणामों पर विजय पा ली है।

7.10.3 परमेश्वर का आत्मा और देह

हम में बसनेवाला परमेश्वर का आत्मा इस बात का कारण है कि एक दिन हम जिलाए जाएँगे। यह आत्मा हमारी देह में बसता है और उसने हमारी देह को अपना लिया है। हमारी देह पवित्र आत्मा का मन्दिर बन गई, देह आत्मा की है (1 कुरिन्थियों 6:19)! आत्मा मरे हुआँ में से हमारे भावी पुनरुत्थान की गारंटी है। भावी पुनरुत्थान का कारण यह है कि अभी, जब हम अपनी पार्थिव देह में जीते हैं, आत्मा हम में बसता है। आत्मा इस मन्दिर में फिर से बसना चाहता है, क्योंकि दैहिक मृत्यु हो जाने के बाद उसे कुछ समय के लिए इसे छोड़ना पड़ा था। प्रभु यीशु कहता है कि आत्मा सदा तक हमारे साथ रहेगा (यूहन्ना 14:16); वह हमारी पुनरुत्थान की देह में भी बसेगा। आत्मा के हमारी देह के साथ इस सम्बन्ध को देखना महत्वपूर्ण है, क्योंकि हम बहुत बार इस आत्मा को केवल अपनी मानवीय आत्मा से जोड़ते हैं।

पवित्र आत्मा एक ओर हमारी देहों के पुनरुत्थान का कारण है, और साथ ही वह हमारी देहों को जिलाने के लिए परमेश्वर का साधन भी होगा।

7.10.4 अभी से अमर क्यों नहीं?

क्या परमेश्वर अपने उद्धार के साथ-साथ हमारी देह को अभी से अमरता नहीं दे सकता था? इसे (यदि मसीह पहले ही न लौट आए) कभी-कभी बीमार क्यों होना पड़ता है और मृत्यु से होकर क्यों जाना पड़ता है? इसका उत्तर यह प्रतीत होता है: परमेश्वर की संसार के लिए एक योजना है। उसका लक्ष्य एक नई सृष्टि है। वह हम में आरम्भ हो चुकी है; हम (विश्वासी) अभी से नई सृष्टि का भाग हैं, मानो एक “पूर्वाभास”, एक पहला फल। नया युग हम में आरम्भ हो चुका है: “अभी से” और साथ ही “पर अभी नहीं” – पूर्णता की ओर मार्ग पर हमारी अंतरिम स्थिति का वर्णन इसी प्रकार किया जा सकता है।

कल्पना कीजिए कि हम अभी से अमर होते। तब हर कोई केवल इसी कारण मसीही बनना चाहता, ताकि वह भी अमर हो जाए। परन्तु परमेश्वर शुभ संदेश इसलिए भेजता है कि लोग मन फिराएँ और विश्वास करें। यह प्रश्न इस पत्र में सीधे नहीं उठाया गया, फिर भी पौलुस इसी अध्याय में आगे दुःखों और क्लेशों के प्रश्न पर तथा हमारी देह के छुटकारे पर बात करता है। हम “अभी से – पर अभी नहीं” के तनाव में जीते हैं। यह तनाव इस बात में है कि देह अब भी बीमारियों और मृत्यु के अधीन है, जबकि हमें उद्धार की पूरी आशीष पहले ही मिल चुकी है, जो अनन्तता का पूर्व-स्वाद है। इस खंड के शीर्षक में पूछे गए प्रश्न का उत्तर रोमियों 8:24 देता है: हम आशा में उद्धार पाए हुए हैं (तुलना करें ER, जर्मन बाइबल अनुवाद, का शब्दांकन)। परन्तु जो आशा दिखाई देती है (जैसे अमर देह के रूप में), वह आशा नहीं।

8. रोमियों 8:12-17: उद्धार का आज्ञार्थ – विजय में जीवन

परमेश्वर का उद्धार जीवन की पुस्तक में हमारा नाम लिखे जाने के साथ समाप्त नहीं होता, बल्कि सीधे दैनिक जीवन में कार्य करता है। वहीं उद्धार दिखाई देता है। नए जीवन में केवल एक नया “सेवा-सम्बन्ध” (एक दासत्व से दूसरे दासत्व में) ही नहीं, बल्कि सबसे बढ़कर एक “प्रेम-सम्बन्ध” शामिल है: परमेश्वर ने हमें गोद लिया है और इस प्रकार हम परमेश्वर की सन्तान बन गए हैं। ऐसे लोगों के रूप में हम अब एक पतित सृष्टि और एक शत्रुतापूर्ण संसार से होकर मार्ग पर हैं। यह स्थिति उस दिन तक बनी रहेगी, जब हमारी देहें बदल दी जाएंगी। यह पुनरुत्थान के द्वारा होगा (जो मसीह में सो गए हैं) या सीधे (उस समय जीवित लोगों के बदल जाने के द्वारा) – और वह भी यीशु के आगमन पर। तब जाकर हमारा लेपालकपन पूरा होगा (8:23) और भावी महिमा प्राप्त होगी (8:18)।

पौलुस रोमियों के उद्धार पर प्रश्न नहीं उठाता। वह उन्हें भाई कहकर सम्बोधित करता है, जिन्हें परमेश्वर का आत्मा यह निश्चय दिलाता है कि वे परमेश्वर की सन्तान हैं। हम सदा के लिए ऐसे हैं, क्योंकि भविष्य उस बात को प्रकट करेगा और करना भी चाहिए, जिसे हम अभी केवल विश्वास में (और अभी दिखाई न देनेवाले रूप में) थामते हैं। जब वह अब (अपनी सब पत्रियों की तरह) “यदि” और “तो” की बात करता है और उद्धार के विषय में सशर्त वाक्यों⁴¹ का प्रयोग करता है, तो वह यह उन्हें असुरक्षित करने के लिए नहीं कहता। इसके द्वारा वह न तो संदेह व्यक्त करता है, न निश्चितता। बल्कि वह उन्हें स्वयं से आत्म-आलोचनात्मक प्रश्न पूछने के लिए प्रेरित करता है: मेरे साथ क्या स्थिति है? क्या मुझ में आत्मा है? क्या मैं सही मार्ग पर हूँ? वह मन ही मन यह मानकर चलता है कि वे इन प्रश्नों का उत्तर “हाँ” में देंगे। ये ऐसी चेतावनियाँ हैं, जो उद्धार के निश्चय के बावजूद हमें प्रेरित करती हैं कि हम वह बनें जो हम हैं। हमें वह जीवन जीना है, जो हमें परमेश्वर से मिला है। ये चेतावनियाँ इसलिए हैं कि हम लक्ष्य तक पहुँचें। वे हमारी दृष्टि को “पर अभी नहीं” की ओर मोड़ती हैं – आगे की ओर, परमेश्वर की अपनी महिमा की ओर, जहाँ हम घर पर होंगे।

8.1 पद 12: अब शरीर के कर्जदार नहीं

इसलिए, हे भाइयो, हम कर्जदार तो हैं, पर शरीर के नहीं, कि शरीर के अनुसार जीएँ।

जो मसीह यीशु में हैं, उन सब के लिए यह एक दायित्व है कि वे अब से शरीर के अनुसार न जीएँ। शरीर का, अर्थात् पापी स्वभाव का, वर्णन पौलुस ने आत्मा के विरोध में पर्याप्त स्पष्टता से किया है। शरीर का स्वामित्व-दावा अतीत की बात है: हमें स्वतंत्र किया गया है। शरीर को, जो हमारे मनुष्य होने का एक भाग

41. अर्थात् शर्तवाले वाक्य।

है, हटाया नहीं गया, बल्कि प्रभावहीन कर दिया गया है। उसे अब हमारे जीवन को निर्धारित नहीं करना है। इसलिए यह असंभव है कि हम अब भी किसी प्रकार इस शरीर के प्रति दायित्व रखें। इसके विपरीत, शरीर ऐसा व्यवहार करता है मानो हम उसके कर्जदार हों, अर्थात् उसके प्रति बाध्य हों, जैसा कि मन फिराव से पहले था भी। भाइयों को यह स्मरण दिलाना आवश्यक है, क्योंकि हम परीक्षा के योग्य बने रहते हैं: हम उन लोगों का प्रतिरूप हैं, जो देह में अपने अन्तिम दिन तक शरीर की परीक्षा के लिए असुरक्षित हैं।

तो क्या अब हम आत्मा के कर्जदार हैं? निश्चय ही हमने अपेक्षा की होती कि पौलुस वाक्य को इसी प्रकार पूरा करेगा। इसके बजाय वह बताता है कि शरीर के अनुसार जीवन का अन्त कैसे होता है और आत्मा की सामर्थ्य में जीवन कैसा दिखता है:

8.2 पद 13: जीवन या मृत्यु

क्योंकि यदि तुम शरीर के अनुसार जीते हो, तो (अवश्य) मरोगे; परन्तु यदि आत्मा के द्वारा देह की क्रियाओं को मारते हो, तो जीवित रहोगे।

पौलुस के शब्द बिना किसी सजावट के हैं। चेतावनी स्पष्ट है: हे भाइयो, यदि तुम शरीर के अनुसार जीते हो, तो मरोगे। शरीर का स्वभाव, अर्थात् परमेश्वर से शत्रुता, विश्वासी में भी बिना बदले बना रहता है। “शरीर के अनुसार जीना” उन मनुष्यों का वर्णन है जो शरीर में हैं (8:5-8)। यह एक चेतावनी है, जो आत्म-धोखे से बचाने के लिए है। यदि कोई शरीर के अनुसार जीता है, तो इस बात की संभावना है कि वह शरीर में है – अर्थात् उस चौड़े मार्ग पर, जो अनन्त विनाश की ओर ले जाता है। परन्तु यहाँ यह चेतावनी (सच्चे) भाइयों से कही गई है! इस तथ्य के बावजूद कि पौलुस उनके उद्धार के विषय में निश्चित है और उस पर प्रश्न नहीं उठाता, वह चेतावनी देता है: शरीर के अनुसार मत जीओ, क्योंकि उसका परिणाम मृत्यु है! और इस संदर्भ में उसका अभिप्राय अनन्त मृत्यु से है।

8.2.1 प्रतिज्ञाएँ और चेतावनियाँ तथा अनन्त उद्धार

भाइयों को दी गई यह चेतावनी उद्धार के संभावित खो जाने की ओर संकेत करती प्रतीत होती है। क्या यही वह संभावना है, जिस पर पौलुस इस चेतावनी के द्वारा विचार करता है? मैं ऐसा नहीं मानता। यातायात-संकेत संभावित परिणामों से सावधान करते हैं, न कि अनुमानित परिणामों से। जब हम सड़क पर गाड़ी चलाते हैं, तो हम ऐसे निर्णय लेते हैं जिनका प्रभाव हमारी सुरक्षा पर पड़ता है। यातायात-संकेत मोड़ों, तेज़ आड़ी हवा और सड़क पार करते जंगली जानवरों से सावधान करते हैं। वे मुझे असुरक्षित करने के लिए नहीं हैं। उनका उद्देश्य मुझे यह डर दिलाना नहीं कि मैं कोई दुर्घटना कर सकता हूँ, क्योंकि मैं अच्छी तरह गाड़ी चलाने में असमर्थ हूँ। बल्कि वे विभिन्न और वास्तविक खतरों से सावधान करते हैं। वे मेरी कल्पना को जगाते हैं कि यदि मैं चेतावनियों की उपेक्षा करूँ, तो क्या हो सकता है। यह कोई विरोधाभास नहीं कि एक ओर हमारे पास परमेश्वर की प्रतिज्ञा है और साथ ही हम चेतावनी भी सुनते हैं, क्योंकि हमें उस प्रतिज्ञा को

अपने लिए थामने के प्रयासों में ढीला नहीं पड़ना है। पौलुस के जीवन से एक सहायक तुलना मिलती है। रोम की यात्रा में जहाज़ भयंकर संकट में पड़ जाता है, यहाँ तक कि सब जीवन की आशा छोड़ देते हैं। इस स्थिति में पौलुस वह प्रतिज्ञा, जो उसे एक स्वर्गदूत से मिली थी, आशय के रूप में आगे बताता है: “सब बचाए जाएँगे!” कुछ दिनों बाद भूमि दिखाई देती है, और कुछ मल्लाह अपने आप को बचाने के लिए छोटी नाव से भाग जाना चाहते हैं। पौलुस सैनिकों को ऐसा होने देने से सावधान करता है, क्योंकि मल्लाहों के बिना सब नाश हो जाते (प्रेरितों के काम 27)। क्या पौलुस इस बात से सावधान कर रहा था कि परमेश्वर की प्रतिज्ञा शायद पूरी न हो? या वह समझ से अपील करता है, क्योंकि वह पहले से देखता है कि यदि कोई परमेश्वर की प्रतिज्ञा का पालन न करे, तो क्या होगा? इस कहानी में दृढ़ प्रतिज्ञा और गम्भीर चेतावनी का आपसी सम्बन्ध ठीक वैसा ही है, जैसा बाइबल की प्रतिज्ञाओं (वे हमें आश्वासन देती हैं कि अन्त में हम बचाए जाएँगे) और बाइबल की चेतावनियों तथा उपदेशों (वे हमसे माँग करती हैं कि हम यीशु मसीह पर विश्वास में लक्ष्य तक धीरज से बने रहें) का।

“परमेश्वर संभावित परिणामों से सावधान करता है, अनुमानित परिणामों से नहीं। हमारे साथ भी ऐसा ही है। पवित्रशास्त्र हमें बताता है कि जो यीशु मसीह में हैं, परमेश्वर उन सब को सुरक्षित थामे रहता है (8:29-39)। साथ ही वह हमें यह उपदेश भी देता है कि हम यीशु मसीह की आज्ञाकारिता में धीरज से बने रहें, क्योंकि अन्यथा हम अनन्तकाल के लिए खो जाएँगे (8:12-13)। क्या यह एक निराशाजनक विरोधाभास है? क्या परमेश्वर की चेतावनी को मानने और उस पर विश्वास करने के लिए उसकी प्रतिज्ञाओं पर संदेह करना आवश्यक है? नहीं! परमेश्वर हमें मसीह में सुरक्षित थामे रहता है, और इसके लिए वह ऐसी चेतावनियों और उपदेशों का उपयोग करता है, जो सुसमाचार की आरम्भिक बुलाहट की तरह संभावनाओं या शर्तों के ढाँचे में कहीं गई हैं। परमेश्वर कभी अपनी प्रतिज्ञाओं का खंडन नहीं करता ...⁴² वह हमारी समझ से बात करता है, ताकि हम अनाज्ञाकारिता के सामने उस पर विश्वास करें और उसकी आज्ञा मानें। इसलिए परमेश्वर हमारे विश्वास को दृढ़ करता है – इस आश्वासन के द्वारा कि वह हमें अन्त तक सुरक्षित रखेगा, परन्तु इसके द्वारा भी कि वह हमें” ज़ोर देकर स्मरण दिलाता है कि “यीशु मसीह के प्रति दृढ़ता से विश्वासयोग्य बने रहें।”⁴³

आशीर्ष और प्रतिज्ञाएँ – शर्तों से जुड़ी हुई

रोमियों 8:13 क्योंकि यदि तुम शरीर के अनुसार ... परन्तु यदि आत्मा के द्वारा देह की क्रियाओं को जीते हो, तो मरोगे; ... मारते हो, तो जीवित रहोगे।

रोमियों 8:14 क्योंकि जितने परमेश्वर के आत्मा के ... वही परमेश्वर के पुत्र हैं।
द्वारा चलाए जाते हैं, ...

42. उद्धरण के लेखक यहाँ यह स्पष्ट करना चाहते हैं कि परमेश्वर की प्रतिज्ञाओं और चेतावनियों को कभी एक दूसरे के विरुद्ध खड़ा नहीं किया जा सकता।

43. Thomas Schreiner, *Mit Ausharren laufen – Gibt es Heilsgewissheit ohne Heiligung?*, Oerlinghausen, 2009, पृ. 219।

रोमियों 8:17 ... यदि हम सचमुच उसके साथ दुःख उठाते हैं, ...

... ताकि उसके साथ महिमा भी पाएँ।

1 कुरिन्थियों 15:1-2 हे भाइयो, मैं तुम्हें वही सुसमाचार बताता हूँ, जो मैंने तुम्हें सुनाया था, जिसे तुमने ग्रहण भी किया, जिसमें तुम स्थिर भी हो, और जिसके द्वारा तुम्हारा उद्धार भी होता है, ...

... यदि तुम उस वचन को, जो मैंने तुम्हें सुनाया था, थामे रहते हो, नहीं तो तुम्हारा विश्वास करना व्यर्थ हुआ।

गलातियों 6:9 हम भले काम करने में हियाव न छोड़ें, क्योंकि ठीक समय पर हम कटनी काटेंगे, ...

... यदि हम ढीले न हों।

कुलुस्सियों 1:21-23 तुम्हें ... उसने अब अपनी शारीरिक देह में मृत्यु के द्वारा मेल कर लिया है, ताकि तुम्हें अपने सामने पवित्र, निर्दोष और निष्कलंक बनाकर उपस्थित करे, ...

... यदि तुम विश्वास में नींव डाले हुए और दृढ़ बने रहो और सुसमाचार की आशा से हटाए न जाओ।

2 तीमथियुस 2:5 फिर यदि कोई प्रतियोगिता में लड़ता भी है, तो उसे मुकुट नहीं मिलता, ...

... जब तक वह नियम के अनुसार न लड़े।

2 तीमथियुस 2:12-13 यदि हम धीरज से सहते रहें, ...

... तो उसके साथ राज्य भी करेंगे।

यदि हम उसका इनकार करेंगे, ...

... तो वह भी हमारा इनकार करेगा।

यदि हम अविश्वासी हों – ...

... वह विश्वासयोग्य बना रहता है, क्योंकि वह आप अपना इनकार नहीं कर सकता।

इब्रानियों 3:6 ... पर मसीह पुत्र के रूप में अपने घर का अधिकारी है, और उसका घर हम हैं, ...

... यदि हम हियाव और आशा के गर्व को अन्त तक दृढ़ता से थामे रहें।

2 पतरस 1:10 इस कारण, हे भाइयो, अपनी बुलाहट और चुनाव को दृढ़ करने का और भी अधिक यत्न करो; ...

... क्योंकि यदि तुम ये बातें करते रहोगे, तो कभी ठोकर न खाओगे।

प्रकाशितवाक्य 2:7 जो जय पाए, ...

... उसे मैं जीवन के उस वृक्ष में से, जो परमेश्वर के स्वर्गलोक में है, खाने को दूँगा।

प्रकाशितवाक्य 2:11 जो जय पाए, ...

... उसको दूसरी मृत्यु से हानि न पहुँचेगी।

प्रकाशितवाक्य 3:5 जो जय पाए, ...

... उसे इसी प्रकार श्वेत वस्त्र पहनाया जाएगा, और मैं उसका नाम जीवन की पुस्तक में से किसी रीति से न काटूँगा, पर उसका नाम अपने पिता और उसके स्वर्गदूतों के सामने मान लूँगा।

ऐसी चेतावनियाँ और प्रतिज्ञाएँ, जो धीरज से बने रहने और जय पाने की शर्तों से जुड़ी हैं, हमें भय और आतंक में डालने के लिए नहीं हैं। बल्कि वे, उद्धार के निश्चयार्थ (इंडिकेटिव) और उद्धार के आज़ार्थ (इम्पेरैटिव) की तरह, एक ही सिक्के के दो पहलू हैं।

इन शर्तों को निष्प्रभावी नहीं किया जाना चाहिए। साथ ही इनके द्वारा हमें यह धमकी भी नहीं दी जाती कि हम उद्धार को फिर से खो सकते हैं। आशीषों और शर्तों एक ऐसा तनाव उत्पन्न करती हैं, जिसमें हमें शिथिल और आलसी नहीं होना है, बल्कि जागते रहकर और लक्ष्य पर दृष्टि रखकर विश्वास में उन्नति करनी है।

8.2.2 आत्मा के द्वारा देह की क्रियाओं को मारना

हमें बिना किसी समझौते के शरीर को फैलने की हर संभावना से वंचित करना है। आत्मा में जीवन, अर्थात् शरीर पर विजय, उस सामान्य मसीही जीवन का भाग है, जिसे परमेश्वर चाहता है। शरीर, अर्थात् पापी स्वभाव, विश्वासी में अब भी उपस्थित है और लगातार प्रभाव पाने का प्रयत्न करता है। उसका प्रभाव-क्षेत्र और कार्य-क्षेत्र हमारी काया है, अपनी सब इन्द्रियों, कार्यों और क्षमताओं समेत। निःसंदेह स्वयं देह बुरी नहीं है, जिसे मारना पड़े। बल्कि देह शरीर का खेल का मैदान है, वह शरीर का, अर्थात् पाप का, औज़ार है।

यह शरीर पहले की तरह अब भी केवल मृत्यु के योग्य है, और उसका न्याय गुलगुता पर पहले ही हो चुका है (8:3)। यहाँ पौलुस स्वयं शरीर को नहीं, बल्कि शरीर की क्रियाओं (उसकी हलचलों, उसके तौर-तरीकों, उसके जीवन के लक्षणों) को मारने का आदेश देता है। अपने शरीर की हर हलचल के सामने मुझे अपना पक्ष तय करना होता है। मुझे निर्णय लेना और अपना स्थान स्पष्ट करना होता है। इसके लिए परमेश्वर की ओर से मारने का एक अनुज्ञापत्र है। यदि कोई पापी झुकाव मेरे विचारों में चुपके से घुसकर फैलना चाहे, यदि शरीर मुझे किसी पापी भावना या कार्य की ओर खींचना चाहे, तो मुझे पूरी तरह जागते हुए उस पर प्रतिक्रिया करनी है और हर बार वही कार्य-पद्धति दिखानी है। यहाँ निष्क्रियता नहीं, बल्कि सतर्कता, अर्थात् तुरन्त प्रतिक्रिया, की आवश्यकता है। “मारने” का अर्थ है ऐसी किसी भी बात को सहन न करना, जो शरीर से आती है। इसका अर्थ तुरन्त भाग जाना भी हो सकता है, उदाहरण के लिए शारीरिक परीक्षा से।

परन्तु यह लड़ाई मेरी अपनी नहीं, बल्कि एक शक्तिशाली सहायक, अर्थात् आत्मा, की सामर्थ्य में लड़ी जानेवाली लड़ाई है। ठीक-ठीक कहें तो यहाँ बात किसी लड़ाई की नहीं, बल्कि एक “प्राणदंड” की है। हमारे निशाने पर पूरा शरीर (पापी स्वभाव और आदम के अस्तित्व के रूप में) नहीं, बल्कि उसकी क्रियाएँ हैं। ये लगातार खतरा बनी रहती हैं, परन्तु उन्हें केवल तभी “मारना” होता है, जब वे सामने आती हैं। शरीर हमेशा उपस्थित रहता है, परन्तु शरीर की क्रिया नहीं। “प्राणदंड” शब्द से किसी बात को सुन्दर बनाकर प्रस्तुत करने का उद्देश्य नहीं है, मानो यह संघर्ष बच्चों का खेल हो या जीत की गारंटी के साथ विजय का कोई स्वचालित क्रम। हमारा दैनिक जीवन कभी योजना के अनुसार नहीं चलता, उसका पूर्वानुमान मुश्किल से लगाया जा सकता है, वह बार-बार नई चुनौतियों के सामने खड़ा होता है। इसी प्रकार हमारे शरीर की चालें

और युक्तियाँ सदा इस बात की गवाही देती हैं कि वह चतुराई से और अचानक आक्रमण करता है। हमारे शरीर का मित्र संसार है, यह बुरा युग। यह गठबंधन हमारे लिए बातें आसान नहीं बनाता। हमारे भीतर का शरीर पहली ही चोट पर शान्त होकर पीछे नहीं हटेगा। वह फिर से उपस्थित होगा, जब हम उसकी सबसे कम अपेक्षा करते हैं और जब हमें उसकी सबसे कम आवश्यकता होती है।

शरीर हठी है, वह न तो बुढ़ापे से दुर्बल होता है, न थकता है। जहाँ तक शरीर की प्रकृति का प्रश्न है, हमें किसी भ्रम में नहीं रहना चाहिए।

इसलिए यह कोई ऐसी लड़ाई नहीं है, जिसमें हम शरीर (यूनानी *sarx*) को लगातार पछाड़ते रहते हैं। यह लड़ाई गुलगुता पर पहले ही लड़ी जा चुकी है। इसी विजय में और आत्मा की सामर्थ्य के द्वारा हम देह की क्रियाओं को मार सकते हैं। हम यह मानकर चल सकते हैं कि (यदि हम अभी वर्णित दृढ़ता को भी अपनाएँ) समय के साथ हम शरीर के इस बहकावे और इस परीक्षा को एक लगातार संघर्ष के रूप में अनुभव नहीं करेंगे। हमारे भीतर परमेश्वर के कार्य के द्वारा यह हमारी सोचने की रीति और हमारी आदत बन जाएगी कि हम बुराई से बचें, उसे कोई स्थान न दें और अपने आप भलाई को, अर्थात् परमेश्वर की इच्छा को, अपनी इच्छा की तरह चुनें।

8.2.3 “मरा हुआ समझना” या “मारना”?

रोमियों 6:11 में पौलुस पहले ही कह चुका था कि हमें अपने आप को पाप के लिए मरा हुआ, परन्तु मसीह यीशु में परमेश्वर के लिए जीवित समझना चाहिए। परन्तु 8:13 में वह मारने की बात करता है। पहली दृष्टि में ये दोनों आज्ञाएँ एक दूसरे का विरोध करती प्रतीत होती हैं। पहली आज्ञा निष्क्रिय प्रकार की है, दूसरी सक्रिय प्रकार की।

रोमियों 6:11 के साथ हमारे जीवन में पाप पर हमारी विजय के विषय में अभी सब कुछ नहीं कहा गया है। पाप और शरीर के साथ संघर्ष केवल इससे नहीं जीता जाता कि हम अपने आप को पाप के लिए मरा हुआ समझें। यदि हम “मरे होने का नाटक” करके बहकावे से बचने का प्रयत्न करते हैं, क्योंकि परीक्षा किसी मरे हुए पर तो आक्रमण नहीं कर सकती, तो यह भले ही एक व्यापक धारणा हो, परन्तु समाधान नहीं है। शरीर अब भी मुझ में जीवित है; मैं उसे मरा हुआ घोषित कर सकता हूँ, परन्तु मुझे पता चलेगा कि वह मरा हुआ है नहीं। यह मुझे एक थका देनेवाले संघर्ष में ले आता है, जो इस बात में है कि मैं लगातार अपने आप को मरा हुआ समझने का प्रयत्न करते हुए अपने आप पर और पाप की परीक्षा पर बहुत अधिक ध्यान केंद्रित करता हूँ। पाप और शरीर की समस्या का रोमियों की पत्नी का उत्तर यह नहीं है। अपने आप को पाप के लिए मरा हुआ समझने का अर्थ क्या है? इसका अर्थ है मसीह के छुटकारे के कार्य को स्वीकार करना, जिसमें मेरा पुराना जीवन, मेरा पुराना मनुष्य, मसीह के साथ क्रूस पर चढ़ाया (मारा) गया। अपने आप को “पाप के लिए मरा हुआ” समझने का सम्बन्ध इस बात से नहीं है कि पाप की परीक्षा में मुझे कैसा व्यवहार करना चाहिए; बल्कि रोमियों 6 में बात उसे विश्वास से स्वीकार करने की है, जो परमेश्वर ने एक ही बार सदा

के लिए मेरे लिए किया है। यह 2000 वर्ष पहले मुझ से बाहर हुआ। वहाँ परमेश्वर ने पुराने जीवन को दोषी ठहराया और मसीह की मृत्यु में उसका अन्त कर दिया। उद्धार के इस कार्य को मैं विश्वास में 100 % अपने लिए थाम लेता हूँ। अब मैं मसीह में एक नया जीवन जीता हूँ। हमें अपने आप को ऐसा ही समझना है; विश्वासियों के रूप में हमें अभी से इसी बात को मानकर चलना है। वाक्य का दूसरा भाग (“परन्तु मसीह यीशु में परमेश्वर के लिए जीवित”) बताता है कि मसीह क्या करता है: वह आत्मा की सामर्थ्य में जीता है, जैसा अध्याय 8 में वर्णन किया गया है। अब जाकर, रोमियों 8 में, पौलुस समझाता है कि मुझे पापी शरीर के साथ, उसकी क्रियाओं और उसके तौर-तरीकों के साथ, बिल्कुल व्यावहारिक रूप में क्या करना है। यहाँ निष्क्रियता (अपने आप को कुछ समझना) की नहीं, बल्कि दृढ़ कार्यवाही की आवश्यकता है। यह तो सबसे अधिक दृढ़ कार्यवाही है, जिसकी कल्पना की जा सकती है: मारना।

8.2.4 मारना – यह कैसे होता है?

“मारना” कैसा दिखता है? बात यह है कि हमारे नए जीवन में शरीर को फिर कोई अवसर न मिले। परमेश्वर ने इस शरीर के विरुद्ध युद्ध की घोषणा की है, और हमें इसी उदाहरण का अनुसरण करना है, और वह भी बिना किसी समझौते के। मारने का अर्थ सबसे पहले यह है कि किसी क्रिया को स्पष्ट रूप से शरीर के काम के रूप में पहचाना जाए। मुझे स्पष्ट होना चाहिए कि क्या शरीर से आता है। पवित्र आत्मा मेरी सहायता करता है, क्योंकि उसे व्यर्थ ही पवित्र आत्मा नहीं कहा जाता। आइए, हम बार-बार अपने आप को स्मरण दिलाएँ कि जो कुछ हम करते हैं – बिना किसी अपवाद के – वह या तो आत्मा से या शरीर से निर्धारित होता है। प्रभु के लिए की जानेवाली गतिविधियों में शरीर विशेष रूप से खतरनाक होता है। शरीर की एक धार्मिक “नस” भी होती है; वह बहुत भक्त भी हो सकता है। शरीर हर भेष जानता है! इसलिए बार-बार अपने आप से यह प्रश्न पूछना उपयोगी है: मेरे कार्य का स्रोत क्या है?

शरीर प्रभुत्व करना चाहता है और इस बात पर अड़ा रहता है कि उसकी क्रिया पूरी की जाए और दोहराई जाए। इस पर अब हम बिल्कुल स्पष्ट कहते हैं: “नहीं।” हम शरीर को जानते हैं; वह परमेश्वर से शत्रुता है। आत्मा की अगुवाई के द्वारा हम बिना समझौते के कहते हैं: “रुको!” इसका कोई विकल्प नहीं है। हमारे कार्यों को या तो शरीर निर्धारित करता है या आत्मा। हम शरीर को उसकी क्रिया जारी रखने की अनुमति नहीं देते। इसलिए “मारने” का अर्थ है शारीरिक क्रिया को दोषी ठहराना: वास्तविक कार्य होने से पहले मैं उसे करने के सब इरादों को स्पष्ट रूप से अस्वीकार कर देता हूँ। “मारना” भिन्न-भिन्न रूपों में दिखाई दे सकता है:

- मँगवाना बंद करना
- मुँह फेर लेना
- रुक जाना
- अंगीकार करना

- हटा देना
- निर्णय लेना
- भाग जाना
- छोड़ देना
- चुप रहना
- दोषी ठहराना
- चले जाना
- नज़र हटा लेना
- इच्छा करना
- नष्ट करना
- गवाही देना

– और बहुत कुछ –

पुराना नियम इसका एक उपयुक्त उदाहरण देता है कि शत्रु के विरुद्ध कितनी कठोरता से कार्यवाही करनी चाहिए। मोआबियों का राजा एग्लोन एक मोटा, स्वार्थी मनुष्य था – पापी शरीर का साक्षात् रूप। इस्राएल का छुड़नेवाला एहूद एक जोखिम भरे, परन्तु परमेश्वर द्वारा सुरक्षित किए गए कार्य में इस राजा को अपनी तलवार से मार गिराता है (न्यायियों 3:12-30)।⁴⁴

यदि हम देह की क्रियाओं को नहीं मारेंगे, तो वे हम पर राज्य करेंगी। “साँपों को मार डालो, इससे पहले कि वे तुम्हें मार डालें।”⁴⁵

जो कुछ शरीर से आता है, उसके विरुद्ध इस कठोर और निर्दयी रणनीति का वर्णन पौलुस कुलुस्सियों को लिखते हुए भी उतनी ही स्पष्टता से करता है:

“इसलिए अपने उन अंगों को मार डालो, जो पृथ्वी पर हैं: व्यभिचार, अशुद्धता, कामुकता, बुरी लालसा और लोभ (लालच), जो मूर्तिपूजा है।”

थोड़ा आगे वह इस सूची को जारी रखता है: “... क्रोध, रोष, बैरभाव, निन्दा, लज्जाजनक बातें ...” (कुलुस्सियों 3:5-11)।

प्रभु यीशु स्वयं यही रणनीति सुझाता है और उसे और भी तीखे शब्दों में कहता है: “जो कोई किसी स्त्री पर कुदृष्टि डाले, वह अपने मन में उससे व्यभिचार कर चुका” (मत्ती 5:28)। **“यदि तेरी दाहिनी आँख तुझे ठोकर खिलाए, तो उसे निकालकर अपने पास से फेंक दे; क्योंकि तेरे लिए यही भला है कि तेरे**

44. J. T. Mawson, *Überwinden ... aber wie?*, Schwelm, 1980, पृ. 28-44।

45. जॉन गिब्सन (Jean Gibson) का उद्धरण।

अंगों में से एक नाश हो जाए, और तेरी सारी देह नरक में न डाली जाए” (मत्ती 5:29; तुलना करें मरकुस 9:43-48)।

शरीर के साथ संघर्ष में हमें यह स्पष्ट होना चाहिए कि हम देह की क्रियाओं को केवल गुलगुता के प्रकाश में और पवित्र आत्मा की सामर्थ्य के द्वारा मार सकते और मिटा सकते हैं। यह अपने आप नहीं होगा, बल्कि इसमें हमारे दैनिक निर्णय की आवश्यकता है। शरीर के प्रति सही दृष्टिकोण हम तभी बनाए रख सकते हैं, जब हम बार-बार (जैसा हम साप्ताहिक स्मरण-भोज, अर्थात् रोटी तोड़ने, में करते भी हैं) क्रूस को स्मरण करें।

8.3 पद 14: आत्मा के द्वारा चलाए जानेवाले परमेश्वर के पुत्र

क्योंकि जितने परमेश्वर के आत्मा के द्वारा चलाए जाते हैं, वही परमेश्वर के पुत्र हैं।

आत्मा की अगुवाई सबसे पहले उसी रूप में प्रकट होती है, जैसा अभी पद 13 में वर्णन किया गया: एक ओर यह शरीर पर विजय है और दूसरी ओर यह तथ्य कि मनुष्य “आत्मा का फल” उत्पन्न करता है, जैसा पौलुस गलातियों 5 में उसका वर्णन करता है।

परमेश्वर के आत्मा के द्वारा चलाया जाना परमेश्वर के पुत्रों का मुख्य लक्षण है। पुत्रों की पहचान यह है कि वे अपने पिता की इच्छा और उसके लक्ष्य को समझते और पूरा करते हैं। इसमें यीशु, परमेश्वर का एकलौता पुत्र, सिद्ध आदर्श था। वह पिता के काम करता था, और पिता की इच्छा उसके लिए भोजन के समान थी। इसमें आत्मा का बड़ा भाग था (यशायाह 11:2; मत्ती 4:1; मरकुस 1:12; लूका 4:1, 14, 18; इब्रानियों 9:14; आदि)। ऐसा ही विश्वासियों में भी होता है, जिनमें आत्मा केवल बसता ही नहीं, बल्कि अगुवाई भी अपने हाथ में ले लेता है।

यहाँ पौलुस जीवन की किन्हीं विशेष परिस्थितियों का वर्णन नहीं करता, जिनमें हमें विशेष कार्य पूरे करने हों या दूरगामी निर्णय लेने हों। जैसा अपनी पत्नी के इन अध्यायों में कई बार देखा गया, उसकी चिन्ता मूलभूत बातों की है – सिद्धान्तों की, दो धाराओं की, जो एक दूसरे से स्पष्ट रूप से भिन्न हैं।

एक अविश्वासी शरीर के द्वारा चलाया जाता है, एक विश्वासी आत्मा के द्वारा। फिर भी यह किसी रोबोट का स्वचालित क्रम नहीं है, जो किसी विश्वासी को सहजता से निष्पापता तक पहुँचा दे। मसीही के जीवन की सामान्य रीति यही है कि वह अपने नए किए गए हृदय और सोच से आत्मा के द्वारा चलाया जाए। परन्तु वह हमेशा इस खतरे में रहता है कि शरीर के पीछे चले और उसके द्वारा चलाया जाए। इसलिए ये पद एक स्पष्ट आह्वान हैं कि हम सक्रिय और सचेत रूप से इसी आत्मा की सामर्थ्य में जीएँ और उसकी उपस्थिति, सामर्थ्य और सहायता के प्रति सजग रहें। यह यीशु का आत्मा है, लेपालकपन (पुत्रत्व) का आत्मा। दूसरे शब्दों में: जो आत्मा के द्वारा चलाए जाते हैं, वे वैसे ही जीते भी हैं, जैसे परमेश्वर के पुत्रों को जीना चाहिए।

“परमेश्वर के आत्मा की पहुँच हमारे जीवन के हर पहलू तक है, और इसलिए वह कोई निष्क्रिय निवासी नहीं, बल्कि परमेश्वर के पवित्र लोगों की अगुवाई करने के लिए एक सक्रिय सामर्थ्य प्रकट करता है।”⁴⁶ परमेश्वर के आत्मा की अगुवाई और मार्गदर्शन विश्वासी के व्यक्तित्व को इस प्रकार निष्क्रिय नहीं कर देते कि वह दूर से नियंत्रित या हेरफेर किए गए व्यक्ति की तरह व्यवहार करे या ऐसा अनुभव करे। आत्मा वह करने की सामर्थ्य देता है, जो परमेश्वर चाहता है। एक व्यक्ति के रूप में मैं जो कुछ करता हूँ, उसकी ज़िम्मेदारी हमेशा मुझ पर होती है, और इसलिए निर्णय लेनेवाला हमेशा मैं ही होता हूँ। परमेश्वर का धन्यवाद हो कि मसीही की इच्छा निरन्तर नई की जाती है (रोमियों 12:2; कुलुस्सियों 3:10), ताकि वह परमेश्वर की इच्छा को पहचान सके और पूरा कर सके। आत्मा इस सोच और कार्य को सहारा देता है। यह अधिकतर इस प्रकार होता है कि हमें इसका पता भी नहीं चलता या हम इसे अनुभव भी नहीं करते। इसके अतिरिक्त हमारे जीवन की विशेष चुनौतियों के लिए आत्मा का कोई विशेष कार्य भी हो सकता है – विशेष परिस्थितियों के द्वारा, आत्मा के हम से बात करने के द्वारा, विश्वासी भाई-बहनों के द्वारा। इसके विषय में नया नियम अपेक्षाकृत कम ही बात करता है।

आत्मा की अगुवाई कोई रहस्यवाद (भीतरी आवाज़ों और अनुभूतियों को लगातार सुनते रहना) नहीं है, और न उसमें कोई “परिस्थिति-नीतिशास्त्र” शामिल है, जिसमें हम हर परिस्थिति में नए प्रकाशन या निर्देश पर निर्भर हों। आत्मा की अगुवाई हमारे व्यक्तित्व और उसकी नई की गई सोच को इस दिशा में दृढ़ करती है कि हम परमेश्वर की इच्छा को पहचानें और जो सही तथा उत्तम है, वही करें। आत्मा की अगुवाई सबसे बढ़कर बाइबल के निर्देशों और आज्ञाओं के ढाँचे के भीतर चलती है। रोमियों 8 के इस संदर्भ में बात शरीर और पाप पर विजय की है।

फिर भी: आत्मा केवल सामर्थ्य ही नहीं देता, वह महिमा की ओर मार्ग पर हमारा “स्काउट”, हमारा पथ-प्रदर्शक, भी है। हमारी कठिनाई यह है कि वह अदृश्य है, और इसलिए हमें उसकी उपस्थिति और उसके कार्य (अर्थात् उसकी अगुवाई) पर भरोसा करना है।

8.4 पद 15: लेपालकपन का आत्मा हम में पुकारता है: “हे प्रिय पिता!”

क्योंकि तुम्हें दासत्व का आत्मा नहीं मिला कि फिर भयभीत हो, परन्तु लेपालकपन का आत्मा मिला है, जिसमें हम पुकारते हैं: अब्बा, हे पिता!

पिता और पुत्र का यह नया सम्बन्ध दासत्व का सम्बन्ध नहीं है। यह अध्याय 7 के अनुभव की याद दिलाता है। व्यवस्था के अधीन मनुष्य दासत्व में होता है। स्वामी का भय और असफल होने का भय अब अतीत की बात है। लेपालकपन का आत्मा हमें पिता के साथ संगति में जीने के योग्य बनाता है। यह संगति प्रार्थना और आराधना से भरी है, क्योंकि यहाँ आनेवाली पुकार (“अब्बा, हे पिता”) प्रार्थना या आराधना का शायद सबसे छोटा संभव रूप है। नए नियम में यह शब्द “अब्बा” केवल तीन बार आता है। गतसमनी की बारी में

46. Fred Stallan, *Was die Bibel lehrt*, Römerbrief, पृ. 230।

(मरकुस 14:36) परमेश्वर का पुत्र यीशु अत्यन्त व्याकुलता में अपने पिता को इसी प्रकार सम्बोधित करता है। यह पिता के लिए प्रयोग किया जानेवाला आत्मीय सम्बोधन है, जिसकी तुलना “प्रिय पिता” से या केवल “पापा” से की जा सकती है। ऐसी ही अभिव्यक्ति का प्रयोग पौलुस गलातियों की पत्रों में भी करता है (4:6)। सर्वशक्तिमान परमेश्वर को इस दुलार भरे नाम से पुकारना शायद आश्चर्यजनक लगे, परन्तु यह स्पष्ट करता है कि पुत्र होने का, अर्थात् सन्तान होने का, यह सम्बन्ध कितना हार्दिक है।

परमेश्वर की सेवा अब ऐसी बात नहीं रही, जिसमें भय और विवशता तथा आज्ञाओं और निषेधों का कठोरता से पालन मुख्य हो। बल्कि उसमें वह जीवन है, जो भय और डर से निर्धारित न होनेवाले सम्बन्ध में जिया जाता है और इसी सम्बन्ध से उत्पन्न होता है। यह सम्बन्ध परमेश्वर के प्रेम से, पिता द्वारा पूरी तरह स्वीकार किए जाने से और उसके आत्मा की उपस्थिति से भरा है, जो सचमुच हम में है – मौन दर्शक के रूप में नहीं, बल्कि सक्रिय सहायक के रूप में। हम परमेश्वर के पुत्र हैं, हमें स्वीकार किया गया है, उसके आत्मा के द्वारा हमारी अगुवाई और हमारा मार्गदर्शन होता है। यह तथ्य है! एक चूक, एक पाप, इस सम्बन्ध को नहीं तोड़ता; हम पुत्र और सन्तान बने रहते हैं। “दैनिक जीवन में अपने विश्वास को जीने के अपने ज़ोरदार आह्वान के बाद पौलुस अब हमारे हृदय को शान्ति देना चाहता है। मैं नहीं जानता कि आपके साथ कैसा है, परन्तु मुझे इस प्रोत्साहन की आवश्यकता है। क्योंकि ब्रह्माण्ड का पारलौकिक परमेश्वर ही वह है, जो रात के सन्नाटे में, या तब जब मैं कीचड़ में गिर पड़ा हूँ, मेरा हाथ थामता है और मुझे निमंत्रण देता है कि मैं उसे ‘पापा’ कहूँ।”⁴⁷

8.5 पद 16: हम परमेश्वर की सन्तान हैं!

आत्मा आप ही हमारी आत्मा के साथ गवाही देता है कि हम परमेश्वर की सन्तान हैं।

परमेश्वर का आत्मा हमारी आत्मा के साथ गवाही देता है कि हमें सचमुच परमेश्वर के साथ सन्तान के सम्बन्ध में लाया गया है। यहाँ किसी ऐसी आवाज़ से अभिप्राय नहीं है, जो हमारी आत्मा से कुछ पुकारकर कहे। बल्कि बात उस चीज़ की है, जो उस दृढ़ विश्वास को, उद्धार के उस निश्चय को, जो हमें परमेश्वर के वचन के द्वारा पहले ही मिल चुका है, और बढ़ाती और दृढ़ करती है।

परमेश्वर की इच्छा है कि पिता के साथ यह दृढ़ सम्बन्ध हर दिन हमारे विचारों में उपस्थित रहे। मेरे जीवन के सब क्षेत्रों के लिए यह निर्णायक महत्व रखता है कि मैं जानूँ कि एक प्रेमी पिता ने मुझे मसीह में बिना शर्त स्वीकार किया है। पिता मुझ से प्रेम करता है, और मैं उसके लिए इतना मूल्यवान हूँ कि उसने अपने पुत्र को मेरे लिए बलिदान के रूप में दे दिया। निःसंदेह वह मेरी ताड़ना भी करता है, जो उसके प्रेम का प्रमाण है (इब्रानियों 12:5)। सन्तान होने का अधिकार (यूहन्ना 1:12) स्वाभाविक रूप से कर्तव्य भी साथ लाता है। आइए, हम कभी न भूलें कि अब हम कौन हैं! इसमें पवित्र आत्मा हर दिन हमारी सहायता करता है।

47. Francis Schaeffer, *Allein durch Christus*, पृ. 216।

8.6 पद 17: हम मसीह की महिमा के वारिस हैं

और यदि सन्तान हैं, तो वारिस भी – परमेश्वर के वारिस और मसीह के संगी वारिस, यदि सचमुच हम उसके साथ दुःख उठाते हैं, ताकि उसके साथ महिमा भी पाएँ।

बात केवल परमेश्वर के साथ सम्बन्ध के उस आनन्द की नहीं है, जिसे हम महसूस और अनुभव कर सकते हैं। हम “कानूनी अर्थ में” भी सन्तान हैं, अर्थात् हम वारिस भी हैं। परमेश्वर हमारे सन्तान होने और अपने पिता होने को पूरी गम्भीरता से लेता है। जो परमेश्वर का है और जो वह अपने पुत्र को देगा, वह हमारा भी भाग है।

दुःख महिमा के दिन मीरास पाने की शर्त नहीं हैं। मसीह के कारण दुःख अधिकतर मसीहियों के लिए एक स्थायी साथी हैं। वे हमारे लिए कोई पराई बात नहीं होने चाहिए, क्योंकि यीशु दुःखों के इस मार्ग पर, जिन्हें उसने धार्मिकता के कारण सहा, हम से आगे चला है। जर्मनी और सब पश्चिमी देशों में ये दुःख अब तक हम से दूर रहे हैं – दूसरे देशों में हमारे विश्वासी भाई-बहनों के बिल्कुल विपरीत। यदि हमारे सामने भी कभी दुःखों का समय आए, तो यह बात लागू होती है: आइए, हम इस वचन को स्मरण करें, जिसे उस व्यक्ति ने लिखा, जो हर बात में, यहाँ तक कि अपनी मृत्यु में भी, मसीह के समान बनना चाहता था। दुःखों से होकर महिमा तक – कलीसिया के इतिहास में विश्वासयोग्य विश्वासियों का मार्ग अधिकतर यही रहा है।

“अभी से” हम परमेश्वर की सन्तान हैं और इसलिए वारिस हैं। मीरास पर हमने “अभी नहीं” अधिकार पाया है। उद्धार का निश्चयार्थ (इंडिकेटिव) हमारे सन्तान होने का वर्णन करता है; उद्धार के आज्ञार्थ (इम्पेरेटिव) में वे दुःख आते हैं, जो मीरास पाने की कोई पूर्व-शर्त तो नहीं, परन्तु अधिकतर यीशु के अनुसरण का एक अनिवार्य भाग हैं। यह भी कोई ऐसी चेतावनी नहीं, जो किसी अन्तिम असफलता की ओर संकेत करती हो। बल्कि हमें यह आह्वान दिया जाता है कि हम ऐसे अंगीकार करनेवाले बनें, जो विश्वासयोग्यता से यीशु के पक्ष में खड़े रहें।

9. रोमियों 12: सोच नई की जाती है!

रोमियों की पत्नी को सुसमाचार और परमेश्वर की धार्मिकता का भव्य महागिरजाघर कहा जा सकता है। सुसमाचार परमेश्वर का उद्धार लाता है: दोषमुक्ति, धर्मी ठहराया जाना, छुटकारा, मसीह के साथ एक किया जाना और सब कठिनाइयों, दुःखों और विरोध के बीच से होते हुए अन्त तक सुरक्षित रखा जाना!

परमेश्वर की सेवा करने के लिए मनुष्य को पाप के दोष और उसकी शक्ति से छुड़ाया जाना आवश्यक था, परन्तु उसे एक नए जीवन के लिए सामर्थ्य भी मिलनी थी। पौलुस ने 8वें अध्याय में इसका प्रभावशाली वर्णन किया है। हमारे चारों ओर का संसार और हमारी देह भी अभी नहीं बदले हैं, परन्तु यह अब केवल समय का प्रश्न है। हमारी देहों को बदल देने की परमेश्वर की प्रतिज्ञा एक तय की हुई बात है, जिसे वह उस समय पूरा करेगा, जिसे केवल वही जानता है। तब तक परमेश्वर हमारे पक्ष में खड़ा है: यदि वह हमारी ओर है, तो कौन हमारा विरोध करने का साहस कर सकता है?

फिर अध्याय 9 से 11 में पौलुस दूसरे प्रश्नों पर बात करता है, जिनका सम्बन्ध भी परमेश्वर की धार्मिकता से है। अध्याय 12 में वह परमेश्वर के लिए हमारी उस सेवा पर लौटता है, जिसके लिए हमें स्वतंत्र किया गया है। वहाँ फिर से बात हमारे व्यक्तिगत जीवन की है, जिसे हम नवीनता में और आत्मा के द्वारा जी सकते हैं। अब परमेश्वर की धार्मिकता, जो उद्धार में प्रकट हुई, दैनिक जीवन में भी दिखाई देनी चाहिए। अध्याय 5 से 8 में पौलुस ने अपेक्षाकृत अमूर्त और सैद्धान्तिक रूप से बात की थी। उसने नींव रखी, शिक्षा को समझाया। अब वह दिखाता है कि जीवन के छोटे-छोटे विवरणों में नवीनता कैसी दिखती है। वह यह आह्वानों, आज्ञार्थ वाक्यों, अपीलों – नए नियम की आज्ञाओं – के द्वारा करता है। ये मूसा की व्यवस्था का स्थान लेने के लिए नहीं आईं। सबसे पहले ये वचन हमें यह दिखाने के लिए हैं कि नया जीवन आखिर कैसा दिखता है। ये परमेश्वर के प्रेम के दिशा-संकेत हैं। हम इन आज्ञाओं के अनुसार इसलिए नहीं जीते कि धर्मी बनें, बल्कि इसलिए कि हम धर्मी हैं! ये आज्ञाएँ इस बात की अभिव्यक्ति हैं कि परमेश्वर कौन है और यीशु मसीह कौन है। नए नियम की 1000 से अधिक आज्ञाएँ परिणामस्वरूप उस सत्य का वर्णन करती हैं, जो यीशु में है। हम में उसका जीवन ठीक वही लक्षण दिखाता है, जिनका वर्णन नए नियम की आज्ञाओं में किया गया है। अब मसीह हम में है और आत्मा हम में है, ताकि हम ऐसा जीवन जी सकें। हमारा कर्तव्य है कि हम वैसे ही चलें, जैसे वह चला (1 यूहन्ना 2:6, 8)।

9.1 हमारे लिए परमेश्वर का लक्ष्य

हम में से हर एक के लिए परमेश्वर का लक्ष्य यह है कि हमें अपने पुत्र के समान बनाए। बाकी सब लक्ष्य इसी लक्ष्य के अधीन हैं। एक दिन यह पूरी तरह हो जाएगा। जब हम लक्ष्य पर पहुँचेंगे, तो इस स्वरूप में, मसीह की समानता में, जड़ नहीं हो जाएँगे; हम स्मारक नहीं बन जाएँगे। नहीं, हम सक्रिय मनुष्य होंगे – सदा के

लिए। हम परमेश्वर के पुत्र की तरह सोचेंगे, कार्य करेंगे, बोलेंगे और प्रेम करेंगे। इसमें हम सदा वही बने रहेंगे, जो हम परमेश्वर द्वारा सृजे गए व्यक्तित्वों के रूप में अपने जन्म से अभी तक रहे हैं। परन्तु तब हम अपने उद्देश्य तक पहुँच चुके होंगे और सदा उसी में जीएँगे। हम वही होंगे, जो हमें सदा से होना चाहिए था। यही हमारा सबसे बड़ा सौभाग्य है। परमेश्वर का आनन्द इसी में है कि वह हमें यह उपहार दे। इसके द्वारा उसके पुत्र का आदर होता है। अभी भी हम वह हो सकते हैं, जो हम सदा से होना चाहते थे। जब मसीह हम में है, तो आत्मनिर्णय में यह तथ्य शामिल है कि वह हमारे द्वारा जीता है!

यीशु के स्वरूप में बदले जाना, अर्थात् उसके अनुरूप ढलना, नया जन्म पाए हुए लोगों के रूप में हमारे जीवन के पहले ही दिन से आरम्भ हो गया है। यही मसीहियों के जीवन का कार्यक्रम है। बात अनन्तता की तैयारी की है। इसलिए यह जीवन और यह बात बहुत महत्वपूर्ण है कि हम इससे क्या बनाते हैं – या बेहतर करें, मसीह इससे क्या बना सकता है।

9.2 रोमियों 12:1-2: आराधना – एक तर्कसंगत बात!

इसलिए, हे भाइयो, मैं तुम से परमेश्वर की दया के द्वारा विनती करता हूँ कि अपनी देहों को जीवित, पवित्र और परमेश्वर को भानेवाला बलिदान करके चढ़ाओ; यही तुम्हारी तर्कसंगत सेवा (आराधना) है।

और इस संसार (इस युग) के सदृश न बनो, परन्तु तुम्हारे मन के नए हो जाने से तुम्हारा रूपान्तरण होता जाए, जिससे तुम परखते रहो कि परमेश्वर की भली, भावती और सिद्ध इच्छा क्या है।

यह सीधे 6वें अध्याय की ओर लौटना है। हमें अपनी देह को धार्मिकता के हथियारों के रूप में सौंपना (उसे उपलब्ध कराना) है। अब पौलुस और आगे जाता है और रोमियों को (हाँ, सब मसीहियों को) आह्वान देता है कि वे अपनी देहों को एक बलिदान की तरह पूरी तरह परमेश्वर की सेवा में दे दें। पुराने नियम के पशु-बलिदानों के विपरीत यह बलिदान जीवित है। इसलिए यह केवल एक बार नहीं, बल्कि लगातार चढ़ाया जाता है, क्योंकि हम अनन्त जीवन की नवीनता में चलते हैं। हमारा बलिदान पवित्र है, क्योंकि हम पहले से परमेश्वर द्वारा पवित्र किए गए लोग हैं। इसलिए यह एक भानेवाला बलिदान है। पूर्ण समर्पण का जीवन-दृष्टिकोण प्राप्त किए गए उद्धार का तर्कसंगत परिणाम है। इसीलिए पौलुस परमेश्वर की दया के द्वारा इस समर्पण के लिए आह्वान भी करता है। हमें किसी व्यवस्था के द्वारा नहीं, बल्कि परमेश्वर की दया के द्वारा आह्वान दिया जाता है कि हम अपना अस्तित्व परमेश्वर को उपलब्ध कराएँ। यह दया ठोस रूप से इस बात में प्रकट हुई: जो कुछ हमने अपराध किया था, और जो कुछ हम हैं (अर्थात् पाप के हाथ बिके हुए), वह सब उसने मसीह पर रख दिया। उसने अपने पुत्र को भी न छोड़ा! परमेश्वर की करुणा ने केवल हमारा उद्धार ही उत्पन्न नहीं किया, वह स्थायी रूप से उपस्थित भी रहती है, क्योंकि वह हमारा पिता है और हम उसकी सन्तान हैं।

यह बात अनदेखी नहीं की जानी चाहिए कि पौलुस यहाँ एक भाई के समान और प्रेमपूर्ण **विनती** (उपदेश) करता है। हर मसीही के लिए (चाहे वह विश्वास के मार्ग के आरम्भ में हो या बहुत समय से उस पर चल रहा हो) पूर्ण समर्पण की यह माँग बार-बार चुनौतीपूर्ण और प्रासंगिक है। हमें बार-बार इसके लिए “हाँ” कहना है। हर ईमानदार मसीही पाएगा कि दुर्भाग्य से उसके जीवन का समर्पण उतार-चढ़ाव से होकर गुज़रता है। समर्पण एक प्रक्रिया है, जिसका सम्बन्ध हमारी सोच से है। वहीं यह निर्णय होता है कि हम समर्पण के लिए तैयार हैं या नहीं और उसमें कितनी दूर तक जाते हैं। इसका दैनिक स्मरण एक सहायक बात है।

9.2.1 अपनी देहें!

जो अपनी देह को जीवित बलिदान के रूप में चढ़ाता है, उसकी पहचान किसी “असाधारण वीरता के कार्य” से नहीं होती, जैसी अन्यजातियों से उनके अन्यजाति देवताओं के प्रति अपेक्षा की जाती थी⁴⁸, बल्कि वह एक सामान्य, साधारण और निरन्तर परमेश्वर की ओर केंद्रित जीवन जीता है। इसमें कोई संदेह नहीं कि परमेश्वर के साथ ऐसे जीवन में ऊँचाइयाँ और गहराइयाँ, विजय और पराजय, ठोकर खाना और फिर उठ खड़ा होना – सब कुछ होता है। परन्तु उसमें अद्भुत रूप से उत्साह देनेवाले अनुभव और फल भी होते हैं। जब हम अपना जीवन परमेश्वर को सौंप देते हैं और इस प्रकार अनन्त, परन्तु अदृश्य परमेश्वर का हाथ पकड़कर चलते हैं, तो हमारा जीवन रोमांचक हो जाएगा।

परन्तु पौलुस उस “देह” की बात क्यों करता है, जिसे बलिदान किया जाना है? क्या हमारी सोच (जैसे पद 2 में) भी इसका भाग नहीं है? निश्चय ही, बात हमारे पूरे अस्तित्व के, हमारे पूरे जीवन के समर्पण की है। परन्तु इसकी अभिव्यक्ति तो हमारी देह के द्वारा ही होती है। देह उस संसार के साथ हमारा संपर्क-बिन्दु है, जिसमें हम जीते हैं। और यही देह हमारे उद्धार से पहले “पाप की देह” थी (रोमियों 6:6)। वह वह औज़ार थी, जिसके द्वारा पाप को हाथ और पाँव मिले। देह ने पापी आदतें विकसित कीं, एक पापी स्वतंत्र जीवन जिया और आज्ञापालन की माँग की। आइए, एक बार जाँचें कि हमारे जीवन के कितने क्षेत्र, और कितनी बार, हमारी देह से निर्धारित या प्रभावित होते हैं। कुछ ही उदाहरण यह दिखाएँगे कि अपने समर्पण में हम अपनी देह की भूमिका को आसानी से कम आँक सकते हैं। बात आदतों की है, या इस प्रश्न की कि हम कैसे, कितना, कब और क्या खाते-पीते हैं, सोने की आदतों की, और टेलीविज़न तथा इंटरनेट के प्रति हमारे व्यवहार की। ये सब पहलू हमारी देह पर प्रभाव डालते हैं और भीतर तक बैठ गए व्यवहार के तरीकों के रूप में पक्के हो जाते हैं। बात किसी “पापों की सूची” की नहीं, बल्कि इस बात की है कि हम अपनी देह की भूमिका और उसके अक्सर कम आँके गए प्रभाव को सही प्रकाश में देखें। यहाँ देह को बलिदान किया जाता है, अर्थात् हमारी देह की माँगों को छोड़ दिया जाता है, ताकि उसके स्थान पर उसे परमेश्वर को उपलब्ध कराया जा सके।

48. Fred Stallan, *Was die Bibel lehrt, Römerbrief*, Dillenburg 2001, पृ. 358।

पहले हमें “देह की क्रियाओं को मारना” है (रोमियों 8:13)। यह वचन भी देह की भूमिका पर ज़ोर देता है, परन्तु वह वास्तव में एक “शत्रुतापूर्ण” भूमिका है, क्योंकि देह ऐसी बातें करना चाहती है, जिन्हें हमें मारना है। पौलुस के एक दूसरे वचन का प्रयोग करें, तो ये शरीर के काम हैं (गलातियों 5:19), या वे अंग, जो पृथ्वी पर हैं (कुलुस्सियों 3:5)। जब पवित्र आत्मा की सामर्थ्य के द्वारा पापी आदतें नियंत्रण में आ जाती हैं, तो इस देह को अधिक से अधिक परमेश्वर को उपलब्ध कराने का मार्ग खुल जाता है। “पाप की देह” क्रूस पर नहीं चढ़ाई गई, क्योंकि तब तो हम मर गए होते। बल्कि गुलगुता पर उसे प्रभावहीन कर दिया गया। जो कभी पाप की देह थी, वह अब “धार्मिकता की देह” है! पौलुस अपनी देह को वश में करके दास बनाता है (1 कुरिन्थियों 9:27)। वह बाज़ी पलट देता है, और अब देह को उसके पीछे चलना पड़ता है। देह को अपनी पापी लालसाएँ और अत्यधिक आराम-पसन्दी थोपने नहीं देनी है: देह को परमेश्वर का होना है और धार्मिकता का हथियार बनना है।

9.2.2 संसार: मित्र या शत्रु?

अपनी देह के साथ हम संसार में जीते हैं। समाज ने (और पौलुस संसार से ठीक यही अर्थ लेता है) देह को काफ़ी हद तक सबसे महत्वपूर्ण चीज़ घोषित कर दिया है। पूरे-पूरे उद्योग वह सब कुछ प्रस्तुत करते हैं, जिसकी देह को आवश्यकता है या होनी चाहिए: वेलनेस, फ़िटनेस, खेल, स्वास्थ्य, सौन्दर्य, लम्बा जीवन, अच्छा खाना-पीना, चिकित्सा, सौन्दर्य-शल्यचिकित्सा। सिद्धान्त रूप में ऐसी बातों के विरुद्ध कुछ नहीं कहा जा सकता, जब तक वे परमेश्वर के प्रभुत्व के अधीन रखी जाएँ। प्रश्न यह है कि हम देह को कौन-सी भूमिका देते हैं। क्या वह दास है या स्वामी?

एक ठोस खतरा, जो हमें पूर्ण समर्पण से रोक सकता है, उस संसार में घात लगाए बैठा है, जिसमें हम जीते हैं। यह मनुष्यों का वह संसार है, जो हमें घेरे हुए है और जिसमें हम आते-जाते हैं (यद्यपि, जैसा यीशु कहता है, हम उसकी तरह इस संसार के नहीं हैं)। मनुष्यों ने परमेश्वर के बिना अपना जीवन व्यवस्थित कर लिया है। समाज, अर्थव्यवस्था और व्यापार, उद्योग, संस्कृति, धर्म, संगीत, दर्शन, अवकाश, मनोरंजन, भोजन, शिक्षा, पारिवारिक जीवन, नैतिकता – वह सब कुछ, जिससे जीवन बनता है, परमेश्वर को भूल जाने से संक्रमित और प्रभावित है: मनुष्य परमेश्वर को अपनी नाव में नहीं रखना चाहता (रोमियों 1:28)।

हमारे शरीर के लिए संसार लुभावना और आकर्षक है। हम तो संसार से ही आए हैं; हमारा शरीर वहीं घर पर था। अब हमें ध्यान रखना है कि हम संसार की तरह (अर्थात् संसार के लोगों की तरह) न जीएँ। संसार की जीवन-शैली एक जीवित बलिदान के पूर्ण समर्पण के बिल्कुल विपरीत है! संसार के लोग अपने लिए जीते हैं और अपने जीवन के लिए परमेश्वर की इच्छा के बारे में नहीं पूछते!

संसार (यूनानी *aion*) का अनुवाद “युग” भी किया जाता है। संसार का समय बीतता जा रहा है। यह संसार-युग अन्त के बिल्कुल निकट है: हम “अन्तिम दिनों में” जी रहे हैं। इसके अतिरिक्त संसार गलत दिशा में विकसित हो रहा है – और वह भी बढ़ती गति से। वह परमेश्वर से दूरी की ओर जा रहा है, परमेश्वर

से दूर, उसकी ओर नहीं। कुल मिलाकर यह युग उस “चौड़े मार्ग” के समान है (मत्ती 7:13-14), जो नीचे विनाश की ओर ले जाता है। यह युग एक नदी के समान है, जिसमें मरी हुई मछलियाँ धारा के साथ बहती हैं। जीवित मछली विपरीत दिशा में तैरती है; और संसार का रूप (उसका ढाँचा⁴⁹) न अपनाने का ठीक यही अर्थ है। संसार का अनुवाद “युग की आत्मा” (ज़माने की सोच) भी किया जाता है। मनुष्य की मानसिक दिशा, अर्थात् उसका मानसिक दृष्टिकोण, ही वह है, जो संसार को वह बनाता है जो वह है। इसके अतिरिक्त बाइबल कई बार और स्पष्ट रूप से कहती है कि शैतान स्वयं इस संसार का ईश्वर है, इस युग का सरदार।

संसार और उसकी (युग की) आत्मा बुरी है। परमेश्वर का वचन इसमें कोई संदेह नहीं छोड़ता (गलातियों 1:4)। और जो “संसार का मित्र” बनना चाहता है (क्योंकि उसके अनुरूप ढला हुआ जीवन अधिक आरामदायक है), वह अपने आप को परमेश्वर का शत्रु बनाता है (याकूब 4:4)। निश्चय ही सांसारिकता के कई स्तर हैं, वह कितनी दूर तक जा सकती है। आवश्यक नहीं कि उसने पूरे जीवन को अपनी पकड़ में ले लिया हो। शायद बात केवल एक या दूसरे क्षेत्र की हो, जीवन के किसी बड़े या केवल छोटे क्षेत्र की, जो सांसारिक रंग में रंगा है। इसलिए हर कोई अपने आप को जाँचे कि कहाँ संसार की सोच और जीवन-शैली चुपके से घुस आई है। मेरे पैसे के साथ क्या स्थिति है? मेरी सम्पत्ति, मेरे व्यावसायिक लक्ष्यों, विवाह में मेरे व्यवहार, मेरी प्रिय आदतों, मेरी मित्रताओं के साथ क्या स्थिति है?

संसार के सदृश न बनना, उसके अनुरूप न ढलना, बाहरी बातों से नहीं, बल्कि सबसे पहले सोच से आरम्भ होता है। कार्य से पहले विचार आता है, जैसे संसार के अनुरूप ढलने से पहले विचार आते हैं।

9.2.3 नई सोच के द्वारा परिवर्तन

परमेश्वर हमें बदलना चाहता है। वह चाहता है कि हम वह बनें, जो हम हैं! मसीह को हम में अधिक से अधिक रूप लेना है। मसीह को बढ़ना है, परन्तु हमें स्वयं घटना है। संसार की तरह जीना (उसकी सोच में और अपने बाहरी रूप में भी) ठीक उसका विपरीत है, जिसे परमेश्वर प्राप्त करना चाहता है। यह कैसे हो सकता है? अध्याय 5 से 8 में जो पहले ही समझाया जा चुका है, उसी के आधार पर अब एक क्रमिक परिवर्तन होता है, आत्मिक वृद्धि और पवित्रीकरण की एक प्रक्रिया। जो मनुष्य अभी-अभी विश्वास में आया है, उसके पास अब भी सोचने के अपने पुराने और अभ्यस्त ढर्रे होते हैं। ये किसी बटन के दबाने से मिट नहीं जाते। नवीनीकरण की प्रक्रिया के द्वारा उनके स्थान पर परमेश्वर द्वारा ढली हुई सोच आ जाती है।

पौलुस कई बार नवीनीकरण की निरन्तर प्रक्रिया की बात करता है। इसका अर्थ केवल सोचने की क्रिया से अधिक है:

- 2 कुरिन्थियों 4:16: दुःख और महिमा के तनाव के बीच भीतरी मनुष्य का दिन-प्रतिदिन नया होते जाना

49. यूनानी *schematizein*, अर्थात् किसी ढाँचे के अनुसार अपने आप को ढालना, या किसी पहले से दिए गए रूप के अनुसार बनने देना।

- इफिसियों 4:23: अपनी सोच में निरन्तर नए होते जाओ।
- कुलुस्सियों 3:10: नया मनुष्य निरन्तर नया होता जाता है।

रूपान्तरण हमारी सोच से आरम्भ होता है। मन (यूनानी **nous**) में विचारों की दुनिया, बुद्धि, सोच, समझ, सोच का केंद्र – सब शामिल हैं। “मन” शब्द के पीछे केवल शुद्ध सोच, अर्थात् तर्क-बुद्धि, से अधिक है। हृदय, जो बाइबल में सोच और इच्छा के लिए भी (और कभी-कभी भावना के लिए भी) आता है, “मन” की अवधारणा से अलग नहीं किया जा सकता। मन सोचने, चाहने और करने का नियंत्रण-केंद्र है। इसी नियंत्रण-केंद्र में क्रम देनेवाली, मूल्यांकन करनेवाली और खोज करनेवाली सोच की तथा निर्णय लेने की प्रक्रियाएँ चलती हैं। कार्य सोचने और निर्णय लेने का परिणाम है। “मन ... वह स्थान है, जहाँ पहचानने की प्रक्रिया होती है और जहाँ से विचार निकलते हैं। वह शब्दशः हमारे कार्यों के लिए, और इस प्रकार पूरे व्यावहारिक नीतिशास्त्र के लिए, ‘निर्णायक’ स्थान है।”⁵⁰

9.2.4 रूपान्तरण (मेटामॉर्फोसिस)

यूनानी पाठ में “रूपान्तरण” के लिए यही शब्द है। सोच का नवीनीकरण रूपान्तरण उत्पन्न करता है। हमारे विषय के संदर्भ में “मेटामॉर्फोसिस” शब्द सहायक है। हम यह शब्द प्राणी-जगत से जानते हैं। हम जानते हैं कि तितली परिवर्तन की सबसे आश्चर्यजनक प्रक्रियाओं में से एक से गुजरती है। रेंगनेवाली इल्ली (जो हमेशा सुन्दर नहीं दिखती) से, प्यूपा की अवस्था से होते हुए, एक उड़नेवाली तितली विकसित होती है। यह एक पहले से निर्धारित प्रक्रिया है, जिसमें समय लगता है, परन्तु जिसे रोका नहीं जा सकता। यह आश्चर्यजनक है कि हमें भी ऐसे ही एक मौलिक रूपान्तरण से गुजरना है और हम गुजर भी सकते हैं। इससे पता चलता है कि परिवर्तन, जैसा परमेश्वर चाहता है, सदा संभव है। उससे कुछ भी बाहर नहीं है। यह बहाना, कि यह या वह बात ऐसी ही है और ऐसी ही रहेगी, तब नहीं चलता, जब हम सोचते हैं कि एक कुरूप इल्ली एक अत्यन्त सुन्दर तितली बन सकती है। कीड़ा कीड़ा ही रहता है, वह वही जीव रहता है। परन्तु वह पूरी तरह बदल जाता है। क्या यह सुसमाचार की उस सामर्थ्य के समान नहीं, जो मनुष्य को सचमुच और गहराई से (हृदय में और उसकी सोच में) बदल सकती है?

यही शब्द “मेटामॉर्फोसिस” तब प्रयोग किया जाता है, जब रूपान्तर के पहाड़ पर यीशु चेलों के सामने रूपान्तरित होता है और परमेश्वर की महिमा का तेज धारण करता है। एक दूसरे संदर्भ में यही शब्द हमारे विषय में प्रयोग किया गया है: “परन्तु जब हम सब के उघाड़े चेहरे से प्रभु की महिमा को देखते हुए, उसी स्वरूप में महिमा से महिमा तक बदलते जाते हैं, जैसे प्रभु के द्वारा, जो आत्मा है” (2 कुरिन्थियों 3:18)। हमारे “मेटामॉर्फोसिस” का लक्ष्य मसीह का आदर्श है। परमेश्वर के इस लक्ष्य पर जितना जोर दिया जाए और जितनी बार इसे दोहराया जाए, कम है। यह कोई सपना नहीं, कोई अप्राप्य लक्ष्य नहीं, कोई नया भ्रम नहीं, जिसके द्वारा परमेश्वर हमें निराश करना चाहता हो। यह उसकी योजना और इच्छा है, जिसमें उसे बड़ा

50. Jürg Buchegger, *Ein Mensch, was ist das?*, Wuppertal, 2004, पृ. 211।

आनन्द है, और जिसे वह हम तक पहुँचाना चाहता है। इसलिए यह सफल भी होगा। यदि हम चाहें और यीशु मसीह को देखते रहें (उसके साथ, उसके वचन और उसके राज्य के साथ अपने आप को व्यस्त रखें), उसे अपना लक्ष्य बनाएँ, यदि वह सचमुच हमारे जीवन को भर दे, तो रूपान्तरण की प्रक्रिया सही दिशा में निर्धारित है।

9.2.5 नवीनीकरण क्यों?

जन्म से, स्वभाव से, हमारी सोच और हमारा मन ऐसा है, जिसका केंद्र परमेश्वर नहीं, बल्कि स्वयं वह है। जब कोई मनुष्य मन फिराता है, तो परमेश्वर उसमें कुछ नया सृजता है, वचन का बीज उसके हृदय में अंकुरित होता है; अब मसीह उसका जीवन है। अब इस जीवन को बढ़ना है, जैसा किसी शिशु के साथ होता है। यह वृद्धि भीतर की मनुष्य से सम्बन्धित है, और उसमें मन भी शामिल है। नवीनीकरण की यह प्रक्रिया पूरे जीवन चलती रहती है। वृद्धि मसीह में नए अस्तित्व के आधार पर होती है। मसीह में हम एक ही क्षण में परमेश्वर के सामने धर्मी और पवित्र हैं। यह केवल हमारी स्थिति की अभिव्यक्ति बनकर नहीं रहना चाहिए, बल्कि हमारे दैनिक जीवन में व्याप्त होना चाहिए। इसके लिए एक निरन्तर नवीनीकरण आवश्यक है, जो स्वयं परमेश्वर के द्वारा होता है और जो हमारी परिस्थिति को, जिसमें हम खड़े हैं, हमारे परिवेश को, जिसमें हम जीते हैं, और हमारी अपनी बनावट को (चरित्र, मिज़ाज, वरदान, कमज़ोरियाँ, हमारी जीवन-परिस्थिति आदि) पूरी तरह ध्यान में रखता है और इन बातों के अनुरूप होता है।

9.2.6 नवीनीकरण कैसे होता है?

यह स्वयं परमेश्वर के द्वारा होता है। रूपान्तरण एक आज्ञा है, जिसे हमें अपने साथ होने देना है। नवीनीकरण परमेश्वर का कार्य है। हम उसे उत्पन्न नहीं कर सकते। हमारा कार्य यह है कि हम अपना पूरा अस्तित्व परमेश्वर को सौंप दें और संसार के सदृश न बनें। नवीनीकरण की इस प्रक्रिया में यही हमारा योगदान है। यदि हम संसार में बहुत अधिक उलझे रहते हैं, संसार की सोच को सोचने, चाहने और करने के अपने नियंत्रण-केंद्र में आने देते हैं और उसके अनुरूप ढल जाते हैं, तो हम भी बदल जाते हैं और (धीरे-धीरे, परन्तु निश्चित रूप से) संसार के सदृश होना दिखाने लगते हैं। यह भीतर होता है और फिर, अनिवार्य परिणाम के रूप में, बाहर भी। यह प्रक्रिया अक्सर चुपके से, लगभग बिना ध्यान में आए, चलती है। संसार का विष आत्मिक जीवन को धीरे-धीरे मार डालता है, यहाँ तक कि उस प्रक्रिया का मुश्किल से पता चलता है।

इसके विपरीत है “परमेश्वर के संसार” में, उसके राज्य में, परमेश्वर के साथ संगति में जीवन, जहाँ मैं अपनी सोच को स्वयं उसके द्वारा भरने, व्यवस्थित करने और दिशा देने देता हूँ। इस स्थिति में भी आवश्यक नहीं कि मैं स्वयं नवीनीकरण की प्रक्रिया को अनुभव करूँ।

नवीनीकरण किसके द्वारा होता है? इसके बारे में यहाँ कुछ नहीं कहा गया। यह परमेश्वर का सार्वभौम कार्य है। वह परमेश्वर के वचन का उपयोग करता है – सीधे पढ़ा गया हो या प्रचार में सुना गया हो। वह शान्ति, प्रार्थना और आराधना का, नवीनीकरण और सुधार को सचेत रूप से स्वीकार करने का उपयोग करता है। वह विश्वासियों की संगति का उपयोग करता है। वह जीवन की हर परिस्थिति, हर अनुभव का उपयोग करता है। सब कुछ पिता की ओर से ताड़ना, प्रशिक्षण और शिक्षा है। इसलिए मैं इस नवीनीकरण को तेज़ कर सकता हूँ और सहारा दे सकता हूँ, परन्तु उसी प्रकार रोक भी सकता हूँ। मैं संसार के अधिक सदृश बनने का निर्णय ले सकता हूँ, जैसे मैं यीशु के अधिक समान बन सकता हूँ। यह निर्णय हमारे सामने केवल एक बार नहीं, बल्कि अन्ततः हर दिन होता है।

9.2.7 युद्धभूमि: विचारों की दुनिया

“मैं सोचता हूँ, इसलिए मैं हूँ।” हमारे विचार हमारे जीवन के संकेत-अक्षर, अर्थात् उसका कोड, हैं। उन्हें प्रभावित करना या उन्हें दिशा देना तक परमेश्वर के शत्रु का सबसे बड़ा लक्ष्य है। जो नियंत्रण-कक्ष पर प्रभुत्व रखता है, उसके हाथ में सब कुछ है। यह भी आवश्यक नहीं कि जीवन के सब क्षेत्रों पर लागू हो, परन्तु हमारे व्यवहार पर इसका व्यापक प्रभाव हो सकता है। शैतान एक बड़े कदम से, या लम्बे समय में बहुत से छोटे-छोटे कदमों से, हमारे विचारों की दुनिया में गढ़ खड़े करने में सफल हो सकता है (2 कुरिन्थियों 10:3-5):

“क्योंकि यद्यपि हम शरीर में चलते-फिरते हैं, तो भी शरीर के अनुसार नहीं लड़ते; क्योंकि हमारी लड़ाई के हथियार शारीरिक नहीं, पर गढ़ों (किलेबन्दियों) को ढा देने के लिए परमेश्वर के द्वारा सामर्थी हैं; इसलिए हम कल्पनाओं को और हर एक ऊँची बात को, जो परमेश्वर की पहचान के विरोध में उठती है, खण्डन करते हैं, और हर एक भावना को कैद करके मसीह का आज्ञाकारी बना देते हैं।”

“पहले लक्ष्य, जिन्हें नष्ट किया जाना है, हमारे सिरों के भीतर के ‘गढ़’ हैं। यहाँ प्रयोग किए गए यूनानी शब्द का वास्तविक अर्थ ‘किलेबन्दी’ है। किलेबन्दियाँ सोचने के नकारात्मक ढर्रे हैं, जो या तो लगातार दोहराए जाने से या किसी आघात पहुँचानेवाली घटना से हमारे मस्तिष्क में गहराई से अंकित हो गए हैं।”⁵¹

सोचने के ढर्रे और आदत बन चुके व्यवहार या प्रतिक्रियाएँ, अन्य बातों के साथ, बाहरी प्रभावों से भी उत्पन्न होती हैं: “ये परिवेश के प्रभाव हर बार भले ही थोड़े समय के रहे हों, परन्तु उनका असर स्थायी रहा। इनमें उदाहरण के लिए कुछ विशेष घटनाएँ, स्थान और मुलाकातें तथा व्यक्तिगत अनुभव शामिल हैं। इसके अतिरिक्त हमें उन पुस्तकों ने ढाला है जो हमने पढ़ीं, उन फ़िल्मों ने जो हमने देखीं, उस संगीत ने जिसे हम सुनना पसन्द करते हैं ... हमने एक ऐसी पद्धति विकसित कर ली है – जो शायद (या शायद नहीं) परमेश्वर

51. Neil T. Anderson, *Neues Leben – neue Identität*, 1994, Lage, पृ. 153।

की इच्छा के अनुरूप हो – कि हम इन बातों को कैसे पचाते हैं और उनसे उत्पन्न हुए संघर्षों को कैसे सुलझाते हैं। आपके जीवन में स्थायी प्रभाव आपके परिवेश के साथ लम्बे समय तक चलनेवाले सम्बन्धों से आते हैं, जैसे परिवार, मित्रों और परिचितों, पड़ोसियों, शिक्षकों, सहकर्मियों का प्रभाव।

आत्मिक नए जन्म में आपके सब पाप तो धो दिए गए, परन्तु सोचने और व्यवहार करने के आपके अब तक के ढर्रे, जो अपने परिवेश के अनुरूप ढलने से बने थे, आपके शरीर (यूनानी *sarx*) में जड़ पकड़े रहे। सचमुच ऐसा हो सकता है कि कोई नया जन्म पा ले और फिर भी अपनी अब तक की ‘नास्तिक’ जीवन-शैली को बनाए रखे (यह उन लोगों पर भी उतना ही लागू होता है, जो मसीही वातावरण में बड़े हुए हैं; लेखक की टिप्पणी)। इसलिए पौलुस हमें आग्रहपूर्वक उपदेश देता है कि हम अपनी मनोवृत्ति के नए हो जाने के द्वारा बदल जाएँ (रोमियों 12:2)।”⁵²

आदत से अपनाई और सीखी हुई हर बात उस नवीनीकरण के द्वारा बदली जा सकती है, जिसे परमेश्वर स्वयं हमारी सोच और हमारे जीवन में करना चाहता है – यदि हम उसे होने दें। परमेश्वर की ओर से ऐसे हथियार हैं, जो हमारी सोच की (आंशिक रूप से) शारीरिक प्रोग्रामिंग को बदलने में हमारी सहायता करते हैं।

9.2.8 हम यह युद्ध कैसे जीत सकते हैं?

सबसे पहले हमें परमेश्वर के प्रति समर्पण के – और संसार के प्रति अस्वीकार के – उस मूल दृष्टिकोण की आवश्यकता है, जिसका ऊपर उल्लेख किया गया। बाइबल और भी संकेत देती है:

- (नियमित) बाइबल-पठन के द्वारा अपने आप को परमेश्वर के वचन से भरने देना
- मसीह की शान्ति को राज्य करने देना (कुलुस्सियों 3:15)
- मसीह के वचन को अपने में अधिकाई से बसने देना (कुलुस्सियों 3:16)।

किलेबन्दियाँ और कल्पनाएँ अधिकतर शैतान के झूठ होते हैं। इन झूठों का भंडाफोड़ करने के लिए हम ज्योति और धार्मिकता के हथियारों का प्रयोग करते हैं। जब कोई विचार या विचारों का कोई ढरा उभरता है, जब कोई किलेबन्दी आक्रमण के लिए अपने फाटक खोलती है, तब यह ज़ोरदार आह्वान इसी पर केंद्रित है कि उस विचार को तुरन्त कैद करके मसीह की आज्ञाकारिता में लाया जाए। मसीह अधिक शक्तिशाली है। वही विजयी है।

झूठ की किलेबन्दियों के उदाहरण:

- भय और भ्रम
- भविष्य का भय और असफलता का भय

52. Neil T. Anderson, पूर्वोक्त, पृ. 155।

- हीनता की ग्रंथियाँ और आत्म-मूल्य की समस्याएँ
- अशान्ति और घबराहट
- विचारों में आनेवाली परीक्षाएँ
- मन पर हावी हो जानेवाली बाध्यकारी धारणाएँ
- मनुष्यों, वस्तुओं, चीजों, धन-सम्पदा, सम्पत्ति, मानवीय सुरक्षाओं और अभिलाषाओं पर निर्भरता।

इन सब झूठों का हमें भंडाफोड़ करना है और उन्हें कैद करके मसीह के अधिकार के अधीन लाना है। बहुत से मामलों में उत्तर यह होता है कि हम मसीह में सुरक्षित हैं और सदा के लिए परमेश्वर की प्रिय सन्तान हैं और परमेश्वर की देखभाल के विषय में जानते हैं। पाप को अब हमें दबाने और सताने का कोई अधिकार नहीं है। मसीह ने हमें स्वतंत्र किया है।

9.2.9 दिवास्वप्न और मनचाही कल्पनाएँ

मनुष्य के सोचने की क्षमता प्रभावशाली है। विचारों में मनुष्य एक पैसा खर्च किए बिना यात्राओं पर जा सकता है। वह एक समानान्तर संसार बना सकता है, जिसमें वह अपनी वे इच्छाएँ पूरी करता है, जो वास्तविक जीवन में उसे नहीं मिलीं: वह कोई सितारा बन सकता है, लॉटरी जीत सकता है और उसके पास एक सिद्ध परिवार, कोई दूसरी पत्नी या कोई दूसरा पति हो सकता है; यह सब और इससे भी बहुत अधिक विचारों में संभव है। परन्तु आइए, सावधान रहें! ये विचार केवल समय ही नहीं छीनते, बल्कि हमें एक ऐसे संसार का भ्रम देते हैं, जो है ही नहीं। ये सपने और इच्छाएँ, जब आदत बनकर पक्की हो जाती हैं, हमारी सोच और हमारे निर्णयों को प्रभावित करेंगी। इन सपनों की धुरी हम स्वयं हैं! ऐसे कार्यों की कल्पना करना खतरनाक है, जो केवल एक स्वप्न-संसार में होते हैं। मनुष्य वास्तविकता से सम्बन्ध खो बैठता है।

“मनुष्य का मन एक भटकनेवाला मन है, और एक भटकनेवाला मन एक दुखी मन है।”⁵³ अमेरिकी शोधकर्ता एक अध्ययन में एक आश्चर्यजनक परिणाम पर पहुँचे। उसके अनुसार मनुष्य आधे समय मानसिक रूप से अनुपस्थित रहते हैं। वे अपने विचारों में खोए रहते हैं, इस-उस बात पर सोचते रहते हैं या बस सपने देखते हैं। समस्या: विचारों का भटकना स्पष्टतः दुखी बनाता है। भले ही यह निष्कर्ष हमेशा सही न हो, फिर भी यह हमें इस बात पर सोचने को विवश करता है कि हमारे प्राणों का शत्रु इस प्रकार हानि पहुँचा सकता है।

हम इसके विरुद्ध क्या करें? कुछ सुझाव, जो हमारे विचारों की दुनिया के गुरुत्वाकर्षण और उसकी अपनी गति के विरुद्ध टिके रहने में सहायता करते हैं:

- सामान्य रूप से और सदा यह लागू होता है: आइए, हम उस पर ध्यान केंद्रित करें जो हम अभी कर रहे हैं, अर्थात् इस क्षण पर, ताकि अपने कार्य और कर्तव्य अच्छी तरह पूरे करें!

53. लेखक अज्ञात।

जब हम जो चाहें वह करने के लिए स्वतंत्र हों:

- आइए, हर उस बात के लिए प्रार्थना करें, जो हमारे मन में आती है! आइए, हर बात को प्रार्थना बना दें!
- आइए, बाइबल या कोई आत्मिक रूप से मूल्यवान पुस्तक पढ़ें!
- आइए, बाइबल के वचन कंठस्थ करें, ताकि हाथ में बाइबल न होने पर भी परमेश्वर के वचनों पर मनन कर सकें! शायद हमें कभी बाइबल के बिना भी एक समय देखना पड़े!
- आइए, सोचें कि आज हम प्रभु यीशु के लिए कोई सेवा कैसे कर सकते हैं!
- आइए, प्रभु यीशु पर मनन करें, सुसमाचारों की किसी ऐसी घटना पर, जो हमें याद है!
- आइए, उठें और कुछ सक्रिय करें! आइए, चलें-फिरें, कुछ करें!
- आइए, किसी से बातचीत करें! आइए, किसी को फ़ोन करें और उससे पूछें कि वह कैसा है!

9.2.10 परमेश्वर की इच्छा – परखी हुई और अच्छी पाई गई!

... जिससे तुम परखते रहो कि परमेश्वर की भली, भावती और सिद्ध इच्छा क्या है।

परमेश्वर की इच्छा संसार के युग के विपरीत है। इस युग को (संसार के लोगों को) इससे लगभग कोई मतलब नहीं कि परमेश्वर क्या चाहता है। परन्तु यह आग से खेलना है – शब्द के सबसे सच्चे अर्थ में। यूहन्ना इस इस प्रकार कहता है (1 यूहन्ना 2:15-17):

“तुम न तो संसार से और न संसार में की वस्तुओं से प्रेम रखो। यदि कोई संसार से प्रेम रखता है, तो उसमें पिता का प्रेम नहीं है; क्योंकि जो कुछ संसार में है, अर्थात् शरीर की अभिलाषा और आँखों की अभिलाषा और जीविका का घमण्ड, वह पिता की ओर से नहीं, परन्तु संसार ही की ओर से है। संसार और उसकी अभिलाषाएँ दोनों मिटते जाते हैं, पर जो परमेश्वर की इच्छा पर चलता है, वह सर्वदा बना रहेगा।”

संसार की एक समाप्ति-तिथि है। और जो ध्यान से देखता है, वह देखता है कि वह तिथि लगभग बीत चुकी है। जो संसार मनुष्य ने अपने लिए बनाया, वह विनाश के लिए ठहराया गया है। उसमें और उस पर कुछ भी ऐसा नहीं, जो समय-सीमा बढ़ाए जाने को उचित ठहराए। मृत्यु की गन्ध उससे चिपकी हुई है। और ऐसा प्रतीत होता है कि आज ऐसे मसीही हैं, जो सड़ाँध की इस गन्ध को अब पहचानते ही नहीं।

केवल परमेश्वर स्वयं भला और सिद्ध है, और यही बात उसकी इच्छा पर भी लागू होती है, जो इसके अतिरिक्त भावती भी है। यह पुराने नियम के उन बलिदानों की याद दिलाता है, जिन्हें बिना दोष और निष्कलंक होना पड़ता था। केवल वही बढ़ाए जा सकते थे। इसी प्रकार जीवन की हर परिस्थिति में परमेश्वर की इच्छा को पहचानते हुए देह में हमारा पूरा अस्तित्व (जिसमें भीतरी मनुष्य भी शामिल है) परमेश्वर को बलिदान के रूप में बढ़ाया जाना चाहिए। हमारे मन का निरन्तर नवीनीकरण परमेश्वर की इच्छा को

पहचानना संभव बनाता है। जाँच-सूचियाँ और अच्छी सलाहें सहायक हो सकती हैं, परन्तु परमेश्वर हमारी सोच में भी वे पूर्व-शर्तें उत्पन्न करना चाहता है, जिनसे हम उसकी इच्छा को पहचान सकें।

9.3 रोमियों 13:13-14: मसीह को पहन लेना – शरीर के लिए कोई प्रबंध नहीं

जैसा दिन को सोहता है, वैसा ही हम सीधी चाल चलें; न रंगरलियों और पियक्कड़पन में, न व्यभिचार और लुचपन में, न झगड़े और डाह (ईर्ष्या) में; परन्तु प्रभु यीशु मसीह को पहन लो, और शरीर की अभिलाषाओं को पूरा करने के लिए उसका प्रबंध न करो।

रोमियों की पत्री का अध्ययन समाप्त करने से पहले हम इस स्थान को भी देखते हैं, क्योंकि अध्याय 8 के बाद केवल यही स्थान “शरीर” का उल्लेख करता है।

हमारे लिए परमेश्वर का लक्ष्य हमारे अन्तिम दिन तक बना रहता है: वह हमें अपने पुत्र के स्वरूप में बदलना चाहता है। बात यीशु के जीवन की नकल की नहीं है; हमें बड़ई नहीं बनना है। बल्कि बात यह है कि हम अपने जीवन में, अपने व्यक्तिगत व्यक्तित्व के अनुरूप, यीशु के स्वभाव को अधिक से अधिक अपनाएँ। इसमें उसका प्रेम, उसकी सच्चाई, उसकी धार्मिकता शामिल है – अन्ततः वह सब, जो हम उसमें नैतिक गुणों के रूप में पहचान सकते हैं। उसने हमें नया जीवन पहले ही दे दिया है; अब हमें उसे विकसित होने के अवसर देने हैं और अपने जीवन में प्रभु को बढ़ने देना है, परन्तु स्वयं को पीछे रखना है।

यह वचन हमें आह्वान देता है कि हम प्रभु यीशु मसीह को एक वस्त्र की तरह पहन लें। यह सचमुच एक सशक्त रूपक है, जिसे और अधिक समझाया नहीं गया। भक्तिहीन संसार की रात में पाप हर रूप में होता है, और लोग सार्वजनिक रूप से भी उससे संकोच नहीं करते। इसके विपरीत परमेश्वर की इच्छा है, जो सब कुछ निर्धारित करती है। हम में शरीर नहीं दिखाई देना चाहिए – इस प्रकार कि हम उसकी अभिलाषाओं के आगे झुक जाएँ – बल्कि यीशु मसीह दिखाई देना चाहिए।

यहाँ भी इस ओर संकेत किया गया है कि विचारों में बहुत कुछ हो सकता है और होने दिया जा सकता है, इससे पहले कि अभिलाषा वास्तव में तृप्त की जाए और मनुष्य परीक्षा के आगे हार जाए। शरीर की देखभाल या उसका पालन-पोषण नहीं किया जाना चाहिए। श्लाखटर (Schlachter) बाइबल इसका स्पष्ट अनुवाद करती है: “शरीर का ऐसा पालन-पोषण न करो कि अभिलाषाएँ भड़क उठें” (Schl 2000, जर्मन बाइबल अनुवाद)। हमें शरीर के विचारों और क्रियाओं को मारना है! एक ऐसे समझौताहीन दृष्टिकोण की आवश्यकता है, जिसका वर्णन पौलुस ने रोमियों 8 में विस्तार से किया है। “एक सुखद, संघर्ष-रहित जीवन की इच्छा हमें बहका सकती है कि हम अपने शरीर को बचाने के लिए महत्वपूर्ण निर्णयों और उनके परिणामों से कतराएँ। परन्तु इससे हम अनिवार्य रूप से उसका पालन-पोषण करेंगे, और वह बिना रोक-टोक फल ला सकता है। यदि शरीर की देखभाल और पालन-पोषण किया जाए, तो वह हमारे जीवन में अपनी तानाशाही स्थापित कर लेगा। यदि असंगति के कारण उसे छोड़ दिया जाए और उसकी लालसा तृप्त की जाए, तो वह और अधिक भूखा और कामुक होता जाएगा। शरीर का पालन-पोषण (जैसा आज बहुत बार

दावा किया जाता है) आत्म-स्वीकृति और व्यक्तित्व के विकास के काम नहीं आता, बल्कि ऐसी अभिलाषाएँ भड़काता है, जो परमेश्वर के विचारों के विरुद्ध हैं।”⁵⁴

9.4 निष्कर्ष

जो अपनी देह और अपना जीवन परमेश्वर की वेदी पर चढ़ाता है, वह अपना जीवन, अपना “मैं”-वाला जीवन, खो देता है। परन्तु प्रभु यीशु आशय के रूप में क्या कहता है? “जो अपना ‘मैं’-वाला जीवन खोएगा, वह उसे पाएगा” (तुलना करें लूका 9:24; 17:33)। जिम इलियट (Jim Elliot) ने लिखा: “वह मूर्ख नहीं, जो वह दे देता है जिसे वह रख नहीं सकता, ताकि वह पाए जिसे वह खो नहीं सकता।”⁵⁵

यदि हम तैयार हों, तो परमेश्वर हमारी सोच को आगे भी बदलता रहेगा। तब हम इस स्थिति तक पहुँचेंगे कि परमेश्वर की इच्छा पर चलते हुए हमें ऐसा लगेगा मानो हम अपनी इच्छा पूरी कर रहे हों। यही स्वतंत्रता की व्यवस्था है (याकूब 1:25; 2:12): स्वेच्छा से और हृदय से वही चाहना, जो परमेश्वर चाहता है। यही एकमात्र जीवन है, जो सार्थक है। पर जो परमेश्वर की इच्छा पर चलता है, वह सर्वदा बना रहेगा!

54. Walter Nitsche, *Versagen und innere Zerrissenheit*, पृ. 76।

55. मूल शब्द इस प्रकार हैं: “He is no fool who gives what he cannot keep to gain what he cannot lose.”

10. पुराना और नया – एक सिंहावलोकन

पुराना	नया	संदर्भ
पुरानी बातें बीत गईं	नई बातें हो गई हैं	2 कुरिन्थियों 5:17
आदम में	मसीह में	रोमियों 5:12 – 8:11 आदि
पापी	धर्मी	रोमियों 5:19
		रोमियों 6:6; इफिसियों
पुराना मनुष्य	नया मनुष्य	4:20-24; कुलुस्सियों 3:9-11
पाप की देह	अपनी देह और अपने अंगों को परमेश्वर को बलिदान करना	रोमियों 6:6, 12-23; 8:13; 12:1-2
शरीर में	आत्मा में	रोमियों 8:8-9
पाप और मृत्यु की व्यवस्था	जीवन की आत्मा की व्यवस्था	रोमियों 8:2
शरीर (हम में)	पवित्र आत्मा (हम में)	रोमियों 8:1-11; गलातियों 5
पाप – उसके प्रभुत्व में, उसके हाथ बिका हुआ	पाप के लिए मरा हुआ: जीवन की नवीनता; “मरे हुआं में से जी उठे हुए”	रोमियों 6 (और रोमियों 8)
आत्मिक मृत्यु	नया आत्मिक जीवन, जीवित किया गया	1 कुरिन्थियों 15:45; 1 यूहन्ना 3:14; इफिसियों 2:5; आदि
शरीर (उससे कुछ लाभ नहीं; वह व्यक्ति परमेश्वर की व्यवस्था पूरी नहीं कर सकता)	नए सिरे से जन्मा	यूहन्ना 3; 6:63 रोमियों 8:7
अन्त में: मृत्यु	लक्ष्य पर: अनन्त जीवन	रोमियों 6:21-23
मरना	नवीनीकरण	रोमियों 6:21; इफिसियों 4:22-24

पार्थिव – अंग, जो पृथ्वी पर हैं: व्यभिचार, अशुद्धता, कामुकता, बुरी लालसा, लोभ, क्रोध, रोष, बैरभाव आदि	स्वर्गीय – बुलाहट, लक्ष्य	कुलुस्सियों 3:1-11; 1 कुरिन्थियों 15:48-49
अपने आप से भरा हुआ: जब तक मसीह हम में नहीं, हम में कोई भलाई नहीं।	हम में मसीह	कुलुस्सियों 3:11; गलातियों 2:19-20; आदि रोमियों 7:18

11. शरीर क्या है?

मसीहियों के बीच शरीर को अक्सर “पुराना स्वभाव” कहा जाता है, उस “नए स्वभाव” के विपरीत, जो हमें नए जन्म में मिला है। दूसरे वर्णन ये हैं: आदम का स्वभाव, पापी स्वभाव, शारीरिक स्वभाव, मानवीय या आत्म-केंद्रित, पापमय, पुराना या पार्थिव अस्तित्व। यद्यपि ये शब्द सहायक हैं, फिर भी नया नियम इसे सदा “शरीर” कहता है।

“शरीर” से अभिप्राय मनुष्य पर पाप के द्वारा पड़ी उस छाप से है, जो उसके दैहिक और मानसिक अस्तित्व में जड़ पकड़े हुए है।⁵⁶

शरीर शब्द (जर्मन: Fleisch, यूनानी sarx) विभिन्न अर्थों में आता है। अधिकतर मामलों में बात मनुष्य की होती है। शब्द का अर्थ हर बार उसके पाठ-संदर्भ में स्पष्ट करना पड़ता है। इसमें बात नैतिक पहलू की, या सृष्ट-भौतिक पहलू की, या मनुष्य के शरीर के नश्वर (यशायाह 40:6-8), असहाय (यिर्मयाह 17:5, 7) अर्थात् निर्बल पहलू की हो सकती है, वैवाहिक एकता की (उत्पत्ति 2:24; 1 कुरिन्थियों 6:16), पारिवारिक रिश्तेदारी की (रोमियों 1:3; 9:3) या पूरी मानवजाति की (रोमियों 3:20)। पौलुस इस शब्द का प्रयोग कुल 78 बार (जिनमें से 63 बार रोमियों और गलातियों की पत्रियों में) पतित और पापी मानवीय अस्तित्व के नाम के रूप में करता है।

इस प्रकार पौलुस “शरीर” शब्द का प्रयोग नैतिक अर्थ में करता है। इसी अर्थ में पतरस (1 पतरस 2:11; 2 पतरस 2:10, 18) और यूहन्ना (1 यूहन्ना 2:16) भी इसका प्रयोग करते हैं। याकूब अभिलाषा की बात करता है (याकूब 4:1-3)।

“शरीर” की अवधारणा – “आत्मा” के विपरीत – “पक्ष परिवर्तन (Seitenwechsel)” के विषय के लिए केंद्रीय महत्व रखती है। जब बात मसीही जीवन के संघर्ष की हो, तो मूल कथन पौलुस का यह निष्कर्ष है:

“शरीर आत्मा के विरोध में लालसा करता है, और आत्मा शरीर के विरोध में; क्योंकि ये एक दूसरे के विरोधी हैं” (गलातियों 5:17)।

मसीही के जीवन में ऐसे दो दल आमने-सामने नहीं खड़े होते, जैसे हर मनुष्य में कम या अधिक मात्रा में होते हैं। बात केवल बुराई और भलाई के बीच उस खींचतान की नहीं है, जो हर मनुष्य में कम या अधिक होती है। यहाँ बात एक दूसरे ही आयाम की है: आत्मा पवित्र आत्मा है, स्वयं परमेश्वर, जो विश्वास में आए

56. Roland Antholzer, Gemeindeorientierte Initiative für biblische Beratung e.V. (GIBB)।

हुए मनुष्य के शरीर द्वारा शासित जीवन में आकर बस गया है। शरीर मनुष्य होने का वह भाग है, जो नए जन्म के बाद मसीही में आदम में पुराने जीवन से अब भी बचा रह गया है।

दैनिक जीवन में (जर्मन में) **Fleisch** शब्द – हिन्दी में “मांस” – तब प्रयोग होता है, जब बात कसाई और भोजन की हो, और शरीर-रचना-विज्ञान में भी, जब बात मनुष्य के ऊतक की हो। ये दोनों बाइबल में इस शब्द के प्रयोग से मेल खाते हैं। बहुत बार इससे बस मनुष्य की देह अभिप्रेत होती है (जैसे रोमियों 2:28)। परन्तु शब्द का अर्थ केवल भौतिकता से आगे जाता है। शरीर (अपने पार्थिव अस्तित्व में मनुष्य) केवल निर्बल, क्षणभंगुर और नश्वर ही नहीं है। बल्कि पाप के कारण उसने ऐसे लक्षण अपना लिए हैं, जो परमेश्वर के स्वभाव के विपरीत हैं। शरीर का वह अर्थ, जिसमें पौलुस उसे रोमियों 7 और 8 में तथा अन्य स्थानों पर प्रयोग करता है, मनुष्य के भौतिक पहलू का नहीं, बल्कि उसके नैतिक और आचारिक पक्ष का वर्णन करता है। इसलिए शरीर का अर्थ है मानवीय अस्तित्व की नश्वरता और मानवीय स्वभाव का पतित होना। “शरीर मानवीय स्वभाव है, जैसा वह पाप के कारण बन गया है।”⁵⁷

नैतिक और आचारिक पहलू यह बताता है कि मनुष्य कैसा है: उसकी प्रेरणा क्या है, उसके लक्ष्य क्या हैं, वह परमेश्वर के प्रति कैसा व्यवहार करता है, अपने साथी मनुष्यों के प्रति कैसा? बात उसके अस्तित्व की, उसकी प्रकृति की, नैतिक दृष्टि से उसके स्वभाव की है, जिसे परमेश्वर के अस्तित्व और स्वभाव से मापा जाता है। शरीर (अर्थात् मनुष्य का अस्तित्व और उसके जीवन की दिशा) सच्चे परमेश्वर की ओर उन्मुख नहीं है, यद्यपि वह धार्मिक हो सकता है। प्रभु यीशु ने नीकुदेमुस को स्पष्ट किया कि नया जन्म आवश्यक है, क्योंकि जो शरीर से जन्मा है, वह शरीर है (यूहन्ना 3:5-8)। क्योंकि परमेश्वर के सम्बन्ध में शरीर से कुछ लाभ नहीं (यूहन्ना 6:63), इसलिए कुछ नया उत्पन्न करने के लिए परमेश्वर से, आत्मा से, जन्म आवश्यक है।

11.1 पाप और शरीर

पाप एक सिद्धान्त है, जो परमेश्वर के विरुद्ध है और उसके अधिकार के एकाधिकार को अस्वीकार करता है। यह सिद्धान्त तब भी था, जब अभी कोई “शरीर” (यूनानी **sarx**) नहीं था – सृजे गए मनुष्यों के, मांस और लहू से बने प्राणियों के अर्थ में। शैतान ने, जो शायद सबसे ऊँचा सृजा गया आत्मिक प्राणी था, अपनी स्वतंत्रता का दुरुपयोग करके इसी सिद्धान्त का अनुसरण किया। पहले मनुष्य आदम ने एक साधारण आज़ा का उल्लंघन करके पाप के लिए द्वार खोल दिया। इसके साथ पाप मनुष्य में, और वह भी उसके सबसे गहरे अस्तित्व और सत्ता तक (उसके हृदय में), प्रवेश कर गया। तब से पाप हर मनुष्य में बसता है (रोमियों 7:17); वह एक **पापी** है। आदम ने अपना स्वभाव अपने सब वंशजों को दे दिया। इस प्रकार हम जन्म से पापी बन गए।

57. William Barclay, **Fleisch oder Geist**, Augsburg, 1968, पृ. 19।

शरीर स्वयं मनुष्य है – उसका अस्तित्व, उसका व्यक्तिगत व्यक्तित्व, जो उसमें बसे हुए पाप से निर्धारित होता है। पौलुस इसे संक्षेप में स्पष्ट कर देता है, जब वह कहता है: “मैं ... शारीरिक हूँ, पाप के हाथ बिका हुआ” (रोमियों 7:14)। यहाँ पाप स्वामी और दासों से काम लेनेवाला है, और शरीर (अर्थात् मनुष्य) उसका दास। पाप और शरीर एक दूसरे से घनिष्ठ रूप से गुँथे हुए हैं, लगभग एक दूसरे के स्थान पर रखे जा सकते हैं।

शरीर केवल परमेश्वर के विरुद्ध विद्रोह का एक सिद्धान्त नहीं है (जैसे पाप), बल्कि उससे मसीह के बिना हर मनुष्य भी, उसकी व्यक्तिगतता में, अभिप्रेत है। शरीर व्यक्तित्व और चरित्र की विशेषताओं का मेल है। नैतिक दृष्टि से शरीर पाप का औज़ार है। मेरा शरीर, अर्थात् मेरी काया, पाप के दासत्व में है। पाप देह के द्वारा (अर्थात् हाथों, पाँवों और जीभ से) किए जाते हैं। इसलिए देह केवल एक तटस्थ औज़ार नहीं है, बल्कि पापी आदतों, लालसाओं और अभिलाषाओं से चिह्नित भी है।

11.2 शरीर और अविश्वासी मनुष्य

“शरीर” के विषय में कहीं भी कोई सकारात्मक बात प्रमाणित नहीं की जा सकती। परमेश्वर की दृष्टि में शरीर सुधारा नहीं जा सकता। शरीर के इस अर्थ का पहला संकेत, जिसका विस्तृत विकास नए नियम में जाकर होता है, जलप्रलय से कुछ पहले मनुष्य के विषय में परमेश्वर का यह कथन है: “और परमेश्वर ने पृथ्वी पर दृष्टि की, और देखो, वह बिगड़ी हुई थी; क्योंकि सब शरीर ने पृथ्वी पर अपनी चाल बिगाड़ ली थी” (उत्पत्ति 6:12; देखें पद 3 भी)।

अविश्वासी मनुष्य “शरीर के अनुसार” और “शरीर में” है (रोमियों 8:5-8)। परमेश्वर की पवित्रता और धार्मिकता की दृष्टि से उसका पूरा अस्तित्व “शरीर” के सिवा कुछ नहीं, अर्थात् एक पापी प्राणी के सिवा कुछ नहीं, जो अपनी ही सोच, अपनी अभिलाषाओं (अनुचित इच्छाओं) और अपनी प्रवृत्तियों से निर्धारित होता है। अविश्वासी को शारीरिक नहीं कहा जाता। यह शब्द केवल उन मसीहियों के लिए प्रयोग होता है, जो पुराने स्वभाव के पीछे चलते हैं, यद्यपि उन्हें अपने में बसे आत्मा के द्वारा वास्तव में आत्मिक जीवन जीना चाहिए (1 कुरिन्थियों 3:1)।

मसीह से दूर मनुष्य उस पर दृष्टि करता है, जो आँखों के सामने (अर्थात् दृश्य) है। अन्यजातियाँ (जो “जीवन की चिन्ताओं”⁵⁸ में उलझी रहती हैं) पार्थिव, अर्थात् इसी संसार से सम्बन्धित, वस्तुओं की खोज में रहती हैं और उनके लिए सब कुछ लगा देती हैं, यह समझे बिना कि सब वस्तुओं का देनेवाला परमेश्वर है (मत्ती 6:32)। इस अर्थ में शरीर इसी संसार की ओर उन्मुख है और दृश्य बातों पर केंद्रित है। वह दृश्य से चिपका रहता है – उससे, जो प्रतीत होता है कि सुरक्षित है। यह भी शरीर का एक लक्षण है, जिसे पहली दृष्टि में ऐसा पहचाना नहीं जाता, क्योंकि अपने अस्तित्व के लिए **व्याकुल चिन्ता** को हम अक्सर सकारात्मक रूप से गम्भीरता से लिए गए उत्तरदायित्व-बोध के रूप में देखते हैं।

58. तुलना करें लूका 8:14।

11.3 शरीर और मसीही

मसीही अब “शरीर में” नहीं है; वह “मसीह में” और “आत्मा में” है। परन्तु शरीर अब भी हम में उपस्थित है, यद्यपि अब उस स्थिति में नहीं, जिसमें उसे हमारी सोच और हमारे कार्यों को निर्धारित करने की अनुमति हो। वह पवित्र आत्मा का, और इस प्रकार मसीही का, प्राणघातक शत्रु बना रहता है। उसके पास अब भी यह संभावना है कि वह किसी मसीही के जीवन को निर्धारित करे और उसकी पहचान बन जाए, यदि हम उसे स्वीकार न करें जो परमेश्वर ने हमारे लिए किया है, और शरीर की क्रियाओं पर मृत्युदंड को स्वयं लागू न करें (रोमियों 8:13)। परमेश्वर ने यीशु में पाप और शरीर को दोषी ठहराया और क्रूस पर चढ़ाया। इसे हमने विश्वास में स्वीकार किया है, और इसी रूप में हम अपने भीतर के शरीर को देखते हैं। फिर भी वह अब भी हम में है, अपनी प्रकृति में बिना बदला हुआ। शरीर की अभिलाषा के साथ दृढ़ता से निपटने (अर्थात् शरीर को कोई स्थान न देने) के बहुत से जोरदार निर्देश यह मानकर चलते हैं कि यह शरीर अब भी हम में है।

यीशु ने नीकुदेमुस के सामने शरीर की व्यर्थता और अक्षमता को प्रमाणित किया। “यीशु फिर से समस्या की जड़ पर आता है और दिखाता है कि शरीर को आत्मिक बनाना पूरी तरह असंभव है। जो शरीर से जन्मा है, वह शरीर है, और वह कभी कुछ और नहीं होगा। वह भली-भाँति शिक्षित शरीर हो सकता है, सुसंस्कृत शरीर, जीवन का बड़ा अनुभव रखनेवाला शरीर, नैतिक रूप से अच्छा शरीर, हाँ, धार्मिक शरीर भी – फिर भी वह शरीर ही रहता है।”⁵⁹

“शरीर पापमय बना रहता है! क्या हमने पूरी सचेतता से इस बात के लिए अपने आप को तैयार किया है कि अपनी पार्थिव दशा में हमारे पास एक ऐसा ‘शरीर’ है, जिसे अब भी परमेश्वर की व्यवस्था का विरोध करने की लालसा है और जो बड़ी तत्परता से पाप के औज़ार के रूप में अपने आप को प्रस्तुत करता है? क्या हम इसके लिए तैयार हैं?”⁶⁰

परन्तु हमें शरीर की केवल उपस्थिति और उसके जीवन के लक्षणों को ही पाप नहीं कहना चाहिए। पाप तब होता है, जब हम शरीर के आगे झुक जाते हैं और शरीर की हलचलों तथा कामों को चलने देते हैं और उन्हें मारते नहीं। समय के साथ हम अपने शरीर की पूर्ण और अपरिवर्तनीय बुराई को अधिक से अधिक पहचानेंगे, बिना शरीर के अनुसार जीए। शरीर एक जंगली पशु के समान है, बहुत सी भुजाओंवाले एक ऑक्टोपस के समान। हमारे जीवन में जितनी अधिक आत्मिक समझ आती है, उतनी ही स्पष्टता से हमें अपने ही शरीर की पूर्ण भ्रष्टता का बोध होता है। यह आत्म-ज्ञान उस अनुग्रह और प्रेम के ज्ञान के साथ-साथ बढ़ना चाहिए, जिसमें मसीह हमारे लिए मरा। जो अपने शरीर की दुष्टता और पतन से निराश है, उसने अभी यह नहीं समझा कि शरीर से कोई अपेक्षा नहीं की जा सकती और वह सुधारा नहीं जा सकता।

59. Ruth Paxson, *Life on the Highest Plane*, पृ. 190।

60. Walter Nitsche, *Versagen und innere Zerrissenheit*, पृ. 11।

परमेश्वर ने निर्णय लिया है कि वह शरीर को हम से नहीं हटाएगा। विश्वासी में शरीर की उपस्थिति और उसकी आक्रामकता स्पष्टतः आत्मिक वृद्धि के लिए आवश्यक है:

- यह हमारी भीतरी निर्बलता को प्रकट करता है।⁶¹
- यह हमारे घमण्ड और हमारे अहंकार को मारता है।
- यह हमें बार-बार दीन करता है।
- यह हमें लगातार प्रेरित करता है कि सहायता के लिए परमेश्वर को पुकारें।
- यह हमें मानवीय प्रयास की व्यर्थता दिखाता है।
- यह हमें केवल प्रभु पर भरोसा करना सिखाता है।
- यह हमें उस उद्धारकर्ता से प्रेम करने तक ले जाता है, जिसने हमें पाप से बचाया।
- यह हमें निरन्तर पश्चाताप के जीवन तक लाता है।
- यह हमें पाप के आक्रमणों के प्रति सतर्क बनाता है।
- यह स्वर्ग की लालसा को बढ़ाता है।
- यह हमें प्रेरित करता है कि ईश्वरीय अनुग्रह की सब संभावनाओं का लाभ उठाएँ।
- यह हमें पवित्र (या अच्छी और आत्मिक) आदतें विकसित करने के लिए उत्साहित करता है।
- यह हमें प्रेरित करता है कि अपने भाइयों और बहनों की सहायता लें।

शरीर हमें इस बात तक लाता है कि हम हर दिन समाधान खोजें, और वह भी उस बात के प्रकाश में, जो परमेश्वर अपने वचन में इसके विषय में हम से कहता है। हमें किसी अचानक चमत्कार की प्रतीक्षा नहीं करनी है। परमेश्वर उन समस्याओं को, जिनका सम्बन्ध हमारे शरीर से है, बस “जादू” से गायब नहीं कर देता, क्योंकि हमें कार्य करना है और हम कर भी सकते हैं, क्योंकि उसने हमें वह दे दिया है जिसकी हमें विजयी जीवन के लिए आवश्यकता है।

इसे हम विशेष रूप से अगले अध्याय में और गहराई से देखेंगे। इसमें एक से अधिक बार बातें दोहराई जाएँगी। यही बात उसके बाद के अध्यायों पर भी लागू होती है। सब अध्याय अन्ततः एक ही विषय पर बात करते हैं, परन्तु भिन्न-भिन्न दृष्टिकोणों से। परन्तु क्योंकि यह एक ही विषय है – आदम से मसीह की ओर पक्ष परिवर्तन (Seitenwechsel) – इसलिए किसी एक दृष्टिकोण को विस्तार से देखते समय हम फिर से विभिन्न ऐसी बातों पर विचार करेंगे, जिन पर हम पहले ही विचार कर चुके हैं। एक दृष्टिकोण दूसरे दृष्टिकोणों या पहलुओं का सहारा लेता है। एक पहलू को दूसरों से अलग करके नहीं समझाया जा सकता।

61. <http://www.keepbelieving.com/sermon/2001-08-26-Full-Speed-Ahead-One-Step-at-a-Time-How-You-Can-Walk-in-the-Spirit-Every-Day/>

12. शरीर बनाम आत्मा

शरीर आत्मा के विरोध में लालसा करता है, और आत्मा शरीर के विरोध में; क्योंकि ये एक दूसरे के विरोधी हैं।

गलातियों 5:17

गलातियों ने प्रभावशाली रूप से अनुभव किया था कि सुसमाचार ने क्या कर दिखाया: वे धर्मी ठहराए गए और उन्हें आत्मा मिला, जिसने चिन्हों और आश्चर्यकर्मों में पुष्टि की कि स्वयं परमेश्वर इस महिमामय सुसमाचार-सन्देश का स्रोत था। परन्तु क्या हुआ था? यहूदीवादी, जो व्यवस्था के शिक्षकों के रूप में सक्रिय हो गए थे, पौलुस के पीछे-पीछे आए और नई स्थापित कलीसियाओं में मूसा की व्यवस्था लागू करने का प्रयत्न किया। उन्होंने व्यवस्था को उद्धार और जीवन के लिए आवश्यक बताकर प्रस्तुत किया, और विशेष रूप से यहूदी मसीहियों ने शायद इस पर सकारात्मक प्रतिक्रिया दी होगी। यही गलातियों को लिखी पत्रों का कारण है, जिसमें पौलुस इसका कड़ा विरोध करता है: जब सुसमाचार में व्यवस्था मिलाई जाती है, तो सुसमाचार की नींव पर आघात होता है। व्यवस्था और सुसमाचार के साथ दो असंगत संसार आपस में टकराते हैं।

12.1 समस्या क्या थी?

व्यवस्था को फिर से लागू करने के साथ गलाती व्यवस्था के युग में, और इस प्रकार शारीरिक जीवन में भी, वापस गिर गए। उन्होंने यह दावा करते हुए व्यवस्था की शरण ली कि वह उद्धार के लिए और जीवन के मानदंड के रूप में आवश्यक है। शायद पौलुस के सामने भी उन्होंने यही राय रखी होगी। परन्तु प्रेरित उन्हें स्पष्ट करता है कि इस मार्ग से उनका उद्धार नहीं होगा। इसके अतिरिक्त (और यह हमारे मुख्य विषय से सम्बन्धित है) यह प्रकट हुआ कि वे व्यवस्था का पालन नहीं कर सकते थे। वे एक दूसरे के साथ ऐसे शिकारी पशुओं की तरह व्यवहार करते थे, जो मानो एक दूसरे की आँखें नोचते और एक दूसरे को निगल जाते हैं। पौलुस थोड़े व्यंग्य से कहता है कि वे सावधान रहें कि एक दूसरे को खा न जाएँ। इस प्रकार वह इस तथ्य को सब के सामने उजागर करता है कि उनका व्यवस्था-प्रेम और उनकी तथाकथित व्यवस्था-निष्ठा उलटा असर करनेवाली थी। उससे कुछ भी भला नहीं निकला। गलाती भूल गए थे कि व्यवस्था का, और इस प्रकार शरीर का, युग बीत चुका था। पुरानी व्यवस्था-प्रणाली समाप्त कर दी गई थी। अब आत्मा और स्वतंत्रता का युग आरम्भ हो चुका था।

शरीर (पुराना पतित आदम का स्वभाव) को व्यवस्था और उसकी आज्ञाओं और निषेधों की आवश्यकता होती है। परन्तु वह शक्तिहीन है और शक्तिहीन ही रहता है: व्यवस्था नहीं, बल्कि मनुष्य असफल हुआ।

पौलुस इसके सामने क्या रखता है? परमेश्वर के आत्मा को। यह पत्नी तोराह के स्थान पर परमेश्वर के आत्मा के पक्ष में एक प्रभावशाली वकालत है! परमेश्वर का आत्मा, जिसे मसीह ने भेजा है, हर बात के लिए पर्याप्त है! पौलुस कहता है कि उसी के द्वारा हम जीते और चलते हैं। मसीह केंद्र है, हमारे धर्मो ठहराए जाने की नींव; आत्मा वह है, जिसके द्वारा हम जीते हैं और मसीह के स्वभाव को पहन लेते हैं। परन्तु लक्ष्य व्यवस्थाहीनता नहीं है; मसीह की व्यवस्था अब परमेश्वर के आत्मा के द्वारा हमारे दैनिक जीवन में वास्तविकता बनती है।

12.2 शरीर का कार्य

जंगली पशुओं की ओर यह संकेत हमें कुछ हद तक दिखाता है कि हमारा शरीर कैसा है। शरीर एक शिकारी बिल्ली के समान है, जो सदा शिकार और प्रभुत्व की ताक में रहती है। सर्कस में ऐसी बड़ी बिल्लियों को रिंगमास्टर वश में करता है, परन्तु यह केवल आत्मविश्वासपूर्ण व्यवहार और लगातार नियंत्रण रखनेवाली दृष्टि से ही संभव होता है। यह दृष्टिकोण हमारे लिए भी एक आदर्श है। इसके विषय में बाद में और।

क्योंकि गलाती आत्मा के स्थान पर व्यवस्था से प्रेम करते थे, इसलिए शरीर के काम सामने आए। उनका आपसी व्यवहार शारीरिक (अर्थात् पापी) आचरण से निर्धारित था। आत्मा और शरीर के संघर्ष में पौलुस की चिन्ता यह नहीं है कि हमारे भीतर क्या होता है, बल्कि यह कि आपस में क्या होता है। इस संघर्ष में बात भीतर की ओर मुड़े हुए ध्यान और आत्म-निरीक्षण की – उसकी जो मेरे भीतर चलता है – नहीं है, बल्कि ऐसे व्यवहार की है, जिसे दूसरे अनुभव करते हैं: या तो घमण्ड की लालसा और डाह, या दूसरे का भार उठाने की तत्परता (5:26 – 6:2)। पहले का स्रोत शरीर है। आत्मा दूसरे की भलाई चाहता है, जैसे वह यीशु मसीह के द्वारा साकार हुई। इसलिए उसे हम में आत्मा के फल के द्वारा रूप लेना है, जो उसके स्वभाव की अभिव्यक्ति के सिवा कुछ नहीं। शरीर के मेरे हुए काम, जो मृत्यु के लिए ठहराए गए आदम की गवाही देते हैं, विश्वासियों की संगति से निकाल दिए जाने चाहिए। यह केवल आत्मा के कार्य के द्वारा ही संभव है। ईश्वरीय फल अपने प्रयत्न से नहीं बढ़ेगा, बल्कि परमेश्वर उसे उत्पन्न करता है, जो अकेला ही बढ़ती देता है।

आत्मा और शरीर एक अन्तहीन संघर्ष में हैं। बात दो बड़े सिद्धान्तों की है, जिनका प्रतिनिधित्व एक ओर पापी स्वभाव करता है और दूसरी ओर परमेश्वर का आत्मा। हम सब व्यक्तिगत रूप से इससे प्रभावित हैं, क्योंकि शरीर अब भी हम में बसता है। और पवित्र परमेश्वर अपने पवित्र आत्मा को लगाकर उसका सामना करता है। आश्चर्यजनक! इतनी सामर्थ्य की आवश्यकता होगी – स्वयं परमेश्वर इस लड़ाई को अपने हाथ में लेने के लिए हमारे पास उतर आता है।

गलातियों की पत्त्री में आत्मा और शरीर के संघर्ष का मुख्य उद्देश्य यह नहीं दिखाना है कि हमारे सीने में दो हृदय धड़कते हैं। यह हमारे भीतर किसी लगातार चलनेवाले संघर्ष की शिक्षा नहीं देती (जैसा कुछ-कुछ रोमियों 7 में वर्णित है)। बल्कि बात सबसे पहले परमेश्वर के घराने के लोगों के आपसी व्यवहार की है। बात उसकी नहीं, जो मैं अकेले में अनुभव करता हूँ, बल्कि इसकी है कि जब हम एक दूसरे के साथ संगति रखते

हैं, तब हम कैसे होते हैं। निःसंदेह बात हमारे भीतर के संघर्ष की भी है, क्योंकि हमारे भीतर स्वयं शरीर है, जबकि साथ ही परमेश्वर का आत्मा हम में बसता है। शरीर की हलचलें तब भी होती हैं, जब हम अकेले होते हैं।

बड़े विषय के ढाँचे में गलातियों की पत्री में इस त्वरित प्रवेश के बाद हम पत्री से सबसे पहले वह एकत्र करते हैं, जो हम मसीहियों के रूप में बन गए हैं। आत्मा और शरीर के संघर्ष पर पौलुस पत्री के अन्त में जाकर ही बात करता है।

12.3 गलातियों की पत्री में मसीही

- यीशु ने हमारे पापों के लिए अपने आप को बलिदान कर दिया (1:4)।
- इस वर्तमान बुरे संसार (या वर्तमान युग) से छुड़ाए गए (1:4)
- मसीह यीशु में स्वतंत्रता (2:4; 5:1)
- मसीह पर विश्वास के द्वारा धर्मो ठहराए गए (2:16-17)
- व्यवस्था के लिए मर गए (2:19)
- परमेश्वर के लिए जीना (2:19)
- मसीह के साथ क्रूस पर चढ़ाए गए (2:19)
- मसीह विश्वासी में जीता है (2:20)
- मसीह के प्रिय (2:20)
- आत्मा पाया (3:2, 5)
- विश्वास के द्वारा आशीष पाए हुए (3:9)
- व्यवस्था के शाप से मोल लेकर छुड़ाए गए (3:13)
- पवित्र आत्मा की प्रतिज्ञा पाई (3:14)
- जीवन व्यवस्था से नहीं, बल्कि विश्वास से (3:21-22)
- विश्वास के द्वारा परमेश्वर के पुत्र (3:26)
- हमने मसीह को पहन लिया है (3:27)।
- हम मसीह में हैं (3:28; 5:6)।
- हम मसीह के हैं (उसकी सम्पत्ति) (3:29; 5:24)।
- लेपालकपन के लिए मोल लेकर छुड़ाए गए (4:5-6)
- पुत्र का आत्मा हमारे हृदयों में है (4:6)।
- परमेश्वर हमारा प्रिय पिता है (4:6)।
- परमेश्वर के द्वारा वारिस (4:7)
- मसीह हम में रूप लेता है (4:19)।
- आत्मा के अनुसार (आत्मा से) जन्मे (4:29)

- परमेश्वर द्वारा बुलाए गए (5:8, 13)
- हम आत्मा के द्वारा चलते हैं (5:16, 25)।
- आत्मा हमारी अगुवाई करता है (5:18)।
- हम आत्मा के द्वारा जीवित हैं (5:25)।
- परमेश्वर के राज्य के वारिस (5:21)
- अनन्त जीवन (पुनरुत्थान में) (6:8)
- विश्वासी घराने के लोग (6:10)
- संसार के लिए क्रूस पर चढ़ाए गए (6:14)
- एक नई सृष्टि (6:15)।

यह परमेश्वर के उद्धार-कार्य का एक विशाल योग है। यही उद्धार का निश्चयार्थ (इंडिकेटिव) है – वह, जो “अभी से” पृथ्वी पर विश्वास के द्वारा हमारी सम्पत्ति है। उद्धार की इस सूची को विस्तार से अपने ध्यान में लाने के बाद हम इसी दृष्टिकोण से इस पर विचार करते हैं कि हमें शरीर और उसकी अभिलाषाओं के साथ कैसे निपटना है और आत्मा का फल कैसे बढ़ सकता है।

12.4 व्यवस्था और शरीर – एक ही यंत्र के दो गियर

ऐसा क्यों है कि पौलुस गलातियों को लिखी इस पत्री में शरीर की लालसा और अभिलाषाओं के विषय पर इतनी ठोस बात करता है? वह दिखाता है कि व्यवस्था ने उन्हें पवित्र जीवन तक पहुँचने में कोई सहायता नहीं की। इसके विपरीत, व्यवस्था ने गलातियों के पुराने जीवन को फिर से सामने ला दिया। व्यवस्था अपने निषेधों और आज्ञाओं के द्वारा पाप और शरीर (यूनानी **sarx**) की लालसा को भड़काती है (देखें रोमियों 7 भी)। पौलुस तुरन्त इसका प्रमाण देता है: गलाती उस व्यवस्था का पालन नहीं करते थे, जो पड़ोसी से प्रेम करने की माँग करती थी। यह आज्ञा भी (जो केवल मूसा की ही नहीं, बल्कि मसीही आज्ञा भी है) उनके लिए कठिन थी, क्योंकि वे एक दूसरे के साथ मित्रता के सिवा सब कुछ बरतते थे (गलातियों 5:15)। व्यवस्था-निष्ठा का दावा और वास्तविकता एक दूसरे से बहुत दूर थे। शरीर और व्यवस्था एक साथ जुड़े हैं, क्योंकि व्यवस्था स्वाभाविक, बिना नया जन्म पाए मनुष्य को सम्बोधित करती है। यह बन्धन, जो विश्वास में आए हुए व्यक्तियों में तोड़ दिया जाता है, गलातियों ने फिर से जोड़ लिया। क्या इस प्रकार वे पुराने मनुष्य को फिर से जीवित नहीं कर रहे थे? परन्तु पौलुस उन्हें दिखाता है कि आत्मा में जीवन की नवीनता कैसी दिखती है।

12.5 प्राचीन ब्रह्मांडीय और वर्तमान व्यक्तिगत संघर्ष

मानव इतिहास के आरम्भ में पतन हुआ। उसके परिणामस्वरूप स्त्री के वंश और सर्प के, अर्थात् शैतान के, वंश के बीच बैर ठहरा दिया गया (उत्पत्ति 3:15)। मसीह स्त्री का वंश है और सर्प का सिर कुचलेगा, यद्यपि पीड़ा सहते हुए। यह बैर – अन्ततः ज्योति और अन्धकार के बीच का संघर्ष – ब्रह्मांडीय और सर्वव्यापी प्रकार

का है, परन्तु वह हर मसीही के भीतर भी आ पहुँचा है। नए जीवन के द्वारा और मसीही के हृदय में आत्मा के आ बसने के द्वारा वहाँ अब दो विरोधी ध्रुव हैं, जिन्हें कभी एक दूसरे के अनुरूप नहीं बनाया जा सकता और जिनकी दिशा कभी एक नहीं की जा सकती – दो प्रकार के स्वभावों के बीच एक युद्ध। दो सेनापति, अर्थात् आत्मा और शरीर, एक दूसरे के आमने-सामने खड़े हैं और एक दूसरे से लड़ते हैं। “मसीही एक ही समय में शरीर और आत्मा के बीच के संघर्ष का मंच भी है और विषय भी, रणभूमि भी है और युद्ध का पुरस्कार भी।”⁶² ये विरोधी कोई युद्धविराम नहीं जानते। कभी नहीं। जहाँ कहीं हम हैं, वहाँ शरीर भी है; हम उसे अपने साथ लिए फिरते हैं। परन्तु परमेश्वर का सामर्थी आत्मा भी हम में है। वह इस संघर्ष में हमारी सहायता के लिए सदा हमारे साथ खड़ा रहता है। बेहतर कहें: वह इस लड़ाई का नेतृत्व करना चाहता है। परन्तु पौलुस लगातार चलनेवाली लड़ाई पर नहीं, बल्कि आत्मा के द्वारा दैनिक जीवन पर ज़ोर देता है। मसीही निश्चिन्त हो सकता है कि आत्मा प्रबल होगा। अपवाद, अर्थात् चूकें, इसी नियम की पुष्टि करते हैं!

12.6 आत्मा के द्वारा जीवित रहिए और चलिए!

आत्मा में (आत्मा के द्वारा) चलो, तो तुम शरीर की लालसा किसी रीति से पूरी न करोगे।

क्योंकि शरीर आत्मा के विरोध में लालसा करता है, और आत्मा शरीर के विरोध में; क्योंकि ये एक दूसरे के विरोधी हैं, ताकि जो तुम करना चाहते हो, वह न करने पाओ।

गलातियों 5:16-17

व्यवस्था के अनुसार जीने के बजाय गलातियों को परमेश्वर के आत्मा के द्वारा चलना था, ताकि शरीर और उसके प्रभावों को कोई स्थान न दें। केवल इसी प्रकार पत्नी पानेवालों के बीच प्रेमपूर्ण आपसी व्यवहार संभव था।

शरीर एक जीती-जागती चीज़ है। लालसा और अभिलाषा प्रबल शक्तियाँ हैं; वे शरीर के जीवन के लक्षण हैं। शरीर की लालसा में हर वह अनुचित अभिलाषा शामिल है, जिसमें स्वार्थी लक्ष्यों की पूर्ति और उनका पीछा करना मुख्य हो। ये बहुत सी बातें हो सकती हैं – ऐसी भी, जिनका हमने शायद कभी अनुमान भी न किया हो। एक मसीही के रूप में कोई एक ही काम आत्मा के द्वारा भी कर सकता है और शरीर के द्वारा भी। स्रोत, प्रेरणा और लक्ष्य यह निर्धारित करते हैं कि वह व्यक्ति वह काम आत्मा में (अर्थात् आत्मिक मनोवृत्ति में) करता है या शरीर में (अर्थात् शारीरिक मनोवृत्ति में)। मेरे पुराने जीवन का पुराना, अधिकारहीन किया गया स्वामी शरीर, अर्थात् पाप, के रूप में प्रकट होता है। पुराना स्वामी अब भी उपस्थित है, यद्यपि अब उसके पास कोई अधिकार और हक नहीं। जब तक हम प्रभु के पास नहीं पहुँचते और अपनी पार्थिव देह में जीते हैं, वह अब भी हमारे साथ मार्ग पर है। शरीर जैविक काया के समान नहीं है, बल्कि वह उसका उपयोग करता है, जैसे प्राण और आत्मा भी उसे औज़ार के रूप में प्रयोग करते हैं। शरीर के कामों में केवल

62. H. Schlier, *Galater*, पृ. 181, E. Mauerhofer, *Der Kampf zwischen Fleisch und Geist bei Paulus* में उद्धृत।

वे कार्य ही शामिल नहीं, जो हाथों और पाँवों से किए जाते हैं, बल्कि मानसिक बातें भी, जो विचारों, अनुभूतियों और भावनाओं के क्षेत्र से सम्बन्धित हैं (घमण्ड, हठ, तिरस्कार, कृतघ्नता, घृणा, अशुद्ध विचार, विचारों में व्यभिचार, गलत या अत्यधिक महत्वाकांक्षा, गुप्त-विद्या और बहुत कुछ)।

शरीर आत्मा का विरोध करता है और अपने पुराने अधिकार जताना चाहता है। कभी उसके पास सब कुछ निर्धारित करने का एकाधिकार था, और उसने हमारी सोच और हमारे कार्यों में पापी आदतें प्रोग्राम कर दी हैं। परन्तु अब आत्मा ने अधिकार और अगुवाई अपने हाथ में ले ली है, ताकि शरीर और उसकी आदतों के विरुद्ध मोर्चा सम्भाले। यह पुरानी प्रोग्रामिंग मेरे उद्धार के दिन (मेरे व्यक्तिगत उद्धार के मोड़ और मन फिराव के दिन) मिट नहीं जाती। बल्कि आत्मा उसे उस स्थान पर पहुँचाता है, जहाँ उसका स्थान है: मृत्यु में।

मसीही के भीतर एक संघर्ष है, जो मेरे शरीर और पवित्र आत्मा के बीच होता है। पतरस इसकी बात करता है, जब वह कहता है कि हमें उन शारीरिक अभिलाषाओं से बचे रहना है, जो प्राण से युद्ध करती हैं (1 पतरस 2:11)। याकूब कहता है कि अभिलाषाएँ हमारे अंगों में लड़ती हैं (याकूब 4:1; देखें 1:13-15 भी), इस प्रकार कि वे पोषित और तृप्त किए जाने की माँग करती हैं।

12.7 परमेश्वर का कार्य और हमारा कार्य – क्या ये एक दूसरे के विरोधी हैं?

नए नियम में हमें बहुत बार कार्य करने के लिए आह्वान दिया जाता है, जबकि साथ ही परमेश्वर ही वह है, जो वह कार्य उत्पन्न करता है। यहाँ भी ऐसा ही है। इसलिए यहाँ का कथन (“आत्मा में चलो”) उद्धार का आज्ञार्थ (इम्पेरेटिव) है। यह एक “सक्रिय-निष्क्रिय रूप” है। चलनेवाले हम हैं (सक्रिय), परन्तु हमें यह आत्मा की सामर्थ्य के द्वारा करना है (निष्क्रिय)।

शरीर और आत्मा एक दूसरे के विरोधी हैं, **ताकि जो तुम करना चाहते हो, वह न करने पाओ।** पौलुस इससे क्या कहना चाहता है? क्या इस संघर्ष में तीन भागीदार हैं? स्पष्ट है: एक शरीर है, एक परमेश्वर का आत्मा है, और एक मैं हूँ – वह उत्तरदायी व्यक्ति, जो किसी एक पक्ष का चुनाव करता है। छोटे से वाक्य “... ताकि जो तुम करना चाहते हो, वह न करने पाओ” के कम से कम तीन पहलू हैं:

1. हमें स्वतंत्रता के लिए बुलाया गया (5:13), ताकि हम वह न करें, जो हमारा शरीर चाहता है।
2. यह लड़ाई हमारे द्वारा नहीं, बल्कि आत्मा के द्वारा लड़ी जाती है।
3. हम (हमारा “मैं”) प्रभावित व्यक्तियों के रूप में इस संघर्ष के ठीक बीच में खड़े हैं।

12.8 स्वतंत्रता के लिए बुलाए गए – पर यह कैसी स्वतंत्रता है?

आत्मा और शरीर के संघर्ष का मूल-मंत्र (5:1) – अर्थात् इस पत्रि का सन्देश – स्वतंत्रता है। परन्तु उसी सौंस में पौलुस सावधान करता है कि मूसा की व्यवस्था से मिली इस स्वतंत्रता को शरीर के लिए खुली छूट के रूप में प्रयोग न किया जाए। क्योंकि मूसा की व्यवस्था के बाहर एक नई व्यवस्था लागू होती है, अर्थात् मसीह की व्यवस्था (6:2)! नई व्यवस्था आत्मा की व्यवस्था है, जिसके द्वारा मसीह हमारे जीवन को

ढालता है और जिसके प्रभाव आत्मा के फलों में पहचाने जा सकते हैं। “स्वतंत्रता व्यवस्था के भीतर उत्पन्न होती है, बाहर नहीं। रेल के इंजन को सबसे अधिक स्वतंत्रता कब होती है? जब वह ऊबड़-खाबड़ ज़मीन पर ठोकरें खाता है? बिल्कुल नहीं! जब वह अपने आप को पटरियों में ‘बाँधे’ जाने देता है, तभी वह सुचारु रूप से और बिना रुकावट चलता है, क्योंकि उसकी बनावट ऐसी ही है। सुचारु रूप से और तेज़ी से चल सकने के लिए उसे पटरियों की ‘व्यवस्था’ और ‘अनुशासन’ की आवश्यकता है।”⁶³ पटरियों पर इस मार्गदर्शन को पौलुस परमेश्वर के आत्मा के द्वारा “अगुवाई” और “चलना” कहता है। इसके परिणामस्वरूप आत्मा का विविध फल बढ़ता है, जबकि साथ ही शरीर के काम अधिक से अधिक लुप्त होते जाते हैं। यही मूसा की व्यवस्था का ईश्वरीय विकल्प है, यद्यपि जब हम परमेश्वर के आत्मा के द्वारा “एक दूसरे से प्रेम करते हैं”, तो साथ ही हम मूसा की व्यवस्था को भी पूरा करते हैं (5:14; देखें रोमियों 8:3 भी)।

यहाँ बात व्यवस्था के क्षेत्र को छोड़ने की है। यह हमारे साथ गुलगुता पर पहले ही हो चुका है: हम व्यवस्था के लिए मर गए (गलातियों 2:19; रोमियों 7:6)। जब यह हो चुका, तो हम किसी ऐसी बीच की ज़मीन पर नहीं खड़े, जहाँ कोई व्यवस्था लागू न हो। हम परमेश्वर के हैं – यह *उसकी* भूमि है। इस भूमि पर लड़ाई चल रही है, क्योंकि लक्ष्य अभी प्राप्त नहीं हुआ। आत्मा और शरीर का संघर्ष हर उस व्यक्ति की प्रतीक्षा करता है, जो नए जीवन में कदम रखता है। यदि हम आत्मा के द्वारा चलाए जाते हैं, तो हम व्यवस्था के अधीन नहीं हैं; जीवन चलाने के ये दो तरीके (व्यवस्था और आत्मा) एक दूसरे को बाहर कर देते हैं।

12.9 आत्मा हमारे लिए लड़ता है

सचमुच ऐसा लगता है मानो इस संघर्ष में हमारी भूमिका एक प्रकार के दर्शक की हो। क्योंकि आत्मा और शरीर हम में लड़ते हैं, इसलिए हम वह कर ही नहीं सकते जो हम चाहते हैं, क्योंकि ये दोनों वह करते हैं जो वे चाहते हैं! शरीर शरीर के काम उत्पन्न करता है, आत्मा आत्मा का फल। आल्ब्रेख्ट (Albrecht) का अनुवाद (जर्मन बाइबल अनुवाद) कहता है: “क्योंकि शरीर अपनी अभिलाषा के साथ आत्मा का शत्रुता से सामना करता है, और उसी प्रकार आत्मा शरीर का। दोनों आपस में लड़ाई में लगे हैं और यह सहन नहीं करते कि तुम अपनी इच्छा के अनुसार कार्य करो।” सीख यह है कि इस संघर्ष में हम “वह नहीं करते जो हम चाहते हैं”, चाहे उसका इरादा कितना भी अच्छा हो। शरीर के विरुद्ध लड़ाई आत्मा लड़ता है। परन्तु यह लड़ाई हमें छुए बिना नहीं निकल जाती, मानो उसका हम से कोई सम्बन्ध न हो। हम छुट्टी पर जाकर आत्मा को लड़ने के लिए नहीं छोड़ सकते। अभिप्राय यह है कि शरीर के विरुद्ध लड़ाई हमारे अपने अनुभवों का भाग है, परन्तु अपने प्रयत्न से वह हार में बदल जाती है। जब तक हम लड़ाई परमेश्वर पर नहीं छोड़ते, हमारे पास कोई सामर्थ्य नहीं। हमारे पास इच्छा तो है, परन्तु साधन नहीं। यह संघर्ष मेरे प्राण में, अर्थात् मेरे हृदय में, चलता है, परन्तु वहाँ नए सेनापति, आत्मा, ने शासन अपने हाथ में ले लिया है।

63. Jay E. Adams, *Grundlagen biblischer Lebensberatung*, पृ. 256।

12.10 संघर्ष के बीच में

आइए, हम इस पाठ को Neue Genfer Übersetzung (NGÜ, जर्मन बाइबल अनुवाद) के शब्दों में दोहराएँ:

“मैं इससे क्या कहना चाहता हूँ? परमेश्वर के आत्मा को अपना व्यवहार निर्धारित करने दो, तब तुम फिर अपने ही स्वभाव की अभिलाषाओं के आगे नहीं झुकोगे। क्योंकि मानवीय स्वभाव अपनी अभिलाषा के साथ परमेश्वर के आत्मा के विरुद्ध खड़ा होता है, और परमेश्वर का आत्मा अपनी अभिलाषा के साथ मानवीय स्वभाव के विरुद्ध। ये दोनों आपस में झगड़े में हैं, और हर पक्ष यह रोकना चाहता है कि तुम वह करो, जिसके लिए दूसरा पक्ष तुम्हें विवश करता है।”

कोई तटस्थ “मैं” नहीं है, जो शरीर और आत्मा के इस संघर्ष से बच सके। हमारा “मैं” अपने कार्यों की प्रेरक शक्ति या तो शरीर से पाता है या आत्मा से। हम कभी निष्क्रिय दर्शक नहीं, बल्कि संघर्ष के केंद्र-बिन्दु में खड़े हैं। जो कुछ हम निर्णय लेते, सोचते और करते हैं, उस सब के लिए हम उत्तरदायी हैं। जब मैं सीधे संघर्ष में, परीक्षा और कठिन आजमाइश में खड़ा होता हूँ, तब मुझे स्पष्ट निर्णय लेना और अपना पक्ष तय करना होता है। “यद्यपि ... पवित्र आत्मा तुम में आ बसा है और वहाँ अपने व्यक्तित्व में परमेश्वर पिता और परमेश्वर पुत्र दोनों का प्रतिनिधित्व करता है, फिर भी वह कभी तुम्हारी अपनी इच्छा की सम्प्रभुता का उल्लंघन नहीं करेगा। वह तुम्हें अपनी ज़िम्मेदारी पर निर्णय लेने से मुक्त नहीं करेगा। ... यदि फिर भी वह तुम्हारे हृदय के हर क्षेत्र में प्रभुत्व करता है, यदि वह इस प्रकार तुम्हारे व्यवहार को निर्धारित करता है, तो यह केवल तुम्हारे अपने स्वतंत्र चुनाव और आनन्दपूर्ण सहमति से ही होता है। परन्तु यही आपत्ति का अधिकार है, जो तुम्हें मनुष्य के रूप में पशु-जगत से ऊपर उठाता है और तुम्हें वह नैतिक प्राणी बनाता है, जिसके लिए परमेश्वर ने तुम्हें ठहराया है। यही बात – और केवल यही – तुम्हें इस योग्य भी बनाती है कि तुम बदले में परमेश्वर से प्रेम करो और इस प्रकार उसके प्रेम का उत्तर दो। तुम्हारे जीवन के हर क्षण में परमेश्वर के प्रति यह आनन्दपूर्ण ‘हाँ’ सृष्टिकर्ता के हृदय को उन लाखों संसारों के सब रोमांचक (रोचक) आश्चर्यों से भी अधिक आनन्द से भर देता है, जो उसके सर्वशक्तिमान वचन के द्वारा ब्रह्माण्ड की अनन्तता में फेंक दिए गए। उनमें से किसी के पास उससे प्रेम करने की क्षमता नहीं है, क्योंकि उनके पास स्वतंत्र चुनाव की क्षमता नहीं है। इसलिए स्वयं होने और मनुष्य होने का विशेषाधिकार इसी में है कि तुम परमेश्वर को जान सकते हो, चुन सकते हो और उससे प्रेम कर सकते हो। यह तुम्हारा बिल्कुल व्यक्तिगत विशेषाधिकार है।”⁶⁴

आत्मा की उपस्थिति कोई ऐसा स्वचालित क्रम नहीं, जिसमें जीत की गारंटी पहले से जुड़ी हो। हमारे जीवन का मूल-मंत्र यह होना चाहिए: यीशु के साथ जीना, उसके निकट बने रहना और उसके वचन को अपने में अधिकाई से बसने देना। इसके द्वारा हम आत्मा के पक्ष में और शरीर के विरुद्ध निर्णय लेंगे।

64. W. Ian Thomas, *Tote können nicht sterben*, पृ. 115।

परमेश्वर का कार्य और हमारी ज़िम्मेदारी कभी एक दूसरे को बाहर नहीं करते। यदि हम केवल परमेश्वर के कार्य की बात करें, तो हो सकता है कि हम निष्क्रियता में बहते चले जाएँ। यदि हम लगातार अपने कर्तव्य और ज़िम्मेदारी को देखते रहें, तो हमारी दृष्टि मसीह पर नहीं, बल्कि उस पाप पर रहती है, जिस पर हम जय पाना चाहते हैं। इस दृष्टिकोण के साथ हम इस खतरे में होंगे कि अपनी ही शक्ति से लड़ें और तनाव में जकड़ जाएँ। आत्मा में नए जीवन का नियम भी है और उसके अनुसार जीने की सामर्थ्य भी। उसकी अगुवाई केवल मार्ग दिखाना नहीं है, बल्कि आत्मा हमारा यात्रा-साथी है; वह हमारे आगे-आगे चलता है।

12.11 वायरस और टीका

इस पर एक और तुलना, जो मेरी इच्छा, शरीर और आत्मा की भूमिका को स्पष्ट करती है। आइए, मेरी देह में सुप्त पड़े रोगाणुओं की तुलना अपने शरीर से करें। स्वस्थ जीवन-शैली में बीमारी कभी-कभार ही होगी। यदि मैं अस्वास्थ्यकर भोजन करूँ, पर्याप्त कपड़े न पहनूँ, तो इससे सर्दी-जुकाम हो सकता है। यदि मैं तब दवा लूँ (यह निर्णय मुझे लेना होता है), तो वह मेरी देह में सर्दी-जुकाम के विरुद्ध लड़ाई आरम्भ कर देगी। यह लड़ाई होती तो मेरी देह में है, परन्तु मैं उसे स्वयं नहीं लड़ता। फिर भी दवा लेने के सचेत निर्णय के द्वारा मैं यह लड़ाई आरम्भ करा सकता हूँ। इसके अतिरिक्त भरपूर विश्राम, अच्छे भोजन और ताज़ी हवा के द्वारा मैं दवा की सफलता में सहायक हो सकता हूँ।

12.12 शरीर के काम क्या हैं?

पौलुस इस विषय में कोई सन्देह नहीं रहने देता कि शरीर (यूनानी *sarx*) और उसके कामों से उसका क्या अर्थ है। इन कामों की उसकी सूची पूरी नहीं है, मानो यहाँ गिनाए गए पापों के अतिरिक्त और कोई पाप होते ही न हों। सूची के अन्तिम शब्दों “और इनके जैसे और काम” के द्वारा परमेश्वर का वचन हर पाठक को केवल सूची को आगे बढ़ाने की सम्भावना ही नहीं देता, बल्कि परोक्ष रूप से यह आज्ञा भी देता है कि वह अपने ही शरीर के कामों को पहचाने।

शरीर के काम अलग-अलग हैं, अपने प्रभाव में भी और उनके मूल्यांकन में भी। व्यभिचार यों ही पहले स्थान पर नहीं है। परन्तु चाहे “छोटे पाप हों या बड़े”, वे सब एक ही बुरे स्रोत से निकलते हैं। यहाँ गिनाई गई हर एक बात के लिए (कामों की दृष्टि से भी और मनोवृत्ति की दृष्टि से भी) हमारा शरीर सक्षम है। इस अर्थ में शरीर एक बीज के समान है, जिसमें हर सम्भव पाप छिपा है, ताकि किसी दिन वह प्रकट हो सके। पौलुस आत्मा के समान शरीर के फल की बात नहीं करता; ऐसा लगता है कि इसका सम्बन्ध व्यवस्था के कामों से है, जिन पर गलाती भरोसा करना चाहते थे। दूसरे शब्दों में: हम शरीर के काम अपनी शक्ति से करने में समर्थ हैं, जबकि आत्मा के फल स्वयं उत्पन्न करने में असमर्थ हैं। उसके लिए हमें पवित्र आत्मा की आवश्यकता है। शरीर के काम तो प्रगट हैं (5:19-21):

- **व्यभिचार** (यूनानी *porneia*) – अनैतिकता, विवाह के बाहर हर प्रकार की यौन गतिविधि

- **अशुद्धता** – विकृत और गन्दी बातें; यौन क्षेत्र में बेलगाम या निर्लज्ज व्यवहार, चाहे विवाह के भीतर हो या बाहर; पूरे व्यक्तित्व की भ्रष्टता, जो जीवन के हर क्षेत्र को विषैला कर देती है
- **लुचपन** – असंयम, उच्छृंखलता, इन्द्रियों को सुन्न कर देना
- **मूर्तिपूजा** – हर उस वस्तु की उपासना, जो परमेश्वर और उसकी इच्छा को व्यक्ति के जीवन में पहले स्थान से हटा देती है (मूर्तियों की पूजा भी और हमारे समय की वैचारिक मूर्तिपूजा भी); स्वार्थ
- **टोना** (यूनानी **pharmakeia**) – जादू, जादू-टोना, गुप्त विद्या (ऑकल्टिज़्म), प्रेतवाद, नशीले पदार्थ
- **बैर** – लोगों से मुँह मोड़ लेना, अनबन, घृणा, दूसरे लोगों के प्रति चिड़चिड़ापन
- **झगड़ा** – कलह, तकरार, झगड़ालू आत्मा
- **ईर्ष्या** – जलन, स्वार्थी और ऐसे अन्य व्यवहार जो केवल अपने लाभ पर केन्द्रित हों, सन्देह करना
- **क्रोध** – रोष, क्रोध के विस्फोट, आस-पास के लोगों पर बेरोक आक्रमण, अपनी राय पर हठपूर्वक अड़े रहना
- **कलह** – विवाद, षड्यन्त्र
- **फूट** – बिखराव, सम्बन्धों का टूटना, मनमुटाव
- **दलबन्दी**⁶⁵ – विधर्म, विभाजन, पंथ; बाधा डालनेवाले गुट बनाना
- **डाह** – दूसरे की किसी भी अच्छी बात से न खुश होने की आदत
- **हत्या** – घृणा, खून (वास्तव में किया हुआ, केवल विचारों में नहीं)
- **मतवालापन** – अत्यधिक शराब पीना, नशे की अवस्थाएँ
- **रंगरेलियाँ** – पीने-खाने की महफ़िलें, पेदूपन, भोग-विलास
- **और इनके जैसे और काम।**

परमेश्वर के राज्य में उन लोगों का कोई भविष्य नहीं है, जो ये काम करते हैं, जिनके लिए ऐसी बातें सामान्य हैं, जो उनमें बने रहते हैं और जो पाप का अंगीकार करके उसे छोड़ते नहीं (5:21)।

12.13 परमेश्वर के आत्मा का फल

वह बहुमूल्य फल, जिससे पिता और पुत्र आनन्दित होते हैं और जो उनके लिए भी उतना ही आनन्द का कारण है, जिन्हें उसके द्वारा आशीष मिलती है, परमेश्वर के आत्मा के द्वारा विश्वासी में उत्पन्न किया जाता है। फल का बढ़ना मैं नहीं करा सकता, क्योंकि बढ़ाता परमेश्वर ही है⁶⁶ (1 कुरिन्थियों 3:6)। मुझे स्वयं ऐसी “परिस्थितियाँ” बनानी हैं, जिनके कारण अच्छी बढ़ोतरी सम्भव हो। मैं अच्छी भूमि उपलब्ध कराने का प्रयास कर सकता हूँ, मैं शरीर के खरपतवार को रोक भी सकता हूँ और उखाड़ भी सकता हूँ, और मैं परमेश्वर के वचन के द्वारा पर्याप्त “सिंचाई” का ध्यान रख सकता हूँ। परन्तु इन सब बातों में हमें उस

65. Elb 2003 (जर्मन बाइबल अनुवाद) की फुटनोट का शब्द यही है। इस बाइबल अनुवाद के मुख्य पाठ में यहाँ “पंथ” (Sekten) लिखा है।

66. देखें मत्ती 6:28 भी: “जंगली सोसनों पर ध्यान करो कि वे कैसे बढ़ते हैं: वे परिश्रम नहीं करते, न कातते हैं” (ज़ोर लेखक द्वारा)।

“आश्चर्यजनक” बात को अनदेखा नहीं करना चाहिए: किसी भी चिह्न और चमत्कार से बढ़कर यह परमेश्वर का एक अलौकिक कार्य है, जब मनुष्य घृणा से भरे पापियों से ऐसे प्राणी बन जाते हैं, जिनके हृदयों में परमेश्वर का प्रेम उण्डेला गया है और जो फिर स्वयं वैसा प्रेम करते हैं, जैसा परमेश्वर प्रेम करता है। पर आत्मा का फल यह है (5:22-23):

1. **प्रेम** – ईश्वरीय, बलिदान के लिए तत्पर प्रेम, यहाँ विशेष रूप से परमेश्वर की कलीसिया के भीतर; यह कोई भावना नहीं, बल्कि इच्छा का निर्णय है। परमेश्वर और मनुष्यों के प्रति इस प्रेम के बिना मसीही जीवन में भी सब कुछ व्यर्थ है (1 कुरिन्थियों 13)। हम इसलिए प्रेम करते हैं कि पहले उसने हम से प्रेम किया।
2. **आनन्द** – परमेश्वर की प्रजा के उन लोगों का साझा आनन्द, जो आत्मा में चलते हैं, उनकी सभाओं में भी; उस बात पर सच्चा आनन्द, जो परमेश्वर ने हम में और दूसरों में किया, जो वह अभी कर रहा है और जो वह अपनी प्रतिज्ञा के अनुसार करेगा; मसीह में जीवन का आनन्द
3. **मेल (शान्ति)** – केवल झगड़े का न होना नहीं, बल्कि मेल-मिलाप, हार्दिक आपसी संगति, जुड़ाव, सम्पूर्णता
4. **धीरज** – दूसरों के साथ व्यवहार में सहनशीलता और उदारता; लोगों और परिस्थितियों को सहते रहने की निरन्तर तत्परता; प्रेम अपने निष्क्रिय, परन्तु दृढ़ पक्ष से
5. **कृपा** – सद्भावपूर्ण, सदा सहायता के लिए तैयार और समझदारी भरा रवैया, कोमल स्वभाव, उदारता; प्रेम का सक्रिय पक्ष
6. **भलाई** – हार्दिक भलाई, कृपा के समान; दूसरे को वह देना जो उचित और अच्छा है
7. **विश्वासयोग्यता (विश्वास)** – परमेश्वर पर भरोसा; भरोसेमंद होने, सच्चाई और निष्ठा का गुण; परमेश्वर का अनुकरण करना, जो सदा अपने वचन पर स्थिर रहता है और अपनी प्रतिज्ञाओं के प्रति विश्वासयोग्य है
8. **नम्रता** – कोमलता, शक्ति और सौम्यता (इसके लिए जर्मन में ठीक-ठीक मेल खाता कोई शब्द नहीं है); स्वार्थ और अत्यधिक माँगों का उलटा; अपने विषय में दीन मन रखना
9. **संयम** – आत्म-नियन्त्रण, आत्म-अनुशासन और अपने ऊपर काबू, सन्तुलन।

फल, या फल के अनेक रूप, विविध और व्यापक हैं। यह “सूची” भी पिछली सूची के समान पूरी नहीं, बल्कि प्रतिनिधि है। विलियम बार्कले (William Barclay) कहते हैं कि इस गणना में किसी गुण की सटीक परिभाषा देना और उन्हें एक दूसरे से अलग करना भी कठिन है।⁶⁷ इन सब नैतिक गुणों और सद्गुणों में यह पहचाना जा सकता है कि किसी मनुष्य के लिए उन्हें अपने जीवन में कमोबेश स्थायी रूप से अनुभव करना लगभग असम्भव है। वास्तव में यह परमेश्वर का फल है।

67. William Barclay, *Fleisch oder Geist?*, Augsburg, 1968।

पौलुस अपनी सूची को इस प्रकार समाप्त करता है कि वह मूल सूत्र को फिर से पकड़ लेता है: **“ऐसी बातों के विरुद्ध कोई व्यवस्था नहीं”** (पद 23)। दूसरे शब्दों में: यदि ये सद्गुण आत्मा की उपस्थिति के कारण हमारे बीच दिखाई देते हैं, तो व्यवस्था अप्रासंगिक है। जो लोग आत्मा के द्वारा एक दूसरे से प्रेम करते हैं, उन्हें अब किसी तोराह को यह आज्ञा देने की आवश्यकता नहीं: तू हत्या न करना।

12.14 शरीर का स्थान क्रूस पर है

मसीही ने शरीर के प्रति सबसे स्पष्ट स्थिति अपना ली है। उसने स्वयं शरीर को क्रूस पर कीलों से ठोक दिया है। हम इस पर विश्वास करते हैं और इसके अनुसार काम करते हैं। हमारा शरीर क्रूस पर मृत्यु के सिवा और किसी बात के योग्य नहीं था। ठीक यही पौलुस कहता है:

“परन्तु जो मसीह के हैं, उन्होंने शरीर को उसकी वासनाओं और अभिलाषाओं समेत क्रूस पर चढ़ा दिया है।”

गलातियों 5:24

जो मसीह का है, उसने यह एक ही बार सदा के लिए किया है: जब हमने मसीह पर विश्वास किया, तब हमने अपने पुराने जीवन को दोषी ठहराया और उससे नाता तोड़ लिया। हमने अपने भक्तिहीन जीवन पर और उस पर, जो इस भक्तिहीन जीवन की प्रेरक शक्ति था, अर्थात् शरीर पर, परमेश्वर के मृत्यु-दण्ड को स्वीकार किया। क्रूस पर क्यों चढ़ाया गया? क्योंकि मसीह ने हमारे पुराने मनुष्य पर ठहरे मृत्यु-दण्ड को हमारे स्थान पर क्रूस पर अपने ऊपर ले लिया।

शरीर वासना और अभिलाषा को अपने जीवन-रस के रूप में अपने भीतर रखता है। मसीह की ओर विश्वास का कदम उठाकर हमने उससे नाता तोड़ लिया है। यह हम पर एक कर्तव्य डालता है, क्योंकि जिसे हमने स्वयं क्रूस पर चढ़ाया और मार डाला है, उसे फिर मृत्यु में ही रहना चाहिए और हमारे जीवन में फिर दिखाई नहीं देना चाहिए। फिर भी क्रूस पर चढ़ाए जाने और मार डाले जाने के बावजूद शरीर अपने कामों के साथ अब भी मौजूद है। वह अब भी हम में असुधार्य है। यह रोमियों को कहे गए उस वचन से मेल खाता है कि हम अपने आप को पाप के लिए मरा हुआ समझें (रोमियों 6:11)। परमेश्वर ने हमारे लिए कुछ किया, ताकि पाप की तानाशाही से बच निकलना सम्भव हो। इस वचन में भी ऐसा ही है। यीशु मसीह का क्रूस शरीर का अन्त है, पुराने मनुष्य का अन्त, पुराने “मैं” का अन्त। क्रूस के बिना और इस ज्ञान के बिना आत्मा में चलना सम्भव नहीं है।

यह नहीं कहा गया कि हमें अपने शरीर को प्रतिदिन क्रूस पर चढ़ाना है। यह बात प्रायः अच्छे इरादे से कही जाती है। परन्तु सच्चाई यह है कि हमें इस बात को आधार मानकर चलना है कि उसे एक बार क्रूस पर चढ़ाया गया – मसीह के साथ। यह परमेश्वर द्वारा स्वयं दी गई सर्वोत्तम परिस्थितियों के साथ एक नए जीवन का आरम्भ है। अब, क्रूस की घटना के बाद, जीवन की नवीनता में, हमारा सामना शरीर के अलग-अलग

कामों से होता है। शरीर घात लगाकर “छापामार युद्ध” चलाता है। इन आक्रमणों को हमें पवित्र आत्मा की सामर्थ्य से “मारना” है (रोमियों 8:13; कुलुस्सियों 3:5)। मारने का अर्थ है उन्हें फिर से जीवित न होने देना। मैं अपने पुराने मनुष्य के लिए मसीह की मृत्यु को और इस बात को स्मरण करता हूँ कि उसके लिए मरना उसे कितना महँगा पड़ा। इसके द्वारा मैं बार-बार नए सिरे से शरीर के विषय में परमेश्वर की दृष्टि और उसके निर्णय तक पहुँचता हूँ, और यह फिर मुझे उसके विरुद्ध दृढ़ता से कदम उठाने में सहायता करता है।

12.15 मसीह के साथ क्रूस पर चढ़ाए जाने के बाद मनुष्य कौन है?

जब हमारा वर्णन ऐसे लोगों के रूप में किया जाता है, जिन्होंने स्वयं शरीर को क्रूस पर चढ़ाया है, तो यह सिक्के का केवल एक पहलू है। दूसरे पहलू का वर्णन पौलुस पत्री के आरम्भ में करता है:

... मैं मसीह के साथ क्रूस पर चढ़ाया गया हूँ, परन्तु मैं जीवित हूँ, अब मैं नहीं,⁶⁸ बल्कि मसीह मुझ में जीवित है; और अब मैं शरीर में जो जीवन जीता हूँ, वह विश्वास के द्वारा जीता हूँ, अर्थात् परमेश्वर के पुत्र पर (विश्वास) के द्वारा, जिसने मुझ से प्रेम किया और अपने आप को मेरे लिए दे दिया।

गलातियों 2:19-20

मसीही होना क्या है, इसका यह शायद सबसे सटीक वर्णन है। हमारा पुराना जीवन, या हमारे आत्म-निर्णय की वह अवस्था, जिसमें कम्पास की सुई सदा हमारी ही ओर इशारा करती थी, मसीह के साथ क्रूस पर चढ़ाया गया है। पुराने जीवन से सचमुच छुटकारा पाने का यही एकमात्र मार्ग था – और सबसे बढ़कर इस प्रकार कि यह परमेश्वर की धार्मिकता और पवित्रता के सामने विधिसम्मत रूप से हुआ। कोई भी मनुष्य अपना जीवन खोना और अपना आत्म-निर्णय छोड़ना नहीं चाहता, क्योंकि उसके बाद जो आता है, उसे देखते हुए उसे हानि का डर होता है। शरीर ने हमें इसी प्रकार “प्रोग्राम” किया है, और यह “सॉफ्टवेयर” अब भी हम में काम करता है। हम कितनी बार उससे चिपके रहते हैं, जो हम हैं और जो हमारे पास है! हम बहुत कम पहचानते हैं कि परमेश्वर पुराने के स्थान पर क्या रखता है। परन्तु यह वचन बिल्कुल स्पष्ट है। “बिल्कुल मूलगामी रूप से: मैं मर गया हूँ, मैं जीवित हूँ! मसीह की मृत्यु में मरा हुआ, मसीह के जीवन में जीवित। यह इतने प्रबल रूप से कहा गया है कि हमारी समझ के लिए इसे ग्रहण करना आसान नहीं है। हम सोचते हैं: ऐसा तो हो ही नहीं सकता, क्योंकि मनुष्य तो वही रहता है, आप तो वही व्यक्ति रहते हैं जो आप हैं? कुछ लोगों ने यहाँ इसका समाधान इस प्रकार खोजा है कि वे मनुष्य को तीन भागों में बाँटते हैं: आत्मा, प्राण और देह, जिसमें देह और प्राण को मरना पड़ता है, ताकि आत्मा जीवित रह सके। परन्तु हमें पौलुस के शब्दों को पश्चिमी दृष्टि से नहीं देखना चाहिए, बल्कि उन्हें उसी अर्थ में लेना चाहिए जिसके लिए वे कहे गए हैं, और उन्हें उसी प्रकार समझने का प्रयास करना चाहिए जिस उद्देश्य से वे लिखे गए हैं। आदम में जीवन समाप्त हो चुका है, क्योंकि अब सुसमाचार में परमेश्वर की धार्मिकता प्रगट हुई है। मसीह का जीवन हर उस

68. “परन्तु मैं जीवित हूँ, अब मैं नहीं” – यह इस स्थान पर Elb 2003 की फुटनोट के पाठ को देता है।

व्यक्ति के लिए आरम्भ होता है, जो सुसमाचार को ग्रहण करता है।”⁶⁹

वास्तव में हमें अपने जीवन के लिए इस केन्द्रीय बाइबल पद को जितना सम्भव हो उतना सरलता से समझना चाहिए। “आप सदा आप ही रहेंगे, और कोई दूसरा नहीं। जो मनुष्य सुबह उठता है, वह ठीक वही है, जो पिछली शाम को बिस्तर पर गया था। इसलिए आपको इस तथ्य को स्वीकार कर ही लेना होगा: आप स्वयं ही वह मनुष्य हैं, जिसके साथ आपको अपने शेष दिन निभाने हैं। परन्तु दूसरी बात, यह परमेश्वर की इच्छा है! उसने कभी नहीं चाहा कि आप अपने सिवा कोई और हों। परन्तु वह चाहता है कि आप अब सचमुच वह मनुष्य बनें, जिसके लिए उसने आपको ठहराया है ...

मेरा “मैं” (वही, जो मुझ में पाप करता है) मसीह के साथ क्रूस पर चढ़ाया गया है। ‘मैं जीवित हूँ (वही “मैं”, जिसे मसीह ने मुझ में से बनाया), तौभी अब मैं नहीं, बल्कि मसीह मुझ में जीवित है’ (गलातियों 2:20) ... जब आप विश्वास में मसीह के साथ क्रूस पर अपना स्थान लेते हैं, तो आप अपने व्यक्तित्व में से कुछ भी नहीं खोते। इसके विपरीत, आपके व्यक्तित्व का रूपान्तरण होता है। आप बस एक दूसरी अगुवाई के अधीन आ जाते हैं, यहाँ तक कि फिर आपके विषय में यह कहा जाता है: ‘यदि कोई मसीह में है तो वह नई सृष्टि है: पुरानी बातें बीत गई हैं; देखो, सब बातें नई हो गई हैं’ (2 कुरिन्थियों 5:17)।”⁷⁰

पुराने मनुष्य और पुराने “मैं” के स्थान पर अब कोई दूसरा आता है, और वह भी अपने जीवन की परिपूर्णता के साथ। यह विजयी जीवन है, पुनरुत्थान का जीवन, ईश्वरीय जीवन। आखिरकार स्वयं प्रभु यीशु मसीह ही अब मेरे जीवन में, मेरे व्यक्तित्व में, या मेरे हृदय में प्रवेश करता है, ताकि वहाँ सदा के लिए रहे। यही मसीही होना है! मसीहियत का चिह्न है एक खाली क्रूस, एक खाली कब्र, सिंहासन पर मसीह और मुझ में मसीह! बाहर से मुझ पर लादा गया जीवन-परिवर्तन नहीं, नहीं, यह मसीह है, जो मुझ में जीवित है और वह पूरा करता है, जो परमेश्वर को भाता है। यह नए किए गए हृदय से निकलनेवाला एक नया जीवन है। स्वयं मसीह ही है, जो कार्य करता है और जो मेरे नए जीवन के लिए सामर्थ्य का अक्षय स्रोत है। वह केवल “आत्मिक बातों” (बाइबल पढ़ना, प्रार्थना करना, सुसमाचार सुनाना आदि) का ही स्रोत नहीं, बल्कि मेरे पूरे जीवन का स्रोत है, मेरे काम का भी, सीधे कहें तो मेरे जीवन के हर क्षण का। मैं केवल ऐसा दिखावा नहीं करता कि मानो ऐसा हो – यह वास्तविकता है कि मसीह मुझ में जीवित है। इस जीवन की पहचान परमेश्वर के पुत्र पर भरोसा है, जिसने मेरे लिए और हर एक व्यक्ति के लिए अपने बलिदान के द्वारा ही यह सब सम्भव किया है।

12.16 प्रतिदिन क्रूस उठाना

गुलगुता पर क्रूस पर चढ़ाए जाने से पहले ही यीशु ने क्रूस के विषय में बात की थी, केवल अपने क्रूस के विषय में नहीं, बल्कि हर उस व्यक्ति के क्रूस के विषय में भी, जो उसके पीछे चलेगा। लूका 9:23 में (देखें

69. H. P. Medema, *Romeinen 7 enzovoorts*, पृ. 80।

70. W. Ian Thomas, *Tote können nicht sterben*, पृ. 106 आगे।

लूका 14:27; मत्ती 10:38; 16:24; मरकुस 8:34 भी) लिखा है:

“(यीशु ने) सब से कहा: यदि कोई मेरे पीछे आना चाहे, तो अपने आप से इन्कार करे और प्रतिदिन अपना क्रूस उठाए, और मेरे पीछे हो ले।”

प्रभु यीशु यहाँ (प्रायः पीड़ादायक) आत्म-त्याग, अर्थात् अपने आप से इन्कार करने की बात करता है। जो उसके पीछे चलता है, वह अपने आप के, अपने अहं और अपने लक्ष्यों के पीछे नहीं, बल्कि अपने स्वामी और गुरु के पीछे चलता है। मेरा “मैं” मृत्यु को सौंप दिया गया है; अब उसका कोई महत्व नहीं। इस क्रूस को जान-बूझकर उठाना और उसे घसीटते हुए वध-स्थल तक ले जाना, एक चले का दैनिक कर्तव्य है। निःसन्देह यह एक तुलना है। बात एक सिद्धान्त की है, जिसे प्रभु इस कठोर उदाहरण के द्वारा स्पष्ट करता है। जो अपना प्राण खोता है (अर्थात् आत्म-त्याग और अपने आप को छोड़ देने के क्रूस पर), वह सच्चा जीवन, परिपूर्ण जीवन पाएगा (मत्ती 10:39)। अब यीशु के ये शब्द ठीक-ठीक उस बात से मेल नहीं खाते, जो पौलुस ने गलातियों से इस विषय में कही कि उन्होंने शरीर को क्रूस पर चढ़ा दिया है। इसका एक कारण यह है कि पौलुस के यहाँ बात शरीर की बुरी बातों की है। परन्तु यीशु की दृष्टि में ऐसी बातें भी हैं, जिनका बुरा होना आवश्यक नहीं, बल्कि इसके विपरीत। ऐसी बहुत सी बातें हैं, जो अपने आप में अच्छी हैं, परन्तु जिन्हें ध्यान से परखा जाए, तो वे हमें यीशु के पीछे दृढ़ता से चलने से रोकती हैं।

मेरा (व्यक्तिगत) क्रूस कोई अमूर्त वस्तु नहीं, बल्कि उसका निशाना व्यक्तिगत रूप से मैं हूँ, मेरी विशेषताएँ और मेरी परिस्थिति। ये वे क्षेत्र हैं, जहाँ मुझ में शरीर अब भी दिखाई देता है। मेरी बहन और मेरे भाई का क्रूस शायद अलग दिखता होगा। इस प्रकार अपने आप से इन्कार करना बहुत भारी मूल्य माँगता है। क्रूस उठाना सबसे बुरे प्रकार का एक तमाशा भी है। जो क्रूस उठाता है, वह मनुष्यों से किसी आदर की आशा नहीं कर सकता।

12.17 आत्मा के द्वारा जीना और चलना: होना और न होना

यदि हम आत्मा के द्वारा जीवित हैं, तो आत्मा के द्वारा चलें भी।

गलातियों 5:25

क्रूस ने परमेश्वर की पूर्णता के साथ पुराने का अन्त कर दिया। हम आत्मा के द्वारा नए सिरे से जन्मे भी, क्योंकि शरीर (यूनानी *sarx*) बिगड़ चुका था। हमें जीवित किया गया, हम आत्मिक मृत्यु से पार होकर जीवन में आ गए हैं। यह जीवन मसीह में नया अस्तित्व है, यही नया मनुष्य है। पवित्र आत्मा को यहाँ इस नए जीवन का स्रोत और शक्ति कहा गया है। अब “जीना” और “चलना”, ये दोनों शब्द एक दूसरे से कैसे संबंधित हैं? उनमें क्या अन्तर है? जीना नए मनुष्य की धड़कन है – यह तथ्य कि वह अस्तित्व में है। वह उस नई सृष्टि का साकार रूप है, जिसे मसीह ने स्वयं छुड़ानेवाले और जी उठे हुए के रूप में रचा है। हम उसकी उत्कृष्ट कृति हैं। पुरानी बातें बीत गई हैं, नई बातें हो गई हैं।

परन्तु नया जन्म पाया हुआ व्यक्ति कोई मूर्ति नहीं, बल्कि एक नया जीवित **मनुष्य** है, जो यीशु मसीह के आदर्श के अनुसार रचा गया है। एक नया मनुष्य अपने आदर्श, अर्थात् मसीह के अनुसार चलता है, जो नई सृष्टि का आरम्भ और कर्ता है। चलने का अर्थ केवल **होना** (जीना) नहीं, बल्कि **कार्य करना** भी है। जीवन गति और सजीवता के लिए बाध्य करता है। चाल-चलन का अर्थ है एक के बाद एक कदम उठाना। परमेश्वर से मिला जीवन सदा फल लाता है, अर्थात् आत्मा का फल। एक मोटरगाड़ी को चलने के लिए ईंधन चाहिए। जब टंकी खाली हो, तो उसे धक्का देना पड़ता है। एक बिजली की मोटर को बिजली चाहिए, नहीं तो वह किसी के काम नहीं आएगी। मसीही को आत्मा का फल उत्पन्न करने के लिए पवित्र आत्मा चाहिए। “आत्मा की अगुवाई का अर्थ है कि वह हम में और हमारे साथ रहता है – एक सामर्थी अगुवे, बुद्धिमान शिक्षक, धैर्यवान प्रशिक्षक (कोच) के रूप में। यह ‘अगुवाई’ कोई एक बार की, सनसनीखेज़ घटना नहीं, बल्कि लगातार आगे बढ़ती हुई एक प्रक्रिया है।”⁷¹ एक बार फिर: केवल जीवन होना उतना ही अपर्याप्त है जितना आत्मा की केवल उपस्थिति। हमें आत्मा को केवल अपना कहना ही नहीं है, बल्कि अपने आप को उसके स्वामित्व, अगुवाई और मार्गदर्शन के अधिकार के अधीन भी करना है। इस आग को हमें बार-बार, और एक दूसरे में भी, सुलगाना है, न कि आत्मा को बुझाना।

12.18 आत्मा के द्वारा चलना – यह कैसे हो?

शायद हमने ध्यान दिया हो कि पैलुस यह तो कहता है कि हमें आत्मा के द्वारा चलना चाहिए, परन्तु ठोस रूप से यह वर्णन नहीं करता कि हमें यह कैसे करना है। पूरी पत्रि “आत्मा के पक्ष में एक वकालत” के समान है। इसलिए व्यवस्था पूरी तरह से बाहर हो जाती है: “ऐसे प्राण के लिए, जिसने अभी तक यह नहीं समझा कि सच्चा छुटकारा क्या है जो परमेश्वर ने हमारे लिए तैयार किया है, सबसे स्वाभाविक (और सबसे निकट का) उपाय यह है कि वह व्यवस्था के साथ प्रयास करे। यह कोई उपाय नहीं, बल्कि ठीक उसका उलटा है।”⁷² व्यवस्था की सहायता लेना ठीक उसका उलटा है जो आत्मा के द्वारा चलने में निहित है। ऐसा लगता है कि पैलुस आत्मा के द्वारा जीवन को एक वास्तविक और अनुभव किए जा सकनेवाले अनुभव के रूप में बस मानकर चलता है। उसका पाठ स्वयं आत्मा की अगुवाई के लक्षण देता है:

- व्यवस्था को (या किसी व्यवस्था को) जीवन का नियम न बनाना
- संबंधित व्यक्ति आत्मा के द्वारा **चलना चाहता** है। जो आत्मा के द्वारा चलता है, वह इस आह्वान का और उस सचेत तथा बार-बार दोहराए जानेवाले निर्णय का सामना करता है कि उसे हमारे जीवन पर प्रभुता दे।
- विश्वास से स्वीकार करना कि हमारा शरीर बुरा और किसी काम का नहीं है, और उसे मसीह के साथ क्रूस पर चढ़ाया जाना आवश्यक था
- इस बात का ध्यान रखना कि दूसरों के प्रति आत्मा के फल उत्पन्न हों

71. H. P. Medema, *Romeinen 7 enzovoorts*, पृ. 138।

72. F. W. Grant, *Numerical Bible*, खंड 6, पृ. 313।

- इस बात का ध्यान रखना कि शरीर के कामों को स्थान न दिया जाए
- मैं मानता हूँ और विश्वास करता हूँ: मसीह और उसका आत्मा मुझ में जीवित हैं।
- अपने निजी, अपने आप पर केन्द्रित प्रयास में न चलना, बल्कि परमेश्वर पर निर्भर रहकर आत्मा की अगुवाई उससे माँगना और उसकी प्रतीक्षा करना
- अपना ध्यान अपने भीतर के शरीर से संघर्ष पर नहीं, बल्कि मसीह पर और उन सब बातों पर लगाना जिनका उससे संबंध है।

12.19 ठोकर खाना और फिर उठ खड़े होना

हे भाइयो, यदि कोई मनुष्य किसी अपराध में पकड़ा भी जाए, तो तुम जो आत्मिक हो, नम्रता की आत्मा में ऐसे को सुधारो, और अपनी भी चौकसी रखो कि तुम भी परीक्षा में न पड़ो।

गलातियों 6:1

“आत्मा के आने का अर्थ है कि एक ‘ईश्वरीय संक्रमण’ फैल गया है ... , परन्तु ईश्वरीय सिद्धता का युग शुरू नहीं हुआ है। हमारा जीवन अब उसकी अगुवाई के अधीन है, जिसने आरम्भ में कभी व्यवस्था की प्रेरणा दी थी; पर इसका यह अर्थ बिल्कुल नहीं कि परमेश्वर के लोगों में मनुष्य ‘किसी भूल से अचानक घिर’ नहीं सकते।”⁷³ यह मानना यथार्थवादी नहीं है कि हम लगातार और केवल विजय में ही जीते हैं। आत्मा और शरीर का संघर्ष युद्ध के रूपक का प्रयोग करता है, और उसमें हारें भी शामिल होती हैं। मसीह में हम “अभी से” विजेता हैं, परन्तु हम “अभी नहीं” लक्ष्य पर पहुँचे हैं। अन्तिम विजय हमारे लिए निश्चित है, परन्तु मोर्चे पर कभी-कभी कोई न कोई चौकी शत्रु के हाथ में चली जाती है। ऐसा ही उसके साथ हुआ, जिसे पौलुस यहाँ मनुष्य कहता है और जिसने कोई गलत कदम उठाया है।

आत्मिक मनवाले लोगों को ऐसे व्यक्ति को नम्रता से सुधारना चाहिए। विश्वासियों की जीवंत, भरोसे से भरी और सक्रिय संगति, आपसी मेल-जोल और प्रभु में मित्रताएँ आत्मा और शरीर के संघर्ष में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं – आपसी प्रोत्साहन में भी, और सही राह पर आने और लाने में भी। इसमें आत्मिक मनवालों को चौकस रहना चाहिए कि वे स्वयं भी उसी परीक्षा में न गिर जाएँ, क्योंकि यद्यपि उनका मन आत्मिक बातों की ओर लगा है, फिर भी शरीर अपनी सब अभिलाषाओं, वासनाओं और प्रलोभनों के साथ उनमें भी एक निरन्तर खतरा है।

पौलुस को यहाँ किसी विशेष गलत कदम से मतलब नहीं है। छोटे-बड़े हर प्रकार के उन अनगिनत गलत कदमों के लिए सुधार की एक ही ईश्वरीय आपात-योजना लागू होती है। गलत कदम एक अपराध है, कदम की चूक है, विश्वास की दौड़ के मार्ग में ठोकर खाना है। एक गलत कदम में पाप, शरीर का कोई काम, परीक्षा में झुक जाना शामिल है।

73. Gordon Fee, *Der Geist Gottes und die Gemeinde*, Metzinger, 2005, पृ. 192।

बिना घमंड के, हम जो अनुग्रह के अधीन खड़े हैं और जीते हैं, यह कह सकते हैं कि ऐसी हारें एक सामान्य मसीही जीवन में नियम नहीं हैं। परन्तु हमें नम्रता से मानना होगा कि वे हमारे प्रतिदिन के अनुभव से मेल खाती हैं। यूहन्ना कहता है कि यदि हम समझते हैं कि हम में कोई पाप नहीं, तो हम अपने आप को धोखा देते हैं। हमें अपने जीवन में पाप को बहुत गंभीरता से लेना चाहिए।

12.20 फिर से सही राह पर आना

गलत कदम के बाद व्यक्ति को सही मार्ग पर लौट आना चाहिए। गलत कदम सदा आत्मिक हानि लाता है, जिसका परिमाण उस गलत कदम के प्रकार और गंभीरता पर निर्भर करता है। यहाँ एक सिद्धांत की बात है, अर्थात् यह कि गलत कदम के बाद ऐसे आगे नहीं चल सकते, मानो कुछ हुआ ही न हो। हमारी सक्रियता की आवश्यकता है। हम पाप को उदासीनता से अनदेखा नहीं कर सकते, मानो कुछ घटा ही न हो।

फिर से सही राह पर आने का अर्थ है: मसीह और आत्मा मुझे जितनी जल्दी हो सके इस बात तक ले आते हैं कि मैं अपने पाप को छिपाऊँ नहीं, बल्कि उसे मान लूँ और प्रकट कर दूँ। मुझे उस पाप को, जो मैंने (ज्योति की सन्तान होते हुए) किया है, पहचानना, उस पर पछताना (अर्थात् उसके लिए दुःख उठाना) और उसका अंगीकार करना (अर्थात् उसे स्वीकार करना) चाहिए, और ईश्वरीय क्षमा के प्रति सचेत रहना चाहिए।

12.21 स्वर्ग में हमारा सहायक

जब हमने पाप किया हो, तो कुछ होना ज़रूरी है। स्वर्ग में हमारा सहायक, मसीह, ऐसी स्थिति में हमारे लिए सहायक के रूप में सक्रिय है:

हे मेरे बालको, मैं ये बातें तुम्हें इसलिए लिखता हूँ कि तुम पाप न करो; और यदि कोई पाप करे – तो पिता के पास हमारा एक सहायक है, अर्थात् धर्मी यीशु मसीह।

1 यूहन्ना 2:1

हमारे सहायक और वकील ने धर्मी होकर अपने बलिदान के द्वारा पाप के प्रश्न को एक ही बार सदा के लिए सुलझा दिया है। परन्तु अब, जब हमारे जीवन में पाप होता है, तो वह गलत कदम के बाद हमारे हृदय और विवेक पर कार्य करता है। सहायक हमारी चिन्ता करता है, पिता की नहीं, जिसके सिंहासन पर वह बैठा है। उसे पिता को मनाना नहीं पड़ता, ताकि वह हम पर क्रोधित न हो। पाप पिता की समस्या नहीं, बल्कि हमारी समस्या है। यीशु मसीह हमें इस बात तक लाना चाहता है कि हम अपने पाप को पहचानें, मन फिराएँ (अर्थात् उस पर पछताएँ) और उसका अंगीकार करें। साथ ही वह हमें पिता के प्रेम का निश्चय दिलाता है, ताकि हम पहचानें कि हम बिना किसी शर्त के स्वीकार किए गए हैं। पाप पिता के साथ अनन्त जीवन के संबंध को नहीं तोड़ता।

नया नियम परमेश्वर की सन्तान से यह नहीं कहता कि जब वे पाप करें तो क्षमा माँगें। उनके सब पाप, भविष्य के पाप भी, सदा के लिए क्षमा किए जा चुके हैं (इफिसियों 1:7; 4:32; कुलुस्सियों 1:14;

2:13; 3:13; इब्रानियों 10:18; 1 यूहन्ना 2:12)। संयोग से, यही पुराने नियम से बड़ा अन्तर है, जहाँ विश्वासी भी, जैसे दाऊद, क्षमा माँगते हैं। क्रूस के बाद यह अब आवश्यक नहीं है। फिर भी: हम पाप का अंगीकार करते हैं और उस पर पछताते हैं, क्योंकि हमें पवित्र होना है, जैसे हमारा स्वर्गीय पिता पवित्र है। इस अर्थ में हमें परमेश्वर के वचन के जल के द्वारा शुद्धिकरण की आवश्यकता है: वचन हमें पाप दिखाता है, और फिर हमें उसका अंगीकार करना है और निश्चय ही उसे छोड़ देना है: **“यदि हम अपने पापों को मान लें, तो वह हमारे पापों को क्षमा करने और हमें सब अधर्म से शुद्ध करने में विश्वासयोग्य और धर्मी है।”**(1 यूहन्ना 1:9)। मन फिराव के दिन यीशु के लहू के द्वारा हमें पूरी क्षमा मिली। परन्तु क्योंकि हम अब भी पाप कर सकते हैं, इसलिए विश्वासियों के रूप में हमें परमेश्वर के वचन के जल के द्वारा शुद्धिकरण की आवश्यकता है।

12.22 यदि हमने पाप किया हो, तो क्या?

क्या हमें यह सिद्ध करना है कि हम आखिरकार बेहतर कर सकते हैं? क्या हमें प्रायश्चित्त के अभ्यासों से अपना दोष मिटाना है? या कोई गलत कदम कोई विशेष महत्व नहीं रखता, क्योंकि हमारे सब पाप तो पहले ही क्षमा किए जा चुके हैं?

हमें अपने पापों को पहचानना, उनका अंगीकार करना और उन्हें छोड़ना है। इससे बचने का कोई मार्ग नहीं, यह अनिवार्य है: जब कभी हम – विश्वासियों – ने पाप किया हो, और हम सब बहुत बार और बहुत प्रकार से चूक जाते हैं (याकूब 3:2), तो हमें पाप का अंगीकार करना है। अंगीकार करने का अर्थ है “प्रकट करना”। अंगीकार करने का अर्थ है किसी बात को वैसा ही नाम देना जैसी वह वास्तव में है। इसका शाब्दिक अनुवाद है “वही कहना”, अर्थात् वही, जो परमेश्वर उसके विषय में कहता है। पाप को हमें पाप ही कहना है। इस विषय में हम कुछ भी बहाना नहीं बना सकते और न ही किसी बात को सुन्दर रूप दे सकते हैं।

एक विश्वासी का पाप-अंगीकार उस पाप-दोष को नहीं मिटाता जो हमें नरक में ले जाता है। हमारा पाप-दोष यीशु के लहू के द्वारा सदा के लिए मिटा दिया गया। विश्वासी के जीवन में पाप पिता और सन्तान के उस संबंध को, जिसे हम सचेत रूप से अनुभव करते हैं – अर्थात् परमेश्वर के साथ संगति को – प्रभावित करता है। पिता और पुत्र के साथ व्यावहारिक और अनुभव की जा सकनेवाली संगति प्रभावित होती है, और शारीरिक जीवन के द्वारा बाधित तथा घायल होती है। परन्तु पिता की सन्तान तब भी सन्तान ही रहती है, जब दोनों आपस में बात न करें और सन्तान ने आज्ञा न मानी हो। परन्तु एक सच्ची, जीवंत और साथ ही प्रेम से भरी संगति पाने के लिए सब बाधाएँ दूर करनी होंगी; और हमारे स्वर्गीय पिता-सन्तान संबंध में ये बाधाएँ केवल हमारी ओर ही पाई जाती हैं। हमें लौटना है और बार-बार अपने प्रेमी स्वर्गीय पिता की बाहों में अपने आप को डाल देना है।

तो क्या पाप का अंगीकार करना सरल नहीं है? नहीं, सदा नहीं। इसके कई कारण हैं। सबसे आम कारण यह है कि हम आरम्भ में प्रायः ऐसी प्रतिक्रिया करते हैं, मानो यह पाप पाप था ही नहीं। शरीर की

शक्ति में हमारा हृदय इतना घमंडी हो सकता है कि वह हर संभव बहाना ढूँढ़ ले, जो यह सिद्ध करना चाहे कि यह पाप नहीं है। यह आश्चर्यजनक है कि पाप को पहचानने तक पहुँचने में हमें अक्सर कितना समय लगता है।

एक और कारण यह है कि जिन पापों को हम बार-बार करते हैं, उनका अंगीकार करने का साहस हम नहीं जुटा पाते। क्योंकि हम बहुत लज्जित होते हैं, इसलिए हम पहले यह सिद्ध करना चाहते हैं कि हम आखिरकार बेहतर कर सकते हैं। परन्तु इससे हमारे परमेश्वर-संबंधी चित्र का प्रश्न उठता है। तब हमारे मन में परमेश्वर की एक गलत धारणा होती है, जिसके अनुसार हम उसके द्वारा अपनी स्वीकृति को अपनी उपलब्धियों पर निर्भर बना देते हैं। इसके विपरीत, हम सदा के लिए स्वीकार किए गए हैं; पिता हर समय हम से वैसे ही प्रेम करता है, जैसे वह अपने निज पुत्र से प्रेम करता है। हमारे प्रति यह प्रेम न तो हमारे पाप से घटता है और न हमारी विश्वासयोग्यता से बढ़ता है!

सुधार, आत्मिक पुनर्स्थापना और चंगाई विस्तार में कैसे होते और अनुभव किए जाते हैं, या उनमें कितना समय लगता है, इसका संबंध सदा इस बात से भी होता है कि कौन सा पाप किया गया और उसकी पृष्ठभूमि क्या थी, और इस बात से भी कि वह अचानक हो गया या पहले ही एक आदत बन चुका है। महत्वपूर्ण यह है कि पाप-अंगीकार के बाद पिता और पुत्र के साथ हमारा संबंध फिर से निर्मल और निर्विघ्न हो, चाहे हमें कुछ विशेष पापों के परिणाम भुगतने पड़ें।

12.23 अंगीकार करना

यह दिलचस्प है कि नए नियम में इस विषय पर कम बात की गई है कि विश्वासियों के रूप में हमें अपने जीवन में पाए जानेवाले पापों से कैसे निपटना चाहिए। जो पाप हम एक दूसरे के विरुद्ध करते हैं, उन्हें हमें एक दूसरे के सामने मान लेना है (याकूब 5:16) और एक दूसरे को क्षमा करना है (इफिसियों 4:32; कुलुस्सियों 3:13)।

कुरिन्थुस में कलीसिया दोषी ठहरी थी, क्योंकि उसने एक ऐसे व्यक्ति को कलीसियाई अनुशासन के अधीन नहीं रखा था, जो व्यभिचार में जी रहा था। इस संदर्भ में सुधार का अर्थ था उदासी, शोक और मन फिराव, पाप को समझ लेना और उसका अंगीकार करना (2 कुरिन्थियों 2:5-11; 7:9-11)।

- पाप का अंगीकार करने का अर्थ है पाप को उसका नाम लेकर कहना। हम दिन के अन्त में कोई सामान्य अंगीकार नहीं करते, ताकि उससे सब पापों को “ढक” दें। कल्पना कीजिए कि एक बच्चा पिता के पास आकर कहता है: “आज मैंने जो कुछ बुरा किया है, वह सब मैं आपके सामने मान लेता हूँ।” पिता क्या कहेगा? – हमारा स्वर्गीय पिता ठोस रूप से जानना चाहता है कि हम क्या मान रहे हैं।
- हमें दिन के अन्त तक प्रतीक्षा करनी ही नहीं चाहिए। जैसे ही मैं पाप करता हूँ, मैं तुरन्त उस पाप का अंगीकार कर लेता हूँ। हम यह तो नहीं चाहते कि पाप दिन के अन्त तक हमारे और स्वर्गीय पिता के बीच खड़ा रहे, या हम उसे बस भूल जाएँ!

- एक बाइबल-सम्मेलन में किसी ने पूछा कि क्या कोई पाप, जो हमने अनजाने में किया है, पिता के साथ संगति को प्रभावित करता है। उत्तर था: “हाँ।” परन्तु यह उत्तर गलत है! हमें यह समझना होगा कि जितना हम संभव समझते हैं, उससे कहीं अधिक हम अनजाने में ऐसी बातें करते हैं जो पापपूर्ण हैं। वे सामान्य बात नहीं हैं, या जानबूझकर नहीं की जातीं, परन्तु वे होती हैं। कभी-कभी हमें यह ज्ञान भी नहीं होता कि कोई बात पाप है या नहीं। इसलिए हम मसीही होते हुए जो पाप करते हैं, उन सबका अंगीकार हम कभी नहीं कर पाएँगे, यद्यपि यह हमारी सच्ची इच्छा है। पिता के साथ संगति वहाँ प्रभावित होती है, जहाँ हम उस पाप का अंगीकार नहीं करते जिसके विषय में हम सचेत हैं।

पौलुस यहाँ “आत्मिक देखभाल” पर, अर्थात् उस चरवाही सेवा पर ज़ोर देता है, जिसे पूरा करने का काम आत्मिक मनवालों को सौंपा गया है (और जिसे उन लोगों को स्वीकार करना चाहिए जिन्होंने पाप किया है)। यह एक ऐसा विषय है, जिस पर यहाँ और अधिक विचार नहीं किया जाएगा। हर गलत कदम पर सुधार आवश्यक है। किसी बड़े गलत कदम पर वह किसी छोटे गलत कदम से अलग दिखेगा। एक बुरा विचार कोई ऐसा गलत कदम नहीं है, जो हमें विश्वास के मार्ग से बाहर फेंक दे। फिर भी हमें उसका अंगीकार करना है।

12.24 आत्मिक और शारीरिक मसीही – क्या ऐसा होता है?

आत्मिक मसीही से कहा गया है कि जो किसी अपराध में अचानक पकड़ा गया और ठोकर खा गया या परीक्षा में गिर पड़ा है, उसे फिर से (आत्मिक) “पैरों” पर खड़ा होने में सहायता दे। पहले: “आत्मिक” कौन है (तुलना करें गलातियों 6:1)? यह हर वह व्यक्ति नहीं है, जिसमें पवित्र आत्मा वास करता है, जिसके पास आत्मा के द्वारा जीवन है और जो इसलिए परमेश्वर की सन्तान है। बल्कि यह वह है, जो आत्मा के द्वारा चलता भी है और उसके द्वारा चलाया भी जाता है। आत्मिक व्यक्ति कोई कलीसियाई पदाधिकारी नहीं, बल्कि वह है जिस पर आत्मा की छाप है: उसके लिए मसीह ही जीवन है, और इसमें आत्मा का फल पहचाना जा सकता है। आत्मिक व्यक्ति दोषरहित नहीं है, बल्कि वह है जो आत्मा और शरीर के संघर्ष में आत्मा के पक्ष में खड़ा है।

ठोकर खाए हुए मसीही को, जिसे विश्वास के अपने आत्मिक घराने के सदस्यों से सहायता मिलनी चाहिए, शारीरिक नहीं कहा गया है, जो अपने आत्मिक भाई-बहनों से अलग हो। किसी गलत कदम से कोई अपने आप शारीरिक मसीही नहीं बन जाता। “गलत कदम” या “अपराध” कोई ऐसी बात नहीं है जो मेरे पूरे जीवन की पहचान बन जाए। (ऐसा तब होता, जब मेरी विचारों की दुनिया बहुत समय से परीक्षा के आगे हार चुकी हो और उसके परिणामस्वरूप मैं सचमुच ठोकर खा गया हूँ।)

गलातियों ने, जब वे विश्वास में आए, आत्मा में आरम्भ किया था। परन्तु क्योंकि वे व्यवस्था के अधीन होना चाहते थे, पौलुस उन्हें चेतावनी देता है कि वे इस प्रकार अपने पापी और बिगड़े हुए शरीर (यूनानी **sarx**) की शक्ति से बड़े और सिद्ध होने का प्रयास न करें। व्यवस्था के ढाँचे में शरीर सक्रिय होता है, परमेश्वर का आत्मा नहीं (गलातियों 3:3)। गलातियों में इसका परिणाम भी यही हुआ कि वे एक दूसरे के

साथ हिंसक पशुओं जैसा व्यवहार करने लगे। दुःख की बात है कि पवित्र आत्मा का बहुत कुछ दिखाई नहीं देता था।

कुरिन्थियों को पौलुस शारीरिक कहता है (1 कुरिन्थियों 3:1-3)। वे वर्षों पहले विश्वासी बन चुके थे, परन्तु आत्मिक परिपक्वता बहुत कम दिखाई देती थी। कुरिन्थुस की स्थितियाँ हमें ज्ञात हैं। झगड़े और फूट से भरे इस व्यवहार के कुल योग ने उन्हें शारीरिक मसीही बना दिया।

एक शारीरिक मसीही कम या अधिक अपने शरीर से (इन्द्रियों की बातों से, इस लोक की बातों से, अपनी धारणाओं, विचारों और शक्तियों से) चलाया जाता है। वह शरीर की क्रियाओं या कामों से सचमुच लड़ने का प्रयास नहीं करता। यह केवल पाप-अंगीकार (1 यूहन्ना 1:9) और नए समर्पण (रोमियों 6:13; 12:1-2) के द्वारा, तथा पवित्र आत्मा के उस सामर्थी कार्य के द्वारा होता है, जो हमें बदलता है।

परन्तु एक मसीही, जो दशकों से विश्वासी है और फिर भी स्पष्ट स्वार्थ से भरा है, अपने आप को शारीरिक सिद्ध करता है। उसने नया जन्म पाया है, जैसा कि कुरिन्थुस की कलीसिया में बहुतों के साथ था। परन्तु नया जन्म और पवित्र आत्मा का होना होते हुए भी कोई लंबे समय तक, या पूरे जीवन भर भी, शारीरिक मनवाला हो सकता है। न्याय में यह प्रकट होगा, जब सब शारीरिक काम जल जाएँगे और वह स्वयं “जलते-जलते”, मानो बाल-बाल, बचाया जाएगा (1 कुरिन्थियों 3:15)।

इस प्रश्न में आत्मिक वृद्धि एक बड़ी भूमिका निभाती है। आत्मिक होने का अर्थ है विश्वास में परिपक्व और बड़ा होना। “आत्मिकता”⁷⁴ की एक शर्त समय है। क्योंकि उस व्यक्ति बनने में समय लगता है, जिसे 1 कुरिन्थियों 2:15 में **आत्मिक मनुष्य** कहा गया है। जैसे शारीरिक विकास में समय लगता है, वैसे ही आत्मिक बढ़ने में भी समय लगता है। कोई भी नया जन्म पाते ही तुरन्त आत्मिक नहीं हो जाता। आत्मिक मनुष्य बनने में समय लगता है।⁷⁵

12.25 आत्मा और शरीर के संघर्ष का सार

आइए, आत्मा और शरीर के संघर्ष के सूत्र को अन्त तक ले चलें: आत्मा और शरीर हमारे जीवन में, प्रतिदिन के जीवन में और आपसी संबंधों में एक दूसरे के विरोध में खड़े हैं। यह तब तक लागू है, जब तक हम लक्ष्य पर नहीं पहुँच जाते। यह कोई धूल-भरा सिद्धांत नहीं, बल्कि हर मसीही के जीवन का अनुभव है। आत्मा और शरीर को उनके फलों से निश्चित रूप से पहचाना जा सकता है। दोनों हमारे जीवन में अगुवाई के लिए लड़ते हैं। हम स्वयं हर समय इस संघर्ष के बीच में खड़े हैं: जो कुछ हम करते हैं और जो कुछ नहीं करते, वह इन दोनों स्रोतों में से किसी एक से पोषित होता है। दूसरे शब्दों में: हमारी देह या हमारे विचारों की हर गति अपनी प्रेरक शक्ति और ऊर्जा इन दोनों स्रोतों में से किसी एक से पाती है। अन्ततः निर्णय हम करते हैं। हम

74. “आत्मिकता” (Spiritualität) को यहाँ “आधुनिक धार्मिकता” के अर्थ में नहीं समझना चाहिए। बल्कि बात सीधे “आत्मिक परिपक्वता”, “आत्मिक मनोवृत्ति” या “आत्मिक स्वभाव” की है। क्योंकि यह एक उद्घरण है, इसलिए मुख्य पाठ में संबंधित शब्द को बदला नहीं गया।

75. Arnold G. Fruchtenbaum, *Gesetz und Gesetzlichkeit*, Hünfeld, 2010, पृ. 109।

हाँ कहते हैं या ना! “इस युद्ध में स्वयं व्यक्तियों की जो विशेष भूमिका है, वह न तो निष्क्रिय है और न तटस्थ। उन्हें निर्णय लेने होते हैं, जो इस युद्ध की दिशा तय करते हैं। आत्मा में चलना एक गंभीर निर्णय माँगता है, परन्तु ऐसा निर्णय नहीं, जिसमें कुछ पूरा करने के लिए भारी विरोधों पर विजय पाने हेतु इच्छाशक्ति का कठोर परिश्रम शामिल हो। बल्कि मसीहियों को बुलाया गया है कि वे अपने आप को आत्मा और परमेश्वर की गतिविधि को सौंप दें और बस उसकी अगुवाई के पीछे चलें।”⁷⁶

जीवन की नई योजना यह है कि परमेश्वर का आत्मा हम में वह पूरा करता है जो परमेश्वर को भाता है। इसका मापदंड अब मूसा की व्यवस्था नहीं, बल्कि मसीह, अर्थात् उसकी व्यवस्था है। अब हम स्वतंत्र हैं कि अपने आप को नहीं, बल्कि मसीह को प्रसन्न करें। आत्मा के द्वारा उसकी शक्ति में चलने का अर्थ है भविष्य के लिए बचना और एक दिन उसके बदले अनन्त जीवन की कटनी काटना (गलातियों 6:8)।

“मसीह की विजय को लागू करना और उसका पूरा लाभ उठाना विश्वास के केवल एक कार्य से अधिक माँगता है। यह विश्वास का एक पूरा रवैया माँगता है। यह परमेश्वर पर निरन्तर भरोसा रखना है – दिन-प्रतिदिन, घंटे-दर-घंटे, पल-पल। और इस पल में उस पर आपका भरोसा अगले पल के लिए पर्याप्त नहीं होगा। ‘आत्मा के अनुसार चलो, तो तुम शरीर की लालसा किसी रीति से पूरी न करोगे।’”⁷⁷

शरीर नीचे की ओर खींचता है, यहीं और अभी पूर्ति और तृप्ति की खोज की ओर; उसका झुकाव लगातार पाप की ओर रहता है। आत्मा ऊपर की ओर, मसीह की ओर खींचता है। आइए, हम अपने आप को ऊपर की ओर खींचने दें! एक ग्लाइडर विमान स्वयं उड़ान नहीं भर सकता, वह केवल दिशा दे सकता है और हवा का उपयोग कर सकता है। उसे ऊपर खींचा जाना पड़ता है। तो आइए, हम ऊपर की बातों पर ध्यान लगाएँ, जहाँ मसीह है!

76. Charles B. Cousar, *Galatians*, पृ. 138।

77. W. Ian Thomas, *Tote können nicht sterben*, पृ. 111।

13. नया और पुराना मनुष्य: पुरानी बातें बीत गईं, नई बातें हो गई हैं

पौलुस केवल तीन बार नए मनुष्य की बात करता है: एक बार कुलुस्सियों की पत्नी में, दो बार इफिसियों की पत्नी में। नया मनुष्य उस सब का सार है जो परमेश्वर ने मसीह के द्वारा पूरा किया है। परमेश्वर का उद्धार-कार्य महिमा पाए हुए मनुष्य के पुत्र के आदर्श पर एक नया मनुष्य रचता है, और साथ ही बहुत से नए मनुष्य भी!

ये मनुष्य केवल नए आचरण-मानकों के अनुसार ढलकर बस अलग होना नहीं चाहते – नहीं, वे सचमुच एक नई सृष्टि हैं। जैसे परमेश्वर ने पहले मनुष्य को रचा, नए मनुष्य की सृष्टि भी उतनी ही वास्तविक है! यह आमूल परिवर्तन, पुराने के बदले नया पाना, भीतर से होता है; यह हृदय का परिवर्तन है, जिससे कुछ बिल्कुल नया, अर्थात् स्वयं परमेश्वर का जीवन, उत्पन्न होता है।

नया मनुष्य उस बात का साकार रूप है जो छुड़ाया गया पापी अब मसीह में बन गया है। पौलुस की दोनों पत्रियाँ, जो इस शब्द का प्रयोग करती हैं, मसीह में हमारी नई उद्धार-स्थिति के विभिन्न पहलुओं का वर्णन करती हैं। उद्धार के इन बहुत से अनर्जित पहलुओं के योग को नया मनुष्य कहा जा सकता है। जिन पाठों में नया मनुष्य शब्द आता है, वे इस प्रकार हैं:

“... ताकि वह मेल कराकर उन दोनों से अपने में एक नया मनुष्य उत्पन्न करे।”

इफिसियों 2:15

“... कि तुम पिछले चाल-चलन के विषय में उस पुराने मनुष्य को उतार चुके हो, जो धोखे की अभिलाषाओं के अनुसार बिगड़ता जाता है, परन्तु अपनी मनोवृत्ति की आत्मा में (या: के द्वारा) नए बनते जाते हो (या: अपनी सोच की आत्मा में) और उस नए मनुष्य को पहन चुके हो, जो परमेश्वर के अनुसार सत्य की धार्मिकता और पवित्रता में सृजा गया है।”

इफिसियों 4:22-24

“एक दूसरे से झूठ मत बोलो, क्योंकि तुमने पुराने मनुष्य को उसके कामों समेत उतार डाला है और नए (मनुष्य) को पहन लिया है, जो अपने सृजनहार के स्वरूप के अनुसार ज्ञान प्राप्त करने के लिए नया बनता जाता है; जहाँ न यूनानी रहा न यहूदी, न ख़तना न ख़तनारहित, न जंगली, न स्कूती⁷⁸, न दास, न स्वतंत्र, परन्तु मसीह सब कुछ और सब में है।”

कुलुस्सियों 3:9-11

78. अर्थात् काला सागर के पास रहनेवाली एक घुड़सवार घुमन्तू जाति का सदस्य।

इन शब्दों को ध्यान से जाँचने से पहले, आइए, जैसे गलातियों की पत्री में किया था, वैसे ही इन दोनों पत्रियों में भी उद्धार के बहुत से पहलुओं को एकत्र करें:

13.1 इफिसियों की पत्री में नया मनुष्य

- पवित्र (1:1, 4)
- आशीषित (1:3)
- चुने हुए (1:4)
- निर्दोष (1:4)
- परमेश्वर की सन्तान होना (1:5)
- अनुग्रह पाए हुए (1:6)
- छाप लगाए हुए (1:13)
- जीवित किए गए (2:5)
- साथ में स्वर्गीय स्थानों में, अर्थात् स्वर्गीय लोक में बैठाए गए (2:6)
- बचाए गए (2:8)
- हम **उसकी रचना** (उसकी बनावट, उसकी सृष्टि) हैं, जो मसीह यीशु में सृजे गए (2:10)।
- हम, जो दूर थे, निकट आ गए हैं (2:13)।
- हम एक **नए मनुष्य** के रूप में सृजे गए हैं (यहूदी और अन्यजाति मसीह में एक किए गए) (2:15)।
- परमेश्वर से मेल कराए गए (2:16)
- पिता के पास पहुँच रखनेवाले (2:18)
- संगी नागरिक (2:19)
- परमेश्वर के घराने के (2:19)
- संगी वारिस (3:6)
- एक ही देह के सहभागी (3:6)
- प्रतिज्ञा में सहभागी (3:6)
- परमेश्वर के आत्मा के द्वारा **भीतरी मनुष्य** में सामर्थ्य पाए हुए (3:16)
- मसीह उसके हृदय में वास करता है (3:17)।
- परमेश्वर की सारी भरपूरी तक भरपूर किए गए (3:19)
- ज्योति की सन्तान (5:8)।

13.2 कुलुस्सियों की पत्री में नया मनुष्य

- पवित्र (1:2, 22)
- ज्योति में विरासत के योग्य बनाए गए (1:12)

- अन्धकार के वश से छुड़ाए गए (1:13)
- उसके प्रिय पुत्र के राज्य में पहुँचाए गए (1:13)
- उसमें छुटकारा है (1:14)
- पापों की क्षमा (1:14)
- मेल कराए गए (1:22)
- निर्दोष (1:22)
- निष्कलंक (1:22)
- **मसीह हम में**, महिमा की आशा (1:27)
- **मसीह में सिद्ध** (1:28)
- **उसमें परिपूर्ण – भरपूरी तक पहुँचाए गए** (2:10)
- मसीह में (आत्मिक रीति से) ख़तना किए गए (2:11)
- उसमें साथ जिलाए गए (2:13; 3:1)
- मसीह के साथ मरे हुए (2:20; 3:3)
- **मसीह हमारा जीवन है** (3:4)।
- परमेश्वर के चुने हुए (3:12)।

उद्धार की यह प्रभावशाली “सूची” इस बात पर तेज़ प्रकाश डालती है कि मसीह में नया मनुष्य क्या है।

13.3 इफिसियों और कुलुस्सियों की पत्रियों में पुराना मनुष्य

यदि कोई यह समझाना चाहे कि **पुराना मनुष्य** कौन और क्या है, तो ये पत्रियाँ इस विषय में भी जानकारी देती हैं:

इफिसियों

- अपराधों और पापों में मरे हुए (इफिसियों 2:1; तुलना करें 5:6)
- आकाश के अधिकार के हाकिम के द्वारा चलाए और नियंत्रित किए जानेवाले (2:2)
- आज्ञा न माननेवालों की सन्तान (2:2)
- शरीर की लालसाओं से निर्धारित (2:3)
- स्वभाव ही से क्रोध की सन्तान (2:3)
- मसीह से अलग (2:12)
- इस्राएल की प्रजा के पद से अलग (2:12)
- प्रतिज्ञा की वाचाओं के भागी नहीं, परदेशी (2:12)
- आशाहीन (2:12)
- जगत में परमेश्वर-रहित (2:12)

- अपने मन की व्यर्थ रीति पर जीनेवाले (4:17)
- बुद्धि में अन्धकारमय (4:18)
- परमेश्वर के जीवन से अलग किए हुए (4:18)
- हृदय की कठोरता वाले (4:18)
- स्वस्थ संवेदना से रहित (4:19)
- मसीह और परमेश्वर के राज्य में कोई मीरास न रखनेवाले (5:5)
- (नैतिक रूप से) पूरी तरह अन्धकार (5:8)।

कुलुस्सियों

- अन्धकार के वश में रहनेवाले (1:13)
- (परमेश्वर से और परमेश्वर की इच्छा के अनुसार मनुष्य होने से) अलग किए हुए (1:21)
- मन से परमेश्वर के बैरी (1:21)
- बिना मेल कराए (1:22)
- आज्ञा न माननेवालों की सन्तान (3:6)।

इससे पुराने और नए मनुष्य के अन्तर स्पष्ट रूप से निर्धारित हो जाते हैं। पुराना मनुष्य वह पुराना चाल-चलन है, जो उद्धार के सम्पूर्ण मोड़ से पहले था, जब परमेश्वर ने छुटकारे के कार्य में अपने सृष्टि-कार्य के द्वारा एक नया मनुष्य रचा। अब नया मनुष्य केवल पुराने जीवन के विपरीत नया चाल-चलन या कोई नया अथवा बेहतर आचरण ही नहीं दर्शाता। ऐसे लोग हैं जिनका यीशु से कोई संबंध नहीं और जो कड़े अनुशासन से अपने जीवन को बेहतर भी बना सकते हैं। वे नैतिक रूप से कई ऐसे मसीहियों से भी बेहतर चाल-चलन रखते हैं, जो “नया मनुष्य” हैं। परन्तु शरीर में रहनेवाला मनुष्य नैतिक रूप से अच्छा व्यवहार तो कर सकता है, पर जब तक वह शरीर में है, वह शायद मनुष्यों को प्रसन्न कर सके, परमेश्वर को नहीं। यहाँ हमारा सामना परिवर्तन के एक दूसरे आयाम से है, न कि केवल किसी आचरण से। बात मनुष्य के सुधार (रिफॉर्मेशन) की भी नहीं, बल्कि एक सच्ची नई सृष्टि की है, अर्थात् मनुष्य में नए जीवन की रचना की। यह नई बात, अर्थात् नया जीवन, ठोस रूप से एक व्यक्ति है: मसीह (1 यूहन्ना 5:11-12; कुलुस्सियों 3:4, 11)। दुःख की बात है कि परमेश्वर की दृष्टि में पुराने मनुष्य में से कुछ भी काम का नहीं रहा था।

13.4 नए मनुष्य की सृष्टि का वृत्तान्त

नया मनुष्य परमेश्वर के स्वरूप के मानकों के अनुसार, अर्थात् धार्मिकता, पवित्रता और सत्य में रचा गया है। सचमुच एक नया मनुष्य अस्तित्व में आया है, न कि केवल आचरण का एक नया ढर्रा। दोनों अद्वैत रूप से जुड़े हैं: एक नए मनुष्य का नैतिक और आचार-संबंधी व्यवहार भी नया होता है। यह तभी संभव है, जब मनुष्य नैतिक और आचार-संबंधी दृष्टि से भी नया किया गया हो। इसका संबंध फिर उसके हृदय, विवेक,

भावना, उसकी आत्मा, उसके मन और उसके प्राण से है, जो सब नैतिकता और आचार से जुड़े हैं और उन्हें निर्धारित करते हैं।

पवित्रशास्त्र के इन वचनों पर विचार करते हुए पहले मनुष्य की सृष्टि का वृत्तान्त याद आता है, क्योंकि यहाँ कम से कम एक समानता है। आदम परमेश्वर के स्वरूप में और उसकी समानता के अनुसार रचा गया (उत्पत्ति 1:26-28)। “तब यहोवा परमेश्वर ने आदम को भूमि की मिट्टी से रचा, और उसके नथनों में जीवन का श्वास फूँक दिया; और आदम जीवित प्राणी बन गया” (उत्पत्ति 2:7)। सृष्टि की यह प्रक्रिया मनुष्य को पशु से भिन्न, आत्मा, प्राण और देह से बना प्राणी बनाती है। इन तीन पहलुओं का उल्लेख कोई मानवविज्ञान-संबंधी प्रश्न नहीं उठाना चाहता, बल्कि केवल इस ओर संकेत करता है कि परमेश्वर के स्वरूप का वाहक होने के नाते मनुष्य के पास एक आत्मा भी है। इस रूप में वह परमेश्वर से संवाद करने, उस पर विश्वास करने और उससे प्रार्थना करने में सक्षम है।

मसीह में नया मनुष्य भी उसी में अपना प्रतिरूप, अर्थात् अपना आदर्श पाता है, जिसने उसे रचा। नए मनुष्य को किसने रचा? परमेश्वर ने उसे रचा। केवल परमेश्वर ही कुछ नया रच सकता है। परन्तु आदिकाल के वृत्तान्त से अन्तर भी हैं। मनुष्य की नई सृष्टि मनुष्य की सम्पूर्ण पापमयता और नैतिक भ्रष्टता के कारण आवश्यक हो गई। इसलिए नया मनुष्य अब उसके बिल्कुल विपरीत गुणों से पहचाना जाता है: धार्मिकता, पवित्रता और सत्य से, जैसे वे पृथ्वी पर मनुष्य के रूप में यीशु के जीवन में भी पाए जाते थे। यह हमारे प्रतिदिन के जीवन के लिए विशेष महत्व रखता है, जहाँ बात यह है कि इस ग्रह पर पुराने और नए मनुष्य अभी भी एक साथ रहते हैं।

तो परमेश्वर ने आदम के नथनों में जीवन का श्वास फूँका। इसके द्वारा मिट्टी से रची गई देह एक जीवित प्राणी, एक व्यक्ति बन गई। इस घटना में परमेश्वर के आत्मा का भी भाग था। इसलिए परमेश्वर का श्वास ही था, जिसने आदम को एक व्यक्ति बनाया, एक ऐसा प्राणी जिसके पास आत्मा है। अब मनुष्य की नई सृष्टि में ऐसा है कि आदम की सृष्टि की तुलना में मसीह का जीवन मानो हम में फूँका जाता है (तुलना करें यूहन्ना 20:22 भी)। हम में यह जीवन हमारे व्यक्तित्व से, हमारे “मैं” से जुड़ जाता है। इसलिए हमारे विषय में कहा जा सकता है कि हम नए मनुष्य हैं।

नया मनुष्य हर व्यक्तिगत मनुष्य के लिए एक प्रकार के स्थान-धारक की तरह है। दूसरे शब्दों में: नया मनुष्य नया Hans-Jörg है, नई क्रिस्टीने (Christine) है – मसीह में। इस नए मनुष्य की निर्णायक बात वह मसीह है, जो हम में जीवित है और जिसमें हम जीवित हैं। वही असल में नई बात है। मसीह का जीवन हम में धड़कता है! मसीह का आदर्श केवल भीतर वास करनेवाले मसीह के द्वारा ही आकार लेता है! कोई और बात (न व्यवस्थाएँ, न नियम, न संकल्प, न कोई परिश्रम, न कोई शिक्षा-दीक्षा) हम में जीवित इस मसीह का स्थान नहीं ले सकती।

यीशु में ये तीनों बताए गए गुण (धार्मिकता, पवित्रता और सत्य) पूर्ण रूप से उपस्थित थे। उसी ने क्रूस पर एक नए मनुष्य की सृष्टि को पहली बार संभव बनाया, क्योंकि उसने सारे परिणामों को, पुराने मनुष्य का

सारा हिसाब, क्रूस पर अपने ऊपर ले लिया (रोमियों 6:6)। इसी ने किसी बिल्कुल नई बात के लिए मार्ग खोला। अब मसीह स्वयं वह स्वरूप है, जिसके अनुसार नया मनुष्य रचा गया है। मसीह मूल-स्वरूप और प्रतिबिम्ब भी है; प्रतिबिम्ब इस अर्थ में कि वह अब स्वयं मुझ में वास करता है और यही नया जीवन है। “और जैसे हमने उसका रूप जो मिट्टी का था धारण किया, वैसे ही उस स्वर्गीय का रूप भी धारण करेंगे” (1 कुरिन्थियों 15:49)। यह बहुत से दूसरे वचनों के साथ केवल एक बाइबल-वचन है, जो गवाही देते हैं कि परमेश्वर की योजना हमें यीशु के स्वरूप में बदलने की है (उदाहरण के लिए रोमियों 8:29; 2 कुरिन्थियों 3:18; 1 यूहन्ना 3:2)। स्वर्गीय का रूप अन्ततः देह को भी सम्मिलित करता है, परन्तु यीशु के स्वरूप में रूपान्तरण की प्रक्रिया नए मनुष्य की सृष्टि (या जन्म) के दिन से अभी आरम्भ ही हुई है। और वहाँ तक का मार्ग स्वयं मसीह से होकर जाता है। हम में मसीह ही नया जीवन है, और इसी अर्थ में “नया मनुष्य” है।

13.5 बहुत से लोग एक नया मनुष्य हैं

नया मनुष्य शब्द इफिसियों की पत्रा में पहली बार 2:15 में आता है: “... ताकि वह मेल कराकर उन दोनों से अपने में एक नया मनुष्य उत्पन्न करे।” यहाँ बात यहूदियों और अन्यजातियों के एक नए मनुष्य में जुड़ जाने की है। यहाँ स्वयं मसीह नए मनुष्य का सृजनहार है। यहाँ विश्वव्यापी कलीसिया परमेश्वर के मन्दिर और आत्मा में परमेश्वर के निवासस्थान के रूप में केन्द्र में है, और इस प्रकार वह पहलू सामने आता है, जो एकता और सामूहिकता को नए मनुष्य होने के मूल लक्षण के रूप में जोर देता है। यहाँ बात उसकी है जो अब सब मसीहियों में साझा है। और इस अर्थ में भी यह नया समूह अन्ततः स्वयं मसीह है: 1 कुरिन्थियों 12:12: “... वैसे ही मसीह भी है”: मसीह देह है और साथ ही सिर भी।

नए मनुष्य का उल्लेख सदा एकवचन में होता है। इस अर्थ में बात एक नए मानव-समुदाय की भी है, जिसका सिर और आरम्भ मसीह है (कुलुस्सियों 1:17-18)। यह उस मानव-समुदाय के विपरीत है, जिसका सिर पतित आदम है (रोमियों 5:12-21)। मसीह के सिद्ध स्वभाव को, अर्थात् नए मनुष्य के स्वभाव को, अपने चाल-चलन में प्रतिबिम्बित करने के लिए सब विश्वासी आवश्यक हैं।

“परमेश्वर के उद्धार के सृजनात्मक कार्य में व्यक्तिगत दृष्टिकोण इफिसियों 2:10 में प्रकट होता है, जहाँ पौलुस हर व्यक्ति के विषय में कहता है कि वह ‘मसीह यीशु में सृजा गया’ है। अधिक सामूहिक दृष्टिकोण की ओर परिवर्तन 2:11-22 में आता है। आदम-मसीह प्रतिरूप-शिक्षा (टाइपोलॉजी) इस खंड के पीछे भी है। परन्तु इफिसियों 2:15 का केन्द्र परमेश्वर के सामने व्यक्तिगत स्थिति और उसके ‘आदम में होने’ के विपरीत ‘मसीह में होने’ पर उतना नहीं है, जितना उन नए संबंधों पर, जो मानवीय आपसी स्तर पर उनके लिए विद्यमान हैं जो ‘मसीह में’ हैं। यहूदियों और अन्यजातियों का मेल कराया गया, और मसीह में मिलकर वे ‘नया मनुष्य’ बनाते हैं। ‘नया मनुष्य’ एक नया समाज है, जिसमें सब की परमेश्वर तक स्वतंत्र और समान पहुँच है और सब स्वर्गीय बातों में (अर्थात् स्वर्गीय क्षेत्रों में) पहुँचाए गए हैं (2:5-6)। ‘नए मनुष्य’ की

नए मनुष्य का हमारी जातीय उत्पत्ति से, हमारी सामाजिक और धार्मिक पृष्ठभूमि से, और उन सब लाभो-हानियों और परिणामों से, जो कभी उनसे जुड़े थे, अब कोई संबंध नहीं है। ये सब संबंध और जुड़ाव समाप्त हो गए हैं। नए संबंध बन गए हैं – परमेश्वर के घर के भीतर, कलीसिया के भीतर, मसीह की देह के भीतर। मानो हमें इस नए मनुष्य में एक नया घर मिल गया है।

अब हमारी रुचि नए मनुष्य के व्यक्तिगत पहलू में भी है, अर्थात् उसमें, जो हम – हर एक व्यक्तिगत रूप से – बन गए हैं।

13.6 व्यक्तिगत व्यक्तित्व एक नया मनुष्य बनाता है

नए मनुष्य का “मूल नमूना” (प्रोटोटाइप), उसका आदर्श, मनुष्य मसीह यीशु है। वही सब बातों का मापदंड है। फिर भी वह कोई एक-सा बना मनुष्य नहीं है, जो उन सब व्यक्तिगत विशेषताओं को, जो हर मनुष्य के व्यक्तित्व को बनाती हैं, समतल कर दे, एक जैसा बना दे या मिटा दे। चाहे अभी वर्णन किया गया, सामूहिकता और एकता पर ज़ोर देनेवाला पहलू शायद ऐसा आभास दे, फिर भी नया मनुष्य बहुत सी नई सृष्टियों से बना है (तुलना करें 2 कुरिन्थियों 5:17)। यह परमेश्वर की सर्वशक्ति का, और साथ ही उसकी बुद्धि और कला का भी प्रमाण है कि उसकी सृष्टि विविधता और व्यक्तिगतता से भरपूर है। कहा जाता है कि कोई भी पत्ता किसी दूसरे पत्ते के समान नहीं होता, और हिम का एक कण भी अपनी स्फटिक-संरचना में दूसरे के समान नहीं होता। मनुष्य के साथ भी ऐसा ही है। बाहर से और अपने व्यक्तित्व में भी कोई मनुष्य किसी दूसरे के 100 % समान नहीं है।

इसी प्रकार नया जन्म पाने पर भी हर मनुष्य का व्यक्तिगत व्यक्तित्व बना रहता है। जब कोई मनुष्य विश्वास में आता है, तो बाहर से (उसके व्यवहार में) पहले-पहल लगभग कुछ नहीं बदलता। परन्तु उसके भीतर कुछ महान आरम्भ होता है: परमेश्वर के वचन का बीज बोया जाता है – मानो परमेश्वर का DNA – जिसके द्वारा उसका नया जन्म होता है (1 पतरस 1:3, 23)।

उसी मनुष्य के पास अब एक बदला हुआ जीवन है: **“अब मैं जीवित न रहा, पर मसीह मुझ में जीवित है; और मैं शरीर में अब जो जीवित हूँ तो केवल उस विश्वास से जीवित हूँ ... जो परमेश्वर के पुत्र पर है, जिसने मुझ से प्रेम किया और मेरे लिए अपने आप को दे दिया”** (गलातियों 2:20)। यहाँ वह पुराना “मैं”, जो अब जीवित नहीं है, पुराने मनुष्य के बराबर है। परन्तु अब भी एक “मैं” विद्यमान है, नहीं तो वह व्यक्ति ही न रहता। यह “मैं” अब नया मनुष्य है, नया “मैं”, मसीह में “मैं”, जो अब मुझ में (मेरे भीतर) जीवित है। तो “मैं जीवित हूँ, और मसीह मुझ में जीवित है” नए मनुष्य को दर्शाता है, जो साथ ही वही व्यक्ति है जो वह पहले था, परन्तु अब स्वयं मसीह के द्वारा निर्धारित और स्वयं मसीह से भरपूर है।

“एक नया जीवन नितान्त आवश्यक था। जो मैं हूँ, उसके संबंध में सारा परिश्रम, परिश्रम करने की सारी आवश्यकता, समाप्त हो गई है। मैं अपने ‘मैं’ को भक्ति प्रदान नहीं कर सकता। ‘मसीह में मनुष्य’ (2 कुरिन्थियों 12:2) के पास शरीर (यूनानी *sarx*) और पाप अब अस्तित्व में नहीं हैं (उस नई सृष्टि में, जो मैं मसीह में हूँ)। इससे भी बढ़कर – शब्द के सच्चे अर्थ में: ‘मैं’ (पुराने मनुष्य के अर्थ में समझा गया) अब अस्तित्व में नहीं हूँ – ‘मैं मसीह के साथ क्रूस पर चढ़ाया गया हूँ, मैं मर चुका हूँ; फिर भी मैं जीवित हूँ, पर मैं नहीं, बल्कि मसीह मुझ में जीवित है।’ या अधिक ठीक-ठीक: ‘मैं जीवित हूँ, फिर भी अब मैं नहीं।’ यह ‘मैं, अब मैं नहीं’ मसीही विश्वास को व्यवहार में उतारने का रहस्य और शक्ति है। मैं जीवित हूँ, क्योंकि निश्चय ही व्यक्ति (व्यक्ति-विशेष, अर्थात् हर एक मनुष्य) वही रहता है। बात प्लेटो के रहस्यवाद की नहीं, न सत्ता के महासागर में सर्वेश्वरवादी ढंग से विलीन हो जाने की है। वह आनन्द, जो मेरे हृदय को भरता है, और वह ज्योति, जो मेरे जीवन को प्रकाशित करती है, मेरे हैं। वे पूरी तरह मेरे हैं। नहीं, अब से मैं एक सच्चा अनन्त जीवन जीता हूँ, जिसे सचमुच यह नाम दिया जा सकता है। जैसा प्रेरित कहता है, पहली बार मेरे पास ‘सच्चा जीवन’ है (1 तीमथियुस 6:19)।

उसकी शान्ति, उसका आनन्द, उसका जीवन और उसका आत्मा अब मेरे हैं; उसकी आकांक्षा, उसके लक्ष्य, उसकी रुचियाँ अब मेरी हैं; पिता का प्रेम अब मेरा है; उसका वर्तमान तिरस्कार और उसकी भावी महिमा भी; और यह सब उस प्रेम की शक्ति में, जिसके द्वारा उसने, अपने व्यक्तिगत हिसाब और भुगतान पर, मुझे पूरी तरह स्वतंत्र कर दिया है।”⁸⁰

नया मनुष्य (अर्थात् मुझ में मसीह) हमारे उद्धारकर्ता के व्यक्तिगत आत्म-बलिदान का परिणाम और उसके दुःखों का फल है। यह नई सृष्टि सदा के लिए यीशु के प्रेम से चिह्नित है।

13.7 नया मनुष्य क्या है?

कुलुस्सियों 3:11 में नया मनुष्य क्या है, इसकी ठोस व्याख्या यह है:

मसीह सब कुछ और सब में (है)।

पहले, मसीह नए मनुष्य का आदर्श है – उसकी सृष्टि में भी और उसके चाल-चलन के लिए भी; वही उसका जीवन-क्षेत्र और उसकी आशा है। परन्तु मसीह हम में भी है। यही नया मनुष्य है। और यही कुलुस्सियों की पत्री का संदेश भी है: मसीह तुम में, महिमा की आशा (1:27)। मसीह हमारा जीवन है (3:4)।

परन्तु यदि कोई स्वयं मसीह को नया मनुष्य कहे, तो सृष्टि की बात नहीं की जा सकती। मसीह को रचा नहीं गया, वह अनन्त है, क्योंकि वह परमेश्वर है। कुछ और रचा जाना आवश्यक था, क्योंकि वह पहले अस्तित्व में नहीं था: एक मनुष्य इस प्रकार नई सृष्टि बनता है कि उसे मसीह का जीवन और उसके स्वभाव में भाग मिलता है। उसका जीवन मेरे अन्तरतम में रोपा जाता है। मसीह का जीवन मानो मेरे व्यक्तिगत

80. F. W. Grant, *Deliverance: What is it?*

व्यक्तित्व में उतार दिया जाता है, जैसे परमेश्वर ने आदम के नथनों में जीवन का श्वास फूँका। इस प्रकार हमें “भरपूरी तक पहुँचाया गया” है (कुलुस्सियों 2:10; ER, जर्मन बाइबल अनुवाद), अर्थात् पूर्ण किया गया है। मसीह के जीवन ने अब हमारे सम्पूर्ण अस्तित्व को, जैसे हम कभी जन्मे थे, भर दिया या परिपूर्ण कर दिया है। “All of HIM in all of me” – “मेरे सम्पूर्ण में उसका सम्पूर्ण”⁸¹। इस प्रकार निश्चय ही मैं कोई नया मसीह नहीं बनता, बल्कि एक नया मनुष्य, एक नया Hans-Jörg बनता हूँ। “नया” इसलिए कहा जा सकता है कि उसका जीवन अब मसीह से भरा जाता है, क्योंकि यह नया जीवन उसके सम्पूर्ण भीतरी अस्तित्व (भीतरी मनुष्य, हृदय, मन, विवेक, प्राण) को अपने में ले लेता है। इसमें सबसे पहले कोई भावना शामिल नहीं है, बल्कि परमेश्वर के द्वारा किया और पूरा किया गया उद्धार का एक तथ्य है!

“पुराना मनुष्य आदम था, या बेहतर कहें, आदम के साथ एक हुए हम। नया मनुष्य मसीह है, या अधिक ठीक-ठीक: मसीह के साथ एक हुए हम स्वयं।”⁸²

आर्थर सी. कस्टेंस (Arthur C. Custance)⁸³ नई सृष्टि की इस प्रक्रिया का वर्णन विश्वासी में मसीह के देहधारण (इन्कार्नेशन) के रूप में करते हैं। जैसे अनन्त पुत्र ने मनुष्य बनते समय मांस और लहू धारण किया, वैसे ही अब मसीह यीशु सच्चे मनुष्य के रूप में आत्मिक (अलौकिक) अर्थ में हम में जन्म लेता है, ताकि आगे बढ़ता जाए और हमारे जीवन में आकार ग्रहण करे (देखें गलातियों 4:19 भी)। इस प्रकार हर मनुष्य अपने नए जन्म में “अपना व्यक्तिगत क्रिसमस” अनुभव करता है। और केवल इसी दृष्टि से यीशु का मनुष्य बनना अन्ततः उसके लिए अर्थ रखता है।

“मसीह यीशु में विश्वासी एक ऐसी सम्पत्ति का स्वामी बनता है, जो उसके पास पहले कभी नहीं थी – वह ईश्वरीय स्वभाव का सहभागी बनता है। अनसृजे परमेश्वर का अनन्त जीवन उसके मानवीय व्यक्तित्व के अन्तरतम भाग में रोपा गया है, और उसका सम्पूर्ण स्वभाव और अस्तित्व एक नए जीवन की ईश्वरीय ऊर्जा से स्पंदित होता है। नया जन्म एक ऐसे नए स्वभाव का दिया जाना है, जो बुद्धि, भावनाओं और इच्छा को अपने में समेटता है, जो मनुष्य में एक बिल्कुल नया जीवन उत्पन्न करता है और उसे एक सर्वथा नए क्षेत्र में जीने के योग्य बनाता है।”⁸⁴

13.8 नई सृष्टि

यहाँ हम एक बार फिर अपने आप को याद दिलाएँ कि सचमुच और सारभूत रूप से (आत्मिक रूप से) कुछ नया अस्तित्व में आया है और अब विश्वासी में विद्यमान है। “नया मनुष्य” शब्द के समानान्तर कुछ और संबंधित नाम भी हैं:

81. W. Ian Thomas, *The Indwelling Life of Christ*।

82. C. K. Barrett, H. P. Medema में उद्धृत, *Romeinen 7 enzovoorts*, पृ. 79।

83. Arthur C. Custance, *Man in Adam and in Christ*, पृ. 273।

84. Ruth Paxson, *Life on the Highest Plane*, पृ. 192।

“हम **उसकी रचना** (उत्कृष्ट कृति, बनावट) हैं, जो मसीह यीशु में सृजे गए” (इफिसियों 2:10)। यह अधिक व्यक्तिगत पहलू है। यह दिखाता है कि जैसे परमेश्वर ने पहली सृष्टि में अपना प्रेम, अपनी बुद्धि और ईश्वरीय शक्ति रखी, वैसे ही यह नई सृष्टि के लिए भी लागू होता है। वहाँ उसका प्रेम और भी स्पष्ट रूप से प्रकट होता है, क्योंकि उसकी शक्ति नहीं, बल्कि उसका असीम प्रेम आवश्यक था। क्योंकि उसके पुत्र की मृत्यु (जिसका प्रतीक बोया गया गेहूँ का दाना, नए जीवन का बीज है) ही नया फल उत्पन्न करती है।

“इसलिए यदि कोई मसीह में है, तो वह **नई सृष्टि** है; पुरानी बातें बीत गई हैं; देखो, **नई** बातें हो गई हैं” (या “सब कुछ नया हो गया है” [E1b]; 2 कुरिन्थियों 5:17)। सचमुच पुरानी बातें बीत गई हैं, चाहे आज भी हम में पुराना स्वभाव हो। क्रूस पुराने मनुष्य का अन्त है। परमेश्वर के लिए हम अभी से “मसीह में” सिद्ध हैं; पुराने को वह अब नहीं देखता।

“क्योंकि मसीह यीशु में न खतना कुछ है, न खतनारहित होना, बल्कि **नई सृष्टि**। जितने इस नियम पर चलेंगे ...” (गलातियों 6:15-16; Schl 2000, जर्मन बाइबल अनुवाद)। नई सृष्टि अपने साथ एक दूसरा जीवन लाती है, जो पुरानी सृष्टि और मूसा की व्यवस्था के अनुसार नहीं चलता। बल्कि यह सृष्टि हमें भीतर से सुसज्जित करती है और हमें बताती है कि हमें कैसे जीना है: जैसे हमने मसीह यीशु को प्रभु करके ग्रहण किया है, वैसे ही हमें उसमें चलना है (तुलना करें कुलुस्सियों 2:6)।

मसीह सारी सृष्टि में पहलौठा है (नई सृष्टि में भी; कुलुस्सियों 1:15), वह मरे हुएओं में से पहलौठे के रूप में उसका आरम्भ और कर्ता है (कुलुस्सियों 1:18; प्रकाशितवाक्य 3:14)। इसलिए नई सृष्टि स्पष्ट रूप से मसीह से निकलती है, क्योंकि वह इस बात का परिणाम है कि मृत्यु पर विजय पाई गई है। वह मृत्यु के उस पार उसके अविनाशी जीवन की सामर्थ्य में आरम्भ होती है (इब्रानियों 7:16)। इसलिए मसीह में नया मनुष्य मृत्यु के उस पार भी अविनाशी, कभी न खोनेवाला, अक्षय और अनन्त है।

13.9 क्या नया सृजा गया?

इन पदों में यह नहीं कहा गया कि ठीक-ठीक क्या नया सृजा गया। मनुष्य में कोई “समानान्तर मनुष्य” नहीं रचा जाता, जिससे एक मनुष्य में अब दो व्यक्तित्व हों। हर मनुष्य के उद्धार के मोड़ पर पुराने मनुष्य का इतिहास, अर्थात् उसका सम्पूर्ण अस्तित्व, गुलगुता के क्रूस पर समाप्त कर दिया गया। पुराना और नया मनुष्य साथ-साथ अस्तित्व में नहीं रहते। **नए मनुष्य ने पुराने मनुष्य का स्थान ले लिया है।** नया मनुष्य उस सब का सार है जो हम अब मसीह में – व्यक्तिगत रूप से और सामूहिक रूप से भी – बन गए हैं।

नई सृष्टि फ़िलहाल मनुष्य के भीतरी भाग तक सीमित है (जो परन्तु चाल-चलन में प्रकट होता है)। इसलिए एक “भीतरी मनुष्य” की बात की जाती है (इफिसियों 3:16; रोमियों 7:22; 2 कुरिन्थियों 4:16; तुलना करें 1 पतरस 3:4), जो नए जीवन और नए मनुष्य के अनुरूप है। देह भविष्य के रूपान्तरण या पुनरुत्थान में ही नई सृष्टि में भाग पाती है। अन्त में इस नई सृष्टि से कुछ भी बाहर नहीं रहता, क्योंकि पुनरुत्थान में हम पूरी तरह, और परमेश्वर की इच्छा के अनुसार मनुष्य होने के सब पहलुओं के साथ, सिद्ध

होंगे। तब हम दैहिक, मानसिक और आत्मिक दृष्टि से प्रभु यीशु के समान होंगे – परन्तु तब पार्थिव के रूप में नहीं, बल्कि उसके समान स्वर्गीय के रूप में।

सारांश में कहा जा सकता है कि – जहाँ तक हमारे व्यक्तित्व का प्रश्न है – एक ओर हम वही बने रहे हैं और फिर भी साथ ही पूरी तरह नए हो गए हैं। परमेश्वर हमें व्यक्तित्वों के रूप में वैसा ही चाहता है जैसे हम हैं (अर्थात् वैसे, जैसे हम उसकी सृष्टि के रूप में जन्मे, और ऐसे लोगों के रूप में जिनकी अपनी पहचान है)। परन्तु वह हमें केवल “मसीह में” स्वीकार करता है, अर्थात् केवल उन लोगों के रूप में, जो मसीह में पहुँचाए गए हैं। और इसका प्रबंध उसने स्वयं किया है, क्योंकि उसने स्वयं हमें मसीह में पहुँचाया है (1 कुरिन्थियों 1:30)। इसके द्वारा उसने हमें यीशु के सम्पूर्ण उद्धार-कार्य में भी “रोप दिया” है। मसीह की मृत्यु, गाड़ा जाना, पुनरुत्थान, स्वर्गारोहण और महिमा दिया जाना हमारे लिए लागू हैं, क्योंकि हम उसके साथ स्वर्गीय स्थानों में बैठाए गए हैं (इफिसियों 2:6)।

13.10 क्या नए मनुष्य को नवीनीकरण की आवश्यकता है?

दोनों पत्रियाँ (इफिसियों और कुलुस्सियों) ज़ोर देती हैं कि नया मनुष्य लगातार नया किया जाता है। तो क्या यह खतरा है कि वह पुराना और निर्बल हो जाए, या मर भी सके?

इस पर एक मूलभूत टिप्पणी: कुछ भी, कोई भी प्राणी, अपने आप में और अपने आप से अस्तित्व में नहीं है। जो कुछ रचा गया है और जीवित है (नई सृष्टि भी), वह सृजनहार के द्वारा सम्भाला और बनाए रखा जाता है (कुलुस्सियों 1:17; इब्रानियों 1:3; नहेम्याह 9:6)। मेरा हृदय धड़कता है (हर दिन 80 000 बार तक), तो यह परमेश्वर की सृष्टि को बनाए रखनेवाली शक्ति के कारण है। जो रचा गया है, वह उस पर निर्भर है! नया मनुष्य भी ऐसा ही है। उसे उसका सृजनहार, मसीह, जीवन देता है।

भीतरी मनुष्य को लगातार नया किया जाना और जीवन दिया जाना आवश्यक है। मसीही के आत्मिक जीवन को निरन्तर पोषण मिलना आवश्यक है। मसीही को परमेश्वर के आत्मा के द्वारा सदा शक्ति में बढ़ते जाना चाहिए। यह शक्ति “भीतरी मनुष्य के भीतर तक” कार्य करती है (इफिसियों 3:16 का शाब्दिक अर्थ)। यह निरन्तर नवीनीकरण और जीवन दिया जाना इसलिए आवश्यक है कि मसीही अभी भी एक मरनहार और निर्बल देह में है, और उसमें पुराने जीवन का शेष भाग (पुराना स्वभाव) भी अभी है, और उसकी सोच प्रायः अब भी उससे प्रभावित होती है। हम “अभी से” और “अभी नहीं” में जीते हैं। नवीनीकरण इसलिए आवश्यक है कि मसीही एक पतित सृष्टि की कठिनाइयों और संकटों के सामने खुला है और एक शत्रुतापूर्ण, बहकानेवाले संसार में है। और कम महत्व की बात नहीं कि नवीनीकरण और जीवन दिया जाना इसलिए भी आवश्यक है कि प्राणों का शत्रु, जो आरम्भ से बहकानेवाला और हत्यारा है, विश्वासी के विरोध में खड़ा है।

मसीही एक तनाव-भरे क्षेत्र में है। हमारे मसीही जीवन पर प्रतिदिन अलग-अलग मोर्चों पर आक्रमण होता है। इन आक्रमणों का एक लक्ष्य है: वे हमें इस बात के लिए बहकाना चाहते हैं कि हम अपने जीवन को

संसार के अनुसार ढाल लें और वैसे जिएँ जैसे पुराना मनुष्य जीता है, अर्थात् अपने लिए, विश्वास और आज्ञाकारिता की चिन्ता किए बिना। बाइबल की सहायता से शत्रुओं को ठीक-ठीक पहचाना जा सकता है: मेरे भीतर शरीर (यूनानी **sarx**) है, पुराना स्वभाव। मेरे बाहर संसार है (मनुष्य और उनका संसार), जिसे परमेश्वर की कोई परवाह नहीं। और फिर वह बड़ा शत्रु है, जिसे इब्लीस और शैतान कहा जाता है। स्वर्ग में नवीनीकरण की आवश्यकता नहीं रहेगी, क्योंकि तब ये शत्रु नहीं रहेंगे: शरीर हमारी मरनहार देह के साथ समाप्त हो जाएगा, संसार अपनी अभिलाषाओं समेत मिटता जाता है, और शैतान हमारे पैरों तले कुचल दिया जाएगा।

“और नए (मनुष्य) को पहन लिया है’ अभिव्यक्ति में ‘नया’ शब्द यूनानी में **neos** है; यह केवल एक दूसरे जीवन की ओर नहीं, बल्कि बिल्कुल नए प्रकार के जीवन की ओर संकेत करता है, अर्थात् इस ‘मनुष्य-जाति’ को यौवन और ताज़गी में प्रस्तुत किया गया है, और इसमें बढ़ने की एक जीवित प्रक्रिया मानी गई है। बात एक सामर्थी युवा जीवन की है, जो सामान्य जीवन में बढ़ने और उन्नति करने के साथ आकार लेता है। बढ़ने की इस प्रक्रिया का वर्णन एक निरन्तर नवीनीकरण के रूप में किया गया है, जिसमें पवित्र आत्मा इस नए मनुष्य को (तीतुस 3:5) एक सर्वथा नई सोच और (नए) लक्षण देता है, न कि पुराने मनुष्य का कार्याकल्प करता है। ये लक्षण उसके सृजनहार के स्वरूप के अनुरूप हैं, अर्थात् स्वयं परमेश्वर और मसीह के: क्योंकि नए मनुष्य के लिए परमेश्वर (इफिसियों 2:10) और मसीह (2:15) दोनों ज़िम्मेदार हैं। वे चाहते हैं कि जो मनुष्य मिलकर इस नई ‘मनुष्य-जाति’ को बनाते हैं, वे इस सृष्टि-कार्य के प्रति अधिक सचेत हों – यह ‘ज्ञान के लिए’ नवीनीकरण है। बात इस तथ्य की है कि मसीह, जो विश्वासियों में वास करता है, उनके लिए सब कुछ है: ‘नया मनुष्य’ मसीह है, जैसे वह अपने व्यक्तित्व की पूरी समृद्धि में विश्वासियों में आकार लेता है, या संक्षेप में: विश्वासियों में मसीह।”⁸⁵

ज्ञान और सोच नए किए जाते हैं। जब कोई मनुष्य विश्वास में आता है, तो पुराने पापी सोच-ढरें और व्यवहार अभी भी उसमें होते हैं। उसके शरीर में ये बने भी रहते हैं। परन्तु इसके विरोध में परमेश्वर के आत्मा का कार्य है, और वह हमारे नियंत्रण-केन्द्र में आरम्भ होता है – उस स्थान पर, जहाँ निर्णय लिए जाते हैं। बाहरी मनुष्य प्रतिदिन के जीवन की घिसाई में नाश होता जाता है। परन्तु परमेश्वर का वचन हमें निश्चय दिलाता है कि हमारा भीतरी मनुष्य (अर्थात् नया मनुष्य) दिन-प्रतिदिन नया होता जाता है (2 कुरिन्थियों 4:16)। संबंधित व्यक्ति नवीनीकरण का अनुभव इस प्रकार करता है कि वह अनन्तता की ओर, अर्थात् स्वयं मसीह की ओर देखता है, जिसकी महिमा हम पर प्रतिबिम्बित होती है (2 कुरिन्थियों 3:18) और हमें सामर्थ्य देती है (कुलुस्सियों 1:11)।

85. G. H. Kramer, *Christus ons leven*, पृ. 117।

13.11 नया मनुष्य: वस्त्र की तरह पहना हुआ

नया मनुष्य एक वस्त्र के समान है, जिसे पहना जाता है। पुराने मनुष्य पर इसकी उलटी प्रक्रिया लागू होती है, जिसे वस्त्र की तरह उतार दिया गया है। “‘पहनने’ और ‘उतारने’ का चित्र वस्त्र बदलने से संबंधित है और पहचान के परिवर्तन के प्रकाश में चरित्र के परिवर्तन की ओर संकेत करता है, क्योंकि संबंधित व्यक्ति ने पुराने जीवन-क्षेत्र (परमेश्वर के बिना) को एक नए जीवन-क्षेत्र (परमेश्वर के पास) से बदल लिया है।”⁸⁶ उतारना और पहनना हमारे उद्धार के मोड़ पर हुआ, जब मसीह ने हमारे जीवन में प्रवेश किया।

पुराना मनुष्य हर दृष्टि से अतीत है – या फिर भी नहीं? वे तीनों बाइबल-स्थल, जिनमें पुराने मनुष्य का उल्लेख है, उसके अन्त का वर्णन करते हैं: या तो “क़ूस पर चढ़ाया गया” के रूप में, या “उतारा गया” के रूप में। सब कुछ एक बार के और पूरे हो चुके कार्य को दर्शाता है। वस्त्र उतारना एक क्षण में होता है, परन्तु नवीनीकरण लगातार होता है। यही संभव बनाता है कि यह नया वस्त्र नया भी बना रहे और घिसे या मैला न हो।

कपड़े ही आदमी की पहचान बनाते हैं। वस्त्र वह है जो किसी मनुष्य में दिखाई देता है। और पौलुस यहाँ यही कहना चाहता है: यह स्पष्ट होना चाहिए कि नया मनुष्य केवल एक चतुर विचार या सिद्धांत नहीं था, बल्कि परमेश्वर की जीवन रचनेवाली और नया करनेवाली शक्ति ने एक सच्ची उत्कृष्ट कृति उत्पन्न की है। इसका प्रमाण यह है कि नया मनुष्य प्रतिदिन के जीवन में दिखाई देता है। वह अब अपने जीवन को अपने छुड़ानेवाले और सृजनहार की ओर लगाता है। वह प्रभु यीशु मसीह को पहन लेता है (रोमियों 13:14)। तो बात यह है कि नया मनुष्य अधिक से अधिक दिखाई दे; मसीह (उसका स्वभाव, उसका प्रेम) पुराने मनुष्य के अब तक के स्वार्थी स्वभाव को हटा दे।

नए मनुष्य का मार्ग परमेश्वर के मार्ग-सूचकों से घिरा है, जो हमें दिखाते हैं कि नए जीवन के कौन से अभिव्यक्ति-रूप हैं और कौन से नहीं। ज़ोर बहुत अधिक जीवन-शैली के रूपान्तरण पर है। जो मनुष्य विश्वास में आता है, वह अपना जीवन एकाएक पुराने से नए में नहीं बदलता। यदि ऐसा होता, तो न नवीनीकरण की आवश्यकता होती, और न ही नए नियम की उन आज्ञाओं की, जो दिखाती हैं कि नए मनुष्य का जीवन कैसा दिखता है।

हमें नए मनुष्य बनना नहीं है – मानो ऐंठन-भरे और दाँत भींचकर किए गए परिश्रमों के द्वारा, जिनका लक्ष्य मसीह-जैसा जीवन हो। नहीं! बात यह है कि हम जीवन में उसे उतारें, जो हम मसीह में पहले से हैं: धर्मी, पवित्र और सच्चे।

नया मनुष्य होने का विशेषाधिकार वैसा जीने के लिए बाध्य भी करता है। हमें वह बनना है जो हम हैं! नए मनुष्य होना और साथ ही नए मनुष्य बनना – यह एक विरोधाभास जैसा लगता है, पर है नहीं। एक है

86. Greg Herrick, *Old Man and New Man in Paul*, 1999, पृ. 71

उद्धार का **निश्चयार्थ** (इंडिकेटिव) – वह, जो हम परमेश्वर के सामने निर्विवाद रूप से हैं। दूसरा है उद्धार का **आज्ञार्थ** (इम्पेरेटिव), जो हमें बुलाता है कि इस होने से निकलकर उसके अनुरूप जिएँ। इन दोनों पक्षों में से किसी को भी दूसरे के विरुद्ध खड़ा नहीं करना चाहिए या संतुलन से बाहर नहीं करना चाहिए। जो स्थिति पर, अर्थात् उद्धार के निश्चयार्थ पर, व्यावहारिक रूप से उसे साकार करने से अधिक जोर देता है, वह बातों का संतुलन बिगाड़ देता है। पवित्रशास्त्र प्रायः एक ही सौँस में दोनों पक्षों की बात करता है, ताकि हमें स्पष्ट करे कि हम उन्हें (प्रायः बहाने या सफ़ाई के रूप में) धर्मवैज्ञानिक कलाबाज़ियों से चीर-फाड़ न करें। नए नियम के लिए उद्धार-स्थिति निश्चय ही उतनी ही महत्वपूर्ण है, जितना प्रतिदिन के जीवन में उसका प्रभाव। इस अन्तिम बात से उद्धार का वह आज्ञार्थ अभिप्रेत है कि हम पूरी लगन से प्रयत्न करें कि वैसे जिएँ जैसा परमेश्वर चाहता है और जैसा उसने संभव भी बनाया है।

13.12 सारांश – एक चित्र

बाइबल की सच्चाइयों के साथ चित्र और तुलनाएँ बहुत सहायक हो सकती हैं। बाइबल स्वयं (सबसे बढ़कर प्रभु यीशु) आत्मिक सच्चाइयों को समझने योग्य बनाने के लिए चित्रों और दृष्टान्तों का प्रयोग करती है। परन्तु चित्रों की अपनी सीमाएँ भी होती हैं। वे कुछ निश्चित पहलुओं को स्पष्ट करना चाहते हैं, परन्तु इसका अर्थ यह भी है कि ऐसे चित्र का हर पहलू उस सच्चाई पर ठीक नहीं बैठता, जिसे वह दर्शाना चाहता है। जो चित्र या तुलना में कहा गया है, वह महत्व रखता है। जो नहीं कहा गया या जिसका उल्लेख नहीं हुआ, वह इसके विपरीत महत्वहीन है।

13.12.1 पुराना पेड़

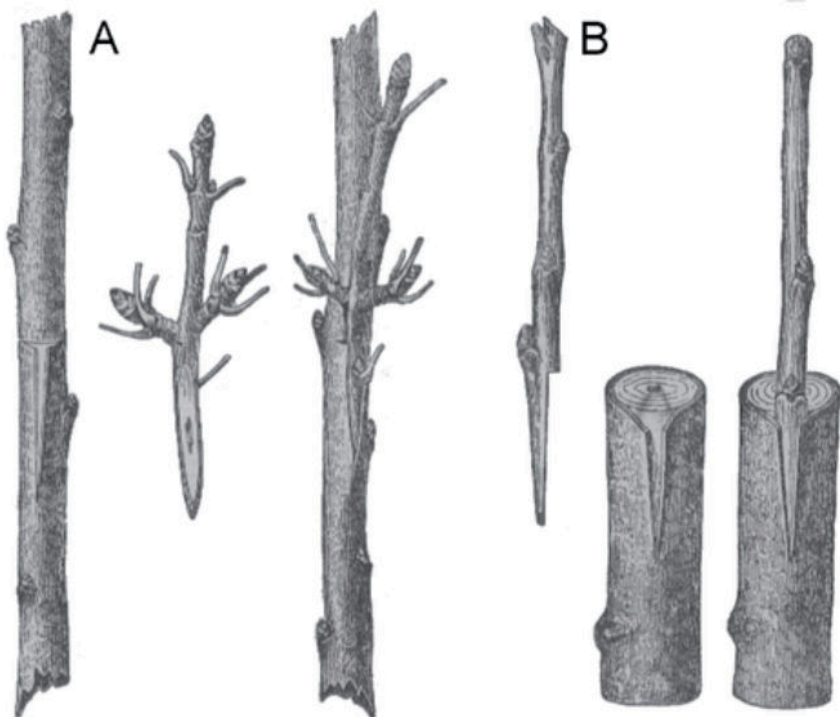
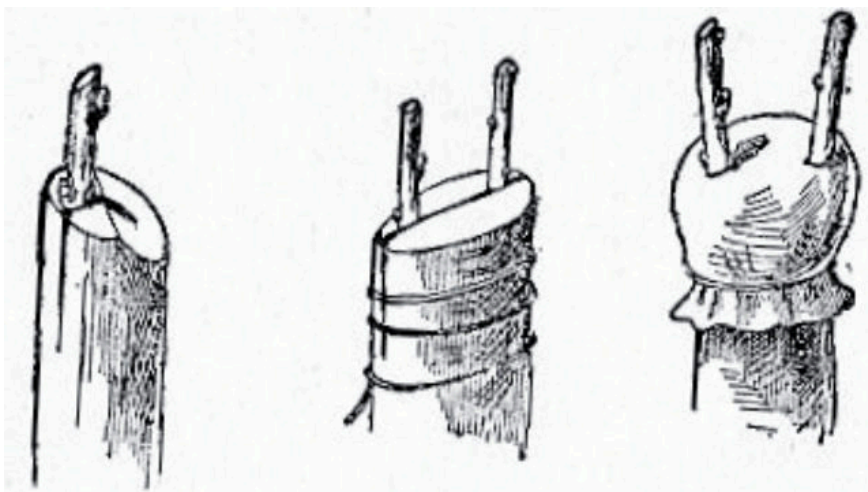
बाइबल कुछ बार मनुष्य की तुलना एक पेड़ से करती है। एक प्रसिद्ध उदाहरण महाराजा नबूकदनेस्सर है। उसकी तुलना एक बड़े और शक्तिशाली पेड़ से की गई है। क्योंकि वह अपनी महानता और शक्ति के कारण घमंडी हो गया, परमेश्वर ने उसे काट डालने का निर्णय लिया। केवल टूँठ और जड़ ही बचे रहने थे: क्योंकि राजा मरा नहीं, बल्कि कुछ समय के लिए उसे पशु का मन मिला, ताकि फिर से राजा बने (दानियेल 4; देखें न्यायियों 9:7-15 भी)। इस प्रकार, चित्र की भाषा में, स्वयं परमेश्वर ने इस पेड़ को कुल्हाड़ी से काट गिराया। यह परमेश्वर के बिना जीनेवाले मनुष्य का, आदम के एक वंशज का चित्र है। यीशु कहता है कि कोई निकम्मा पेड़ नहीं, जो अच्छा फल लाए (लूका 6:43)। दूसरे शब्दों में: जो मनुष्य शरीर में हैं, वे परमेश्वर को प्रसन्न नहीं कर सकते। पुराना मनुष्य एक ऐसा पेड़ है जो अच्छा फल नहीं लाता। यह पूरी मानवजाति पर उतना ही लागू होता है जितना हर व्यक्तिगत मनुष्य पर (भजन संहिता 37:35)। ऐसा निकम्मा पेड़, जहाँ तक उसके फल का प्रश्न है, इसके सिवा और किसी बात के योग्य नहीं कि काटा जाए और आग में डाला जाए (लूका 3:9)। हमारे पुराने मनुष्य के साथ यही हुआ: उसे क्रूस पर दोषी ठहराया गया, और मृत्यु-दंड पूरा किया गया। वह मानो परमेश्वर की पवित्रता के न्याय में जल गया। इसके द्वारा हमारा पुराना जीवन समाप्त कर दिया गया। हमने स्वयं उसे समाप्त नहीं किया, उसने किया। मसीह ही था,

जो हमारे लिए **स्थानापन्न** होकर मरा। यदि हम शाब्दिक रूप से मरे होते, तो जड़ भी साथ ही उखाड़ दी गई होती। जड़ – हमारे चित्र में – व्यक्ति को दर्शाती है। वह उसका प्रतीक है जो मैं मनुष्य के रूप में, परमेश्वर की सृष्टि के रूप में हूँ।

13.12.2 एक नया पेड़

तो परमेश्वर का लक्ष्य क्या है? परमेश्वर चाहता है कि मैं एक ऐसा पेड़ बनूँ, जो जल की धाराओं के किनारे लगाया गया हो। भजन संहिता 1 में धर्मी के विषय में ऐसा ही कहा गया है (तुलना करें भजन संहिता 92:12; यिर्मयाह 17:8)। मुझे एक अच्छा पेड़ बनना है, जो अच्छा फल लाए (मत्ती 7:17), आत्मा का फल (गलातियों 5:22-23)। इसके लिए एक नए पेड़ की आवश्यकता है। उसे लगाया जाना और बढ़ना आवश्यक है। और एक दिन मज़बूत जड़ों और अच्छे फलों वाला एक मज़बूत पेड़ बनने के लिए देखभाल और सबसे बढ़कर जल आवश्यक है। हमारा चित्र एक और पहलू की अनुमति देता है: हमारा नया जन्म परमेश्वर के वचन के अविनाशी बीज के द्वारा हुआ है (1 पतरस 1:23)। यह बीज परमेश्वर का बीज है (1 यूहन्ना 3:9), जो किसी मनुष्य में उसके मन फिराने के बाद (चित्र की भाषा में) अंकुरित होता और बढ़ता है, जब तक कि उससे एक मज़बूत पेड़ न बन जाए। यह बीज स्वयं मसीह है (गलातियों 3:16)। इसके साथ हमें इस तथ्य की समानता मिलती है कि स्वयं मसीह **नया मनुष्य** है, हम में उसका जीवन (कुलुस्सियों 3:4, 11)। नए मनुष्य के विकास की सारी संभावना इस बीज में, चाहे वह कितना भी छोटा हो, पूरी तरह निहित है। इस मनुष्य को अब खिलना, बढ़ना, उन्नति करना, फैलना है। यह एक क्षण में नहीं होता, बल्कि केवल निरन्तर वृद्धि और लगातार नवीनीकरण के साथ होता है। केवल परमेश्वर ही वृद्धि, नवीनीकरण और शक्ति देता है। नया नियम एक दूसरे संदर्भ में एक जैतून के पेड़ की बात करता है (रोमियों 11:16-24), जिसमें एक दूसरी टहनी कलम की जाती है, ताकि वह पुराने पेड़ पर आगे बढ़े। आइए, उस टूँठ की कल्पना करें, जिसकी तुलना हमने अपने व्यक्तित्व से की है। अब इस टूँठ में नई टहनी, अर्थात् वचन का बीज (स्वयं मसीह), कलम की जाती है, ताकि वह बढ़ सके और एक नया पेड़ बन सके। इस प्रक्रिया को विशेषज्ञ “कलम लगाना” (जर्मन: Veredelung, अर्थात् “उत्कृष्ट बनाना”) कहते हैं।

13. नया और पुराना मनुष्य: पुरानी बातें बीत गईं, नई बातें हो गई हैं



13.12.3 पुरानी जड़, जो अब भी जीवित है

पुरानी जड़ (पुराने, पर काटे गए पेड़ का ढूँठ और जड़) अब भी वहाँ है। वह अब भी जीवित है। हमारे चित्र में यह पुराना मनुष्य नहीं, बल्कि हमारा शरीर (यूनानी **sarx**) है – आदम का पुराना, बिगड़ा हुआ और पापी स्वभाव। उसी ने हमारे पुराने जीवन को, अर्थात् पुराने मनुष्य के जीवन को, आकार दिया था। चाहे इन सच्चाइयों का दोहराया जाना थका देनेवाला लगे, फिर भी एक बार और कहा जाए: पुराना मनुष्य शरीर नहीं है। पुराना मनुष्य बल्कि मेरे उस अस्तित्व का प्रतीक है जो परमेश्वर के बिना था, विश्वास में आने से पहले। इसके विपरीत, शरीर पुराने मनुष्य के स्वभाव और सार को दर्शाता है। यह अब भी विद्यमान है। जब तक हम जीवित हैं, यह पुरानी जड़ हम में पाई जाएगी। अब इस जड़ का गुण यह है कि वह फिर से सक्रिय हो जाती है (अय्यूब 14:7-9)। इस ढूँठ से छोटी-छोटी टहनियाँ निकलती हैं – बुरे फल, देह और शरीर के काम और आदतें। जहाँ परमेश्वर नए पेड़ की वृद्धि की चिन्ता करता है, वहीं हमें यह आज्ञा दी गई है कि पृथ्वी पर के अंगों को, अर्थात् पापी शरीर के अंगों को, मार डालें (कुलुस्सियों 3:5; रोमियों 8:13)। यह विश्वास के द्वारा और आत्मा के द्वारा होना चाहिए। हमें इन टहनियों को खरपतवार की तरह निकाल देना है, शाखाओं को काट देना है, या (यदि उनसे फिर से छोटे तने बन गए हों) उन्हें परमेश्वर की शक्ति की कुल्हाड़ी से काट गिराना है। एक ऐसे “माली” का काम, जो खरपतवार की लगातार देखभाल करे, हमारी ज़िम्मेदारी के क्षेत्र में आता है। इस काम में हम अपने आप पर नहीं छोड़े गए हैं: परमेश्वर के पवित्र आत्मा के द्वारा हम जीते और चलते हैं (रोमियों 8:13; गलातियों 5:18)!

13.13 केवल विश्वास के द्वारा

यह केवल परमेश्वर के पुत्र पर विश्वास में और उसके द्वारा होता है, जिसने (जैसा पौलुस कहता है) “मुझ से प्रेम किया और मेरे लिए अपने आप को दे दिया” (गलातियों 2:20)। विश्वास परमेश्वर पर निर्भरता है। इसमें वह रवैया शामिल है, जो सब कुछ मसीह से और अपने आप से कुछ भी नहीं अपेक्षा करता है। उदाहरण के लिए रोमियों 8:13 और कुलुस्सियों 3:5 में वर्णित मारना अन्ततः विश्वास के द्वारा होता है। इसमें पाप को ना कहना शामिल है, जबकि साथ ही मसीह को हाँ कहा जाता है (रोमियों 6:13, 19)। धर्मी (प्रतिदिन) अपने विश्वास के द्वारा जीवित रहता है (रोमियों 1:17)। हम विश्वास के द्वारा परमेश्वर के निकट आते हैं (रोमियों 5:2), हम विश्वास के द्वारा स्थिर रहते हैं (रोमियों 11:20; 2 कुरिन्थियों 1:24)। मैं विश्वास के द्वारा मसीह को अपने हृदय में वास करने देता हूँ (इफिसियों 3:17)। मैं विश्वास के द्वारा दृढ़ हूँ और दृढ़ होता जाता हूँ (1 पतरस 5:9)। यह विश्वास मुझे आज व्यवहार में लाना है। यही कुंजी है। विश्वास कोई भावना नहीं है। विश्वास के लिए वह बात, जो परमेश्वर कहता है, पूर्ण रूप से सत्य और मान्य है: यह केवल मेरे अनन्त उद्धार पर ही नहीं, बल्कि मेरे प्रतिदिन के जीवन पर भी लागू होता है। विश्वास के बिना परमेश्वर को प्रसन्न करना तो असंभव है!

13.13.1 आलसी माली

नीतिवचन 24:30-32 कहता है: “मैं एक आलसी मनुष्य के खेत के पास से और एक नासमझ मनुष्य की दाख की बारी के पास से होकर गया। और देखो, वह पूरी तरह कँटीली झाड़ियों से भर गई थी, उसकी भूमि बिच्छू-पौधों से ढक गई थी और उसकी पत्थर की दीवार गिर गई थी। तब मैंने उसे देखा और उस पर मन लगाकर सोचा; मैंने देखा और शिक्षा पाई।”

अक्सर ठीक कलम की गई उत्तम टहनी (इस नई और उत्तम टहनी को यही कहा जाता है) के नीचे पुराने अंकुर फिर से निकल आते हैं। इन्हें अवश्य काट देना चाहिए, क्योंकि वे नई टहनी का जल और बढ़ने के आगे के दौर में प्रकाश भी छीन लेते हैं।

यदि माली अपने कर्तव्य पूरे नहीं करता, तो समस्या होती है। शरीर (यूनानी *sarx*) की अपनी गति को कम नहीं आँकना चाहिए। यदि शरीर को लगातार, अर्थात् बार-बार, मृत्यु को सौंपने के बदले उसे पोषण दिया जाए और बर्खास्त जाए, तो बहुत से स्थानों पर पुरानी टहनियाँ बढ़ेंगी। इसका नए पेड़ की वृद्धि पर बुरा प्रभाव पड़ता है। उसकी वृद्धि रुक जाती है, जड़ें मसीह में और आगे नहीं बढ़तीं, जिससे पेड़ को अब पोषण नहीं मिलता। ऐसा लगभग लगता है मानो पौलुस के मन में भी यही चित्र था (कुलुस्सियों 2:7)।

एक शारीरिक, स्वार्थी जीवन एक सूखे पेड़ के समान है, जो पुरानी जड़ की बहुत सी टहनियों से घिरा है; ये इतनी ऊँची बढ़ सकती हैं कि कभी का नया पेड़ दिखाई ही न दे। जो जल इस नए पेड़ के लिए ठहराया गया है, वह पुरानी जड़ की बहुत सी टहनियों में बह जाता है। पेड़ बीमार हो सकता है, पूरी-पूरी शाखाएँ सूख सकती हैं, और उसका फल थोड़ा या छोटा रह सकता है।

कुछ समय पहले मैं आश्चर्यचकित हुआ, जब हम सेब इकट्ठे कर रहे थे और तोड़ रहे थे, जिनका हम रस निकलवाते हैं: एक पेड़ पर मुझे दो अलग-अलग किस्मों के सेब मिले। यह कलम लगाने का परिणाम था। पहले मालिक एक ही पेड़ पर सेब की दो किस्में चाहता था। मुझे तुरन्त मसीही जीवन का विचार आया: वहाँ भी दो अलग-अलग प्रकार के फल पाए जाते हैं – वे फल, जिन्हें आत्मा बढ़ाता है, परन्तु शरीर के द्वारा उत्पन्न फल भी।

13.14 नए मनुष्य का भविष्य

अब तक हमने नए मनुष्य को उस संसार के तनाव-भरे क्षेत्र में देखा है, जो मिटता जाता है। उसके भविष्य पर एक छोटी सी दृष्टि भी छूटनी नहीं चाहिए। नए मनुष्य को आनेवाली नई सृष्टि की साँस पहले से छूती है, जैसा प्रकाशितवाक्य 21 में उसका वर्णन है। हम में यह नई सृष्टि आरम्भ हो चुकी है। हम परमेश्वर की नई सृष्टि के एक प्रकार के पहले फल हैं (याकूब 1:18)। हम मसीह में स्वर्गीय स्थानों में (स्वर्गीय क्षेत्र में) पहले ही बैठाए गए हैं (इफिसियों 2:6)। परमेश्वर का वचन हमारी स्थिति का वर्णन ऐसे ही करता है। नए मनुष्यों के रूप में हम नई सृष्टि में जीएँगे, एक दिन एक नई देह के साथ भी, जो तब नई सृष्टि के उसी गुण

के अनुरूप होगी, जैसा अब हमारे **भीतरी मनुष्य** के विषय में है (1 कुरिन्थियों 15:35-57)। नए मनुष्य का भविष्य सौँस रोक देनेवाला है, और उतना ही अत्यधिक महिमामय, जितना स्वयं उसका सृजनहार: जब वह, जो हमारा जीवन है, प्रकट होगा, तब हम भी उसके साथ सारे ब्रह्मांड के सामने महिमा सहित प्रकट किए जाएँगे (कुलुस्सियों 3:1-4)!

परन्तु आइए, उस सामूहिक या साझा पहलू को न भूलें, जो शायद और भी महत्वपूर्ण है। एक नई मानवजाति, जिसका आरम्भ और सिर मसीह है, नए आकाश और नई पृथ्वी की आबादी होगी। मसीह सब कुछ और **सब** में!

नए मनुष्य की उद्धार-वास्तविकता नए नियम की कलीसिया में साकार होती है, जो पिन्तेकुस्त पर ही अस्तित्व में आई। वह (सब विश्वासियों से मिलकर) यही नया मनुष्य होगी, जिसे मसीह ने रचा है और जिसका सिर वह है। यह **एक मनुष्य**, जो देह के सब अंगों से मिलकर बना है, सदा के लिए – युगानुयुग – परमेश्वर की, अर्थात् मसीह की, महिमा, अनुग्रह और प्रेम की स्तुति के लिए होगा।

पुराना मनुष्य अभिलाषाओं के द्वारा नष्ट होता जाता है; आत्मिक मृत्यु के कारण वह दैहिक मृत्यु की ओर बढ़ता है, जो अन्ततः अनन्त मृत्यु तक ले जाती है। वह सुधरता नहीं, वह क्षय के अधीन है और नष्ट हो जाता है। नया मनुष्य अपने सृजनहार के साथ जीवन के संबंध के द्वारा नया होता जाता है, जब तक कि पुनरुत्थान में अनन्त जीवन, अर्थात् सिद्धता, आरम्भ न हो।

13.14.1 भविष्य का जीवन अभी से जीना

नए मनुष्य का भविष्य कोई अमूर्त विषय या हमारे जीवन की वास्तविकता से कटा हुआ विषय नहीं है। यह भविष्य एक ओर हमारी आशा को समेटता है, परन्तु उसमें अभी से वह भी शामिल है जो हमारे जीवन को निर्धारित करता है। इसे ऐसे कहा जा सकता है: हम लक्ष्य की ओर से जीते हैं, यीशु की ओर और उसकी ओर देखते हुए जो उसने रचा है और करेगा। यदि हम में नई सृष्टि का जीवन पहले से धड़कता है, तो इसका इसके सिवा कोई अर्थ नहीं कि हम भविष्य का जीवन अभी से जीते हैं।

पवित्र आत्मा का फल, स्वयं यीशु का अद्वितीय और आदर्श जीवन, उसकी प्रेम की आज़ाएँ और कुल मिलाकर नए नियम की सब आज़ाएँ हमें दिखाती हैं कि नई सृष्टि में जीवन नैतिक दृष्टि से कैसा होगा। परमेश्वर की नई सृष्टि में सब कुछ परमेश्वर के प्रेम से भरा होगा – उसी प्रेम से, जिसे हमें अभी से अपने जीवन में साकार करना है।

हमारी कलीसियाएँ परमेश्वर के नए संसार के अग्रिम मोर्चे और चौकियाँ हैं। यहाँ उन लोगों को, जो परमेश्वर को और मसीह में छुटकारे को नहीं जानते, “नए मनुष्य” से, अर्थात् नई सृष्टि से, संपर्क में आना चाहिए। हम में वह पहचाना जाना चाहिए, जो परमेश्वर शीघ्र ही अपने नए संसार में हर स्थान पर सामान्य और साथ ही अद्भुत रूप से महिमामय बात के रूप में रखेगा।

जब हम इस प्रकार परमेश्वर के नए संसार पर ध्यान करते हैं और इस तथ्य पर विचार करते हैं कि वह हम में आरम्भ हो चुका है, तो हम भविष्य का जीवन न तो विवशता से या दबाव में जीते हैं, न व्यवस्था-संबंधी उद्देश्यों से। नई जीवन-शैली हमारे लिए सामान्य बात बन जानी चाहिए, जैसे वह शीघ्र ही परमेश्वर की अनन्त महिमा में होगी।

तब, आज के विपरीत, कोई शत्रु और रुकावटें नहीं रहेंगी, जो नए जीवन के मार्ग में खड़ी हो सकें। इसलिए आज यीशु जैसा बनना इच्छा के निर्णयों, परिश्रम और लगन से जुड़ा है। परन्तु हम (जैसे, उदाहरण के लिए, एक अविश्वासी मनुष्य, जो अपने चरित्र को नैतिक रूप से सुधारना चाहता है) अपने आप पर निर्भर नहीं हैं, बल्कि परमेश्वर का अनुग्रह और उसका उत्तम आत्मा हमारे पक्ष में है।

13.15 आह्वान

अनुग्रह हमें सिखाता है, हाँ, वह हमारा (पालन-पोषण करके) प्रशिक्षण करता है (तीतुस 2:11-12), ताकि नया मनुष्य सचमुच हमारे प्रतिदिन के जीवन में भी स्थान पाए। व्यवस्था नहीं, बल्कि अनुग्रह हमें शिक्षा देता है, क्योंकि वह हमें सबसे पहले बार-बार उस बात की याद दिलाता है जो हम मसीह में पहले से हैं और जो हमें अभी बनना नहीं है। अनुग्रह हमें मसीह की असीम समृद्धि में रखता है और हमें उससे भर देता है, क्योंकि केवल उसी से एक बदला हुआ जीवन संभव है।

हमने पुराने मनुष्य को उसके पुराने चाल-चलन समेत उतार दिया है। परन्तु इस पुराने मनुष्य की सोच, उसका सार, अर्थात् उसका स्वभाव, तब तक हम में बना रहता है, जब तक हम अपनी देह में हैं। पुरानी जीवन-दिशा के फिर से उभरने के विरोध में हमारी सोच का लगातार नवीनीकरण खड़ा है।

मसीह हम में: यही नए मनुष्य के जीवन की वास्तविकता है। इयन थॉमस (Ian Thomas) ने इसकी तुलना एक दस्ताने से की है, जो एक जीवित हाथ के बिना एक मरी हुई वस्तु है। यही हम हैं – मसीह के बिना और उससे बाहर पूरी तरह असमर्थ। परन्तु जब जीवित हाथ दस्ताने में आता है, तब वह सब कुछ कर सकता है! इसलिए हम यह मानकर चल सकते हैं और विश्वास कर सकते हैं कि उसके द्वारा, जो हमें सामर्थ्य देता है, हम सब कुछ कर सकते हैं!

14. नए जीवन के लिए नया जन्म

अपनी अन्तिम पर्वत-चोटी पर हम इस विषय की शायद सबसे परिचित बात तक पहुँचते हैं। बात नए जन्म की है, एक नए और अनन्त जीवन को पाने की। इसके साथ हम उस बात पर आते हैं जो हम प्रेरित यूहन्ना से सुसमाचार की उस बदल देनेवाली शक्ति के विषय में सीख सकते हैं, जो नई बातें रचती है। हमें पाप की शक्ति से स्वतंत्र किया गया, हमें पवित्र आत्मा दिया गया, हमें नए मनुष्य बनाया गया। यह विशेष रूप से पौलुस का विषय था। परन्तु हमारा नए सिरे से जन्म लेना भी आवश्यक था, क्योंकि पाप के कारण हमारा पुराना जीवन बेकार सिद्ध हुआ और उसके साथ हमारे पास कोई वास्तविक जीवन नहीं था, अर्थात् हम आत्मिक रूप से मरे हुए थे।

परन्तु पहले हम एक ऐसे शब्द को देखें, जिसका प्रयोग हम कुछ बार कर चुके हैं: “नया और पुराना स्वभाव”। चाहे ये शब्द बाइबल में इसी रूप में न मिलें, फिर भी वह बात, जिसके लिए वे खड़े हैं, उसमें पाई जाती है। जिसे हम “पुराने स्वभाव” (अर्थात् शरीर) के विपरीत “नया स्वभाव” कहते हैं, वह “ईश्वरीय स्वभाव” के सिवा और कुछ नहीं। पतरस अपनी दूसरी पत्रा के अध्याय 1:4 में लिखता है:

“... ताकि इनके (प्रतिज्ञाओं के) द्वारा तुम ईश्वरीय स्वभाव के सहभागी हो जाओ।”

जिस संदर्भ में शब्द जुड़े हैं, उसे ध्यान में रखना सदा सहायक होता है। इस स्थान पर वह इस प्रकार है:

मसीही को परमेश्वर से सब कुछ मिला है, ताकि वह उसके लिए जी सके। सबसे पहले स्वयं जीवन। इसे नए मनुष्य का जीवन कहा जा सकता है। इस ईश्वरीय जीवन को प्रतिदिन के जीवन में साकार करने का अर्थ है “भक्ति” (सही श्रद्धा; परमेश्वर के अनुरूप जीवन), अर्थात् परमेश्वर की महिमा के लिए जीवन। परमेश्वर ने अपने वचन के द्वारा हमें अपनी निज महिमा दिखाई है, जिसने हमें पकड़ लिया और हम में वह पूरी दृढ़ता उत्पन्न की कि हम स्वयं उसे अपने जीवन और अपनी जीवन-यात्रा का लक्ष्य मानकर आँखों के सामने रखें। यह यात्रा संसार से होकर जाती है – केवल परमेश्वर की सृष्टि से होकर ही नहीं, बल्कि मनुष्यों के द्वारा बदले और बिगाड़े गए संसार से होकर भी, अर्थात् उस समाज से होकर, जिसमें हम रहते हैं। ईश्वरीय स्वभाव के पानेवालों और सहभागियों के रूप में हम संसार की सड़ाहट से बच निकले हैं। ईश्वरीय स्वभाव के साथ अब हम उस संसार से भिन्न जीने के योग्य हैं, जो अभिलाषा से विह्वित है। यहाँ यह भी स्पष्ट हो जाता है कि यह ईश्वरीय स्वभाव क्या है और क्या नहीं। इसका संबंध परमेश्वर की बाहरी महिमा से नहीं, बल्कि परमेश्वर के नैतिक स्वरूप से है। बात आत्मिक, अलौकिक जीवन की है, जो अपने में परमेश्वर के नैतिक और आचार-संबंधी लक्षण रखता है, जिन्हें पतरस यहाँ खोए हुए संसार के आचरण के सामने रखता है।

यह स्वभाव ठोस रूप से एक गतिशील प्रक्रिया में प्रकट होता है, जिसके दौरान नया जन्म पाया हुआ व्यक्ति पूरा यत्न करता है और आत्मिक फल लाता है। इस प्रकार वह अपनी ईश्वरीय बुलाहट और चुनाव

को दृढ़ करता है। इस प्रकार वह अपने जीवन में अपने ऊपर परमेश्वर के उद्धार-कार्य की पुष्टि करता है। “ईश्वरीय स्वभाव के सहभागी हो जाना” का अर्थ केवल कुछ रखना ही नहीं, बल्कि साथ ही कुछ बनना भी है: बात परमेश्वर के समान, और इस प्रकार उसकी सी चाल चलनेवाले बनने की है।

इस बात का प्रमाण कि परमेश्वर का स्वभाव, अर्थात् उसका सार, सचमुच किसी मनुष्य में प्रवेश कर सकता है और किसी मनुष्य के जीवन को आकार दे सकता है, स्वयं यीशु है। उसमें ईश्वरीय जीवन है, वह स्वयं अनन्त जीवन है। वह मनुष्य बना, ताकि यह जीवन हम मनुष्यों के लिए पहुँच में और अनुभव योग्य हो जाए। इसलिए यूहन्ना कह सकता है: “वह बात, जो उसमें और तुम में सच्ची है” (1 यूहन्ना 2:8)।

14.1 आखिर स्वभाव क्या है?

स्वभाव से वह सार या प्राकृतिक बनावट अभिप्रेत है, जो किसी वस्तु को आरम्भ से, या किसी जीव को जन्म से, चिह्नित करती है। पशु का स्वभाव मनुष्य के स्वभाव से भिन्न है (याकूब 3:6-7)। हमारे संदर्भ में स्वभाव में वह शामिल है जो किसी ने पाया है – उसके विपरीत, जो उसने स्वयं उत्पन्न किया है। स्वभाव शब्द (यूनानी *physis*) का अर्थ है “बन चुका होना”⁸⁷; क्रिया का अर्थ है उत्पन्न करना, विकसित करना, अंकुरित होना और बढ़ना (विशेषकर पौधों के विषय में); संज्ञा का अर्थ उत्पत्ति और जन्म भी है।

हम मनुष्य स्वभाव ही से, अर्थात् जन्म से और अपने सार और स्वभाव के अनुसार, क्रोध की सन्तान हैं (इफिसियों 2:3; गलातियों 2:15)। प्रकृति में यह नियम लागू होता है कि हर जाति अपनी ही सन्तान उत्पन्न करती है। मनुष्य पर भी यही लागू होता है: यह देह पर, अर्थात् बाहरी मनुष्य पर, उतना ही लागू होता है जितना उसके हृदय पर, अर्थात् भीतरी मनुष्य पर। मनुष्य आज 21वीं शताब्दी में भी आदम (पहले रचे गए मनुष्य) के सार का प्रतिरूप है, परन्तु उसका भी, जो आदम अपने पतन के द्वारा बन गया। हम याकूब के द्वारा बताए गए मनुष्य के स्वभाव (अर्थात् जो हम परमेश्वर की सृष्टि के रूप में उसके स्वरूप में बने हैं) और उस पापी स्वभाव के बीच अन्तर करते हैं, जो हमें (पतन के बाद) आदम से विरासत में मिला है। दूसरे शब्दों में: “हमें मनुष्य के स्वभाव और पतित मनुष्यों के रूप में हमारे स्वभाव के बीच अन्तर करना चाहिए”⁸⁸ हम मनुष्य हैं और सदा रहेंगे – नए जन्म के द्वारा आत्मा और प्राण के विषय में हम चाहे जो भी परिवर्तन अनुभव करें, और उस क्षण हमारी देह की चाहे जो भी परिवर्तन प्रतीक्षा करें, जब प्रभु हमें अपने पास बुलाने आएगा। हम उस मूलभूत पहचान को, जिसके साथ परमेश्वर ने हमें पहली बार (जन्म के द्वारा) रचा, कभी नहीं खोएँगे। हम वही व्यक्ति हैं और रहेंगे – वही व्यक्ति-विशेष। इसलिए हमें ‘हमारा मानवीय स्वभाव’, ‘हमारा पतित स्वभाव’, ‘हमारा नया स्वभाव’ जैसे शब्दों के बीच अन्तर करना चाहिए। पतन ने हमारे मनुष्य होने (के स्वभाव) को मिटाया नहीं; दूसरी ओर हमारा नया जन्म हमारे मनुष्य होने को मिटाता नहीं। जो मनुष्य

87. Kittel, *Theologisches Wörterbuch zum Neuen Testament* (यूनानी *phyein*)।

88. इस अन्तर को यीशु के व्यक्तित्व के उदाहरण से बहुत अच्छी तरह स्पष्ट किया जा सकता है: उसने अपने देहधारण (इन्कार्नेशन) में मानवीय स्वभाव धारण किया, परन्तु पुराना और इसलिए पापी स्वभाव नहीं।

होने के लिए मूलभूत है, उसे हम कभी नहीं खोएँगे, और हमारी व्यक्तिगतता कभी नहीं बदलेगी।”⁸⁹

आदम का पतित स्वभाव उस मानवीय वास्तविकता की रूपरेखा है, जो अब मनुष्य की आत्मा और परमेश्वर से उसके संबंध के द्वारा निर्धारित नहीं होती (पशु के विपरीत, जिसके पास आत्मा नहीं है), बल्कि प्राण और देह के द्वारा। मनुष्य की आत्मा में उसकी परमेश्वर-चेतना और एक सृजनहार के अस्तित्व को पहचानने की उसकी मूलभूत क्षमता बसती है, और साथ ही उस पर विश्वास करने, उससे प्रार्थना करने, उसे खोजने और उसका आदर करने की उसकी क्षमता भी। परन्तु पाप के कारण इस कार्य को भारी हानि पहुँची है। आत्मा मिटाई नहीं गई, परन्तु उसका कार्य अब जीवित परमेश्वर की ओर केन्द्रित नहीं है। इसका परिणाम पौलुस ऐसे बताता है: “स्वाभाविक (यूनानी *psychikos*, वास्तव में प्राणिक) मनुष्य ... परमेश्वर के आत्मा की बातें ग्रहण नहीं करता” (1 कुरिन्थियों 2:14)। पतन ने मानवीय वास्तविकता के सब पहलुओं को प्रभावित किया है। “स्नेह, श्रद्धा और निर्भरता का वह संबंध (सृजनहार के साथ), जो उसे परमेश्वर के निकट रखता था, टूट गया है; वह उस घर के समान है जिसकी छत ढहकर भूमि पर गिर पड़ी है। उस सबसे निचले पहलू के नाम पर, जिस तक आत्मा और प्राण गिर गए हैं, वह ‘शरीर’ है। इस प्रकार ‘शरीर’ उसके पुराने, अर्थात् पतित स्वभाव का पवित्रशास्त्र-सम्मत नाम है।”⁹⁰

14.2 परमेश्वर के स्वभाव के सहभागी

पुराने स्वभाव के साथ हम उस संसार के थे, जहाँ मसीह नहीं, बल्कि शैतान राज्य करता है। परन्तु नया जीवन पाने के साथ हम संसार की सड़ाहट और उसकी अशुद्धताओं से बच निकले हैं (2 पतरस 1:4; 2:18, 20)। देह के साथ हम अभी भी संसार में हैं। तो हम एक ही समय में दो संसारों में जीते हैं (इफिसियों 2:6; कुलुस्सियों 2:20; 3:1-5)। ईश्वरीय जीवन के साथ हम परमेश्वर के नए संसार के हैं, उसकी नई सृष्टि के, जो मसीह में और मसीह के द्वारा रची गई है।

हमारा अपने आप से चलाया गया जीवन समाप्त हो गया है; हमारी “मैं-कंपनी” (जर्मन: Ich-AG, एक-व्यक्ति का व्यवसाय) दिवालिया हो गई है; हमारे जीवन का, अर्थात् हमारी “मैं-दुनिया” का उद्यम डूब गया है। दिवालियापन की कार्यवाही गुलगुता पर निपटाई गई। कर्ज़ का भुगतान मसीह ने किया। परन्तु अब हम परमेश्वर के जीवन में साझेदार हैं, अब हमारे पास “सुरक्षित शेयर” हैं, हम “हिस्सेदार” हैं, क्योंकि परमेश्वर के जीवन में हमारा भाग है। इन “शेयरों” के साथ एक सच्चा नया आरम्भ होता है, क्योंकि स्वयं परमेश्वर उनका कर्ता है।

14.3 अनन्त जीवन मसीह का जीवन है

हमें शाब्दिक रूप से परमेश्वर के जीवन में भाग मिला है, उसके अनन्त जीवन में भाग। यह अन्ततः इस तथ्य के सिवा और कुछ नहीं कि स्वयं मसीह एक व्यक्ति के रूप में हमारा नया जीवन है (इससे केवल उसी बात

89. F. W. Grant, *The two Natures*, पृ. 5।

90. वही, पृ. 7।

का एक दूसरा पहलू व्यक्त होता है)। जैसे वह स्वयं वह नया मनुष्य है, जिसके रूप में हम रचे गए, वैसे ही वह हमारे नए जीवन का साकार रूप है।

यह तथ्य कि हमारे पास ईश्वरीय जीवन है, हमें देवताओं की स्थिति तक नहीं उठाता। उसी प्रकार जब मसीह हमारा जीवन बनता है, तो हम मसीह नहीं बन जाते। हम सृष्टि बने रहते हैं, परमेश्वर के स्वरूप में बने मनुष्य, जो इस जीवन के कारण अब फिर से परमेश्वर के साथ संगति में हो सकते हैं। हमारे पास जीवन “मसीह में” है, जो उसका कर्ता है और जिस पर हम निर्भर हैं। यह जीवन हमारे पास उससे अलग होकर नहीं है।

14.4 हम ईश्वरीय जीवन के सहभागी कैसे बनते हैं?

स्वभाव शब्द का संबंध जन्म और वृद्धि से है और हमारा ध्यान उस बात की ओर खींचता है, जिसे यीशु ने शास्त्री नीकुदेमुस को समझाया: **नया जन्म**।

मूल रूप से बात नए जन्म की है, जिसके द्वारा हम ईश्वरीय स्वभाव के सहभागी बनते हैं। **नया जन्म** एक बाइबल-आधारित शब्द है, जिसका सुदूर पूर्व के धर्म से, “बनने और मिटने के अनन्त चक्र” से (जैसे, उदाहरण के लिए, बौद्ध धर्म में), या किसी भी प्रकार के विश्व-दृष्टिकोण से कोई संबंध नहीं है। नए नियम में कुछ लेखक नए जन्म की बात करते हैं, परन्तु सबसे विस्तार से प्रेरित यूहन्ना उसका वर्णन करता है। जहाँ आदम से मसीह की ओर हमारे पार होने के विभिन्न पहलू हैं, वहाँ नए जन्म के पहलू का वर्णन विशेष रूप से यूहन्ना करता है। नया जन्म एक नया, दूसरा जीवन रचता है। यह उस जीवन से भिन्न है, जो हमें स्वभाव से (आदम से) विरासत में मिला है।

नए नियम के सब लेखकों ने इस विषय पर अपना योगदान दिया है कि नया जीवन कैसे मिलता है और वह प्रतिदिन के जीवन में कैसे प्रकट होता है। सब में यह बात साझा है कि मसीही होने का अर्थ मनुष्य का ऐसा परिवर्तन है, जिसे मनुष्य स्वयं नहीं लाता, बल्कि जो ऊपर से, स्वयं परमेश्वर से आता है। इसके साथ हम अपने विषय के ठीक बीच में पहुँच जाते हैं। “ऊपर से” ठीक वही शब्द है, जिसका प्रयोग यीशु नए जन्म के संबंध में करता है।

14.5 नया जन्म – परमेश्वर से जन्मे

नीकुदेमुस यीशु से धर्मवैज्ञानिक प्रश्नों पर बात करना चाहता था। परन्तु प्रभु यीशु के पास इसके लिए समय नहीं था। उसके लिए नए जन्म की आवश्यकता अधिक महत्वपूर्ण थी। इसके साथ प्रभु यीशु एक वाक्य में कहता है कि जो मनुष्य अपने जन्म के कारण (स्वभाव से) है, वह परमेश्वर का राज्य देख नहीं सकता, उसमें प्रवेश पाने की तो बात ही क्या (यूहन्ना 3:1-36)। नए जन्म की आवश्यकता उसमें कुछ भी अच्छा नहीं छोड़ती, जो हम स्वभाव से हैं। यह इस्राएल के शिक्षक नीकुदेमुस पर भी लागू होता है। यीशु उससे कहता है कि यह जन्म मानवीय सन्तानोत्पत्ति से नहीं, बल्कि “जल और आत्मा से” होता है। बात प्राकृतिक वंश-वृद्धि

की नहीं, बल्कि ऊपर से, परमेश्वर की ओर से होनेवाले कार्य की है। परमेश्वर की सन्तान मनुष्य की इच्छा से नहीं, बल्कि परमेश्वर से जन्म लेती है (यूहन्ना 1:13)। परमेश्वर की सन्तान केवल नए जन्म के द्वारा बना जाता है! मनुष्य सैकड़ों बार किसी दैहिक पिता से उत्पन्न होकर अपनी माँ से जन्म ले सकता, परिणाम सदा वही होता: जो शरीर से जन्मा है, वह शरीर है। तो यदि मनुष्य को नए सिरे से जन्म लेना है, तो उसका स्रोत बिल्कुल कहीं और खोजना होगा। परन्तु यह अद्भुत जन्म कैसे होता है? यह ठोस रूप से जल और आत्मा से होता है, जैसा प्रभु यीशु कहता है (यूहन्ना 3:5)।

14.5.1 जल से जन्मे

इसमें बात न तो किसी शाब्दिक जन्म की है, न उन उपकरणों की, जो जन्म के समय प्रयोग में आते हैं। इसलिए जल का कोई लाक्षणिक अर्थ होना चाहिए। जल किस बात का प्रतीक है? जल परमेश्वर के वचन का प्रतीक है, जैसा पौलुस इफिसियों को लिखता है: “... वचन के द्वारा जल के स्नान से” (5:26)। परमेश्वर का वचन नए जन्म में एक ठोस उपकरण है:

“उसने अपनी ही इच्छा से हमें सत्य के वचन के द्वारा उत्पन्न किया।”

याकूब 1:18

“... क्योंकि तुमने नाशवान नहीं पर अविनाशी बीज से, परमेश्वर के जीवते और सदा ठहरनेवाले वचन के द्वारा नया जन्म पाया है।” (देखें 1:3 भी)

1 पतरस 1:23

“तुम तो उस वचन के कारण, जो मैंने तुम से कहा है, शुद्ध हो।”

यूहन्ना 15:3

जल परमेश्वर का वचन और उसकी शुद्ध करनेवाली शक्ति है। परमेश्वर के आत्मा के द्वारा वह जीवित होता है और पापी पर प्रभाव डालता है। प्रचार किया गया, गवाही में बताया गया या पढ़ा गया परमेश्वर का वचन पाप को प्रकट करता है और मन फिराव और विश्वास तक ले जाता है। विश्वास से यीशु मसीह को ग्रहण करना, अर्थात् स्वीकार करना, नया जन्म उत्पन्न करता है (यूहन्ना 1:12)। विश्वास परमेश्वर के वचन के प्रचार का परिणाम है (रोमियों 10:17)। वचन परमेश्वर के बीज के रूप में नया जीवन उत्पन्न करता है।

वचन, वह अविनाशी बीज, कम से कम दो बातें करता है: वह एक ऐसा जीवन उत्पन्न करता है, जो स्वयं वचन की तरह अविनाशी (अर्थात् अनन्त) है। और वह एक ऐसा जीवन उत्पन्न करता है, जिसमें ठीक वही लक्षण होते हैं, जो परमेश्वर के वचन में हैं। परमेश्वर का वचन नए जीवन का DNA है। बीज में यह सारी जानकारी है कि पौधा या उत्पन्न किया गया जीव कैसा दिखेगा। इस प्रकार परमेश्वर का वचन नए जीवन का नक्शा, उसका “पूरा आनुवंशिक कोड” है। यह वचन, जिसे हम पढ़ सकते हैं, दिखाता है कि यह जीवन

कैसे साकार होता और प्रकट होता है। इसी अर्थ में याकूब कहता है कि हम सत्य के वचन के द्वारा उत्पन्न हुए हैं, और यह वचन साथ ही वह बीज है जो हम में रोपा गया है, ताकि वह बढ़ सके (याकूब 1:18, 21)। बीज का स्वभाव जीवन का रूप निर्धारित करता है। ईश्वरीय स्वभाव अपने आप में सिद्ध, अर्थात् पूर्ण है (यही संबंधित बीज पर भी लागू होता है), परन्तु हम में वह आकार ले सकता है और उसे आकार लेना और बढ़ना चाहिए।

दूसरे उपकरण पर आने से पहले, पिछले विचारों के बाद यह संकेत पर्याप्त हो कि यहाँ जल के बपतिस्मे की बात नहीं हो रही है। जल के बपतिस्मे का जल कोई नया मनुष्य उत्पन्न नहीं करता और हमें परमेश्वर की सन्तान नहीं बनाता। बल्कि जल का बपतिस्मा हमें **बाहरी रूप से** (हमारे अंगीकार में) मसीह से जोड़ता है।

14.5.2 आत्मा से जन्मे

जिसका नया जन्म होता है, वह मनुष्य की आत्मा नहीं है। न ही वह नया जन्म उत्पन्न करती है। बल्कि परमेश्वर का पवित्र आत्मा है, जिसके द्वारा नया जन्म आरम्भ और पूरा किया जाता है।

जो आत्मा से जन्मा है, वह आत्मा है। यह सच है कि नए जन्म के वरदान में बात दैहिक या जैविक अर्थ में नए जीवन की नहीं है। यह छुटकारा न पाए हुए मनुष्य के प्राकृतिक अस्तित्व के विपरीत एक आत्मिक जीवन है। परन्तु यह पवित्र आत्मा, परमेश्वर के आत्मा, से भी मेल खाता है, क्योंकि यह ईश्वरीय जीवन है। नया जीवन पवित्र आत्मा के स्वभाव के अनुरूप है; हम तो ईश्वरीय स्वभाव (ईश्वरीय जीवन) के सहभागी बन गए हैं।

नीकुदेमुस अपनी विद्वत्ता के बावजूद उलझन में पड़ जाता है। वह पुराने नियम से जान सकता था कि “जल और आत्मा” क्या करते हैं, जब दोनों परमेश्वर के कार्य के द्वारा मनुष्य पर प्रभाव डालते हैं!

14.5.3 यहजेकेल की भविष्यद्वानी: नए हृदय और नई आत्मा

यहजेकेल ही था, जिसने शाब्दिक अर्थ में **नए जन्म** की बात नहीं की, परन्तु निश्चय ही उसी प्रक्रिया की ओर संकेत किया, जिसमें जल और आत्मा का प्रयोग होगा। परमेश्वर ये काम करेगा (यहजेकेल 11:19; 36:25-27):

- इस्राएलियों पर शुद्ध जल छिड़केगा, ताकि उन्हें शुद्ध करे
- उन्हें एक नया हृदय और एक नई आत्मा देगा
- उन्हें पत्थर के हृदय के बदले मांस का हृदय देगा
- परमेश्वर का आत्मा उनके भीतर दिया जाएगा, ताकि वे परमेश्वर की विधियों पर चलें।

यहाँ नए जन्म में ईश्वरीय उद्धार के महत्वपूर्ण भागों का उल्लेख है। पहले शुद्धिकरण है, जो अतीत को समाप्त करता है। पुराने जीवन के स्थान पर, जिसके लिए शुद्धिकरण आवश्यक था, अब एक नया हृदय

और एक नई आत्मा आते हैं।

विशेष रूप से “हृदय” अभिव्यक्ति और “आत्मा” शब्द (“मनुष्य की आत्मा” के अर्थ में) दोनों संबंधित व्यक्ति के अन्तरतम को दर्शाते हैं (नीतिवचन 4:23)। बात मानव व्यक्तित्व के उस केन्द्र की है, जिसे पूरी तरह रूपान्तरित किया जाना आवश्यक है। इस रूपान्तरण से मनुष्य इच्छाहीन नहीं हो जाता, बल्कि इसके द्वारा वह परमेश्वर की इच्छा पूरी करने के योग्य बनता है। पत्थर का हृदय कठोर हृदय है – एक मरा हुआ हृदय, जो परमेश्वर की ओर जी नहीं सकता और जीना नहीं चाहता। जब मनुष्य की इच्छा नई की जाती है, तो उसे परमेश्वर की इच्छा को पूरा भी कर सकने के लिए शक्ति चाहिए। उसे परमेश्वर का आत्मा मिलता है, जिसके द्वारा वह सचमुच परमेश्वर की आज्ञाओं के अनुसार जीने के योग्य बनता है।

यहाँ भी स्पष्ट होता है कि मनुष्य भीतर से बदलता है, न कि उन आज्ञाओं के द्वारा जो उस पर बाहर से लादी जाती हैं और केवल बाहरी व्यवहार-परिवर्तन तक ले जाती हैं। मनुष्य कठोर अनुशासन से अपना व्यवहार बदल सकते हैं, परन्तु मसीही का व्यवहार इसलिए भिन्न होता है कि उसे एक नया हृदय और परमेश्वर का आत्मा मिला है। नई आज्ञाकारिता उसके लिए हृदय की बात है। इसमें अनुशासन भी महत्वपूर्ण है, परन्तु निर्णायक नहीं।

जो आत्मा से जन्मा है, वह आत्मा है! इस प्रकार यहजेकल भी उस “नई आत्मा” के बीच, जो नए जीवन के अनुरूप है, और पवित्र आत्मा के बीच, जो एक व्यक्ति के रूप में नया जन्म पाए हुए में वास करता है, अन्तर करता है। चाहे यीशु नीकुदेमुस से सीधे पवित्र आत्मा के वरदान की बात नहीं करता, फिर भी वह यहाँ सम्मिलित है। यूहन्ना कुछ बार आत्मा का उल्लेख हमारी सम्पत्ति के रूप में करता है (यूहन्ना 7:39; 14:17, 26; 15:26; 16:13)।

पौलुस यहजेकल के शब्दों को उठाता है और समझाता है कि वे हमारे लिए भी मान्य हैं: परमेश्वर का आत्मा हमारे हृदयों पर लिखता है, जो व्यवस्था की पटियाओं के विपरीत पत्थर के नहीं, बल्कि मांस के हैं। यह मानकर चलता है कि हमारे हृदय भी पूरी तरह रूपान्तरित किए गए हैं। हमारे हृदय पर परमेश्वर का यह “कार्य” एक बार फिर दिखाता है कि परमेश्वर हमें अधिक से अधिक अपने पुत्र के स्वरूप में बदलने के लिए क्या करता है। हमारे हृदयों पर उसके लिखने का एक लक्ष्य है: हमें नैतिक दृष्टि से परमेश्वर के सिंहासन पर महिमा पाए हुए मसीह के उसी स्वरूप में बदलना है – और वह भी आत्मा के द्वारा (2 कुरिन्थियों 3:3, 18)।

14.6 मृत्यु से पार होकर जीवन में बचाए गए: जीवित किए गए

नया जन्म इसलिए आवश्यक नहीं कि हमारे पास जीवन नहीं है, बल्कि इसलिए कि हमारे पास सही जीवन नहीं है। जो शरीर से जन्मा है, वह शरीर है और इसलिए व्यर्थ है। हमें आत्मा से जन्म लेना आवश्यक है। केवल इसी प्रकार हम परमेश्वर के राज्य में और स्वर्गीय बातों के अधिकार में आते हैं।

परन्तु तर्क से जन्म का परिणाम वह जीवन भी है, जो पहले नहीं था। इसलिए प्रभु यीशु कहता है कि वह अभी से मनुष्यों को मृत्यु से जीवन में ले आएगा। यहाँ और आज (केवल भविष्य में नहीं) वह यह करेगा: “वह समय आता है, और अब है, जिसमें मृतक परमेश्वर के पुत्र का शब्द सुनेंगे, और जो सुनेंगे वे जीएँगे” (यूहन्ना 5:25)। जैसे परमेश्वर का वचन नए जन्म का बीज है, वैसे ही यहाँ वचन (पुत्र का शब्द) है, जो जीवित करता है। मनुष्य स्वभाव से केवल पापी ही नहीं है (अर्थात् शरीर के द्वारा शासित, किसी काम का न रहनेवाला प्राणी)। वह एक मरा हुआ भी है, जिसे जीवन चाहिए। वह स्वभाव से अपने पापों में मरा हुआ है (इफिसियों 2:1; कुलुस्सियों 2:13 आदि)। मृत्यु का अर्थ सदा उन बातों का अलग होना है, जो स्वभाव से एक साथ होती हैं। इस प्रकार मनुष्य जैविक और मानसिक दृष्टि से तो पूरी तरह जीवित है, परन्तु **आत्मिक अर्थ में**, जहाँ तक परमेश्वर से उसके संबंध की बात है, मरा हुआ है। यह संबंध, उस सब के साथ जो ऐसे संबंध का भाग है, विद्यमान नहीं है। **आत्मिक** रूप से जिलाए जाने (या जीवित किए जाने, जो अन्ततः नए जन्म का एक दूसरा पहलू है) के द्वारा आत्मिक रूप से मरा हुआ पापी अनन्त जीवन पाता है। परमेश्वर के जीवन से उसका अलगाव (कुलुस्सियों 1:21; तुलना करें इफिसियों 4:18) इसके द्वारा मिट जाता है। इस जीवन के द्वारा परमेश्वर से संबंध केवल पुनर्स्थापित होकर आदम के पतन से पहले के परमेश्वर-संबंध के स्तर पर ही नहीं लाया जाता। बल्कि इसके द्वारा एक ऐसा संबंध जुड़ता है, जो हमें परमेश्वर की सन्तान और पुत्र बनाता है। हम मृत्यु से पार होकर जीवन में आ गए हैं! “आत्मा तो जीवनदायक है, शरीर से कुछ लाभ नहीं। जो बातें मैंने तुम से कही हैं, वे आत्मा हैं और जीवन भी हैं” (यूहन्ना 6:63), प्रभु यीशु कहता है।

14.7 बनने और बढ़ने का रहस्य

नए जन्म की प्रक्रिया के विषय में सामान्य रूप से कुछ बातें कह देना सहायक है। बाइबल यह नहीं बताती कि जब परमेश्वर मनुष्य को अनन्त जीवन देता है, तो वह मनुष्य के किस भाग में होता है। कुछ लोग कहते हैं कि वह हमारी आत्मा में है, दूसरे प्राण पर ज़ोर देते हैं। मनुष्य में होनेवाली उद्धार की प्रक्रियाओं को मानवीय अस्तित्व के अलग-अलग पहलुओं से जोड़ना लुभावना है। परन्तु बाइबल मानव-विज्ञान की पुस्तक नहीं है – न पुराने मनुष्य की, न नए मनुष्य की।⁹¹ नए जन्म में हमारा सामना एक रहस्य से है, जो एक भाग में प्रकट किया गया है, परन्तु एक निश्चित भाग में छिपा भी है, जिसका कारण मानव स्वभाव की जटिलता है। यह एक बार फिर हमारे ज्ञान की सीमाएँ दिखाता है, परन्तु इस तथ्य से कुछ नहीं घटाता कि हमारे पास सचमुच परमेश्वर का अनन्त (आत्मिक) जीवन हमारे अपने जीवन के रूप में है। प्रभु यीशु स्वयं आत्मा के द्वारा किए गए नए जन्म की प्रक्रिया की तुलना हवा से करता है: उसका शब्द तो सुना जा सकता है (अर्थात् जिस मनुष्य पर आत्मा कार्य करता है, उसमें उसके प्रभाव देखे जा सकते हैं)। परन्तु यह नहीं देखा जा सकता कि वह कहाँ से आती है और कहाँ को जाती है (यूहन्ना 3:8)। नया जन्म हमारे लिए एक छिपी हुई प्रक्रिया है, जिसे न तो हमारे ज्ञान के द्वारा और न तकनीक के द्वारा दृश्य बनाया जा सकता है।

91. Hans-Jörg Ronsdorf, **फिर भी मृतक जीवित हैं** (Und die Toten leben doch), अध्याय 3 (बाइबल में मनुष्य का चित्र), पृ. 147 आगे।

नए जीवन की वृद्धि की प्रक्रिया का भी विस्तार से वर्णन नहीं किया गया, बल्कि उसे दी हुई बात मानकर चला गया है। नए नियम के लगभग सब लेखक इस बात का निश्चय दिलाते हैं कि विश्वास में वृद्धि और (निरन्तर) नवीनीकरण, गति, और साथ ही उन्नति और बढ़ती परिपक्वता होती है (यूहन्ना 3:30; इफिसियों 4:13; 1 पतरस 2:2; 2 पतरस 3:18; कुलुस्सियों 1:10; 3:10; 1 यूहन्ना 2:12-17; गलातियों 4:19; रोमियों 12:2; 2 कुरिन्थियों 3:18; 4:16; इफिसियों 4:23)। इसका वर्णन कम या अधिक सिद्धांत के रूप में किया गया है। इसमें बात सदा एक ऐसी प्रक्रिया की है, जिसे एक ओर स्वयं परमेश्वर आरम्भ करता और आगे बढ़ाता है, परन्तु जिसे दूसरी ओर केवल हमारे योगदान, हमारी सहमति और निर्णय, और मसीह की आज्ञाओं के पालन में हमारे अनुशासन और दृढ़ता के द्वारा ही साकार किया जा सकता है (लूका 8:15; 2 पतरस 1:8; याकूब 3:18; तीतुस 3:14)। रूपान्तरण की प्रक्रिया सदा बताए गए सिद्धांतों के अनुसार होती है। परन्तु करोड़ों मसीहियों में वह (इन मसीहियों के स्वभावगत बनावट, जीवन-स्थिति और दृढ़ता के अन्तरों के कारण) अलग-अलग गति और तीव्रता से चलती है। ईश्वरीय माली प्रेम से हर व्यक्तिगत पौधे की देखभाल करता है (इब्रानियों 12:11; यूहन्ना 15:2) – सब के साथ उस एक महान लक्ष्य से कि वे उसके पुत्र के स्वरूप में ढल जाएँ (रोमियों 8:29)। यदि यह परमेश्वर का सबसे बड़ा लक्ष्य है, तो यह हमारी भी सबसे बड़ी चिन्ता होनी चाहिए। परमेश्वर के साथ यह संगति, अर्थात् एक ही लक्ष्य रखने की यह सहमति, हमारे जीवन में बहुत कुछ सरल कर देगी और हमें अधिक लक्ष्य-केन्द्रित बनाएगी। इसके द्वारा हम अपनी प्रतिदिन की जीवन-स्थिति को एक बिल्कुल दूसरी – अर्थात् ईश्वरीय – दृष्टि से देखने लगेंगे।

केवल परमेश्वर की बुद्धि ही नए जीवन की उत्पत्ति और उसकी वृद्धि दोनों को करती है। निर्णायक वह परिणाम है, जिससे परमेश्वर का कार्य पहचाना जाता है, अर्थात् मसीहियों के बदले हुए जीवन में आत्मा का अच्छा फल।

14.8 वृद्धि – जीवन बढ़ता है

वृद्धि एक अत्यन्त महत्वपूर्ण बात है। परमेश्वर का जीवन अपने आप में सिद्ध है, परन्तु जब वह किसी मनुष्य में रखा जाता है, तो उसे बढ़ना चाहिए। उसे व्यावहारिक रूप से भी पूरे मनुष्य में व्याप्त होना चाहिए। नया जीवन मनुष्य के व्यवहार को, उसके ज्ञान को, अर्थात् उसके स्वभाव को, अधिक से अधिक पुराने जीवन से नए जीवन की ओर बदलता है (अर्थात् यीशु मसीह का स्वभाव उसमें अधिक से अधिक आकार लेता है; गलातियों 4:19; 2 कुरिन्थियों 3:18)।

आइए, खुली प्रकृति में देखें। वहाँ गेहूँ के खेत नहीं होते। वे केवल वहीं होते हैं, जहाँ मनुष्यों ने उन्हें बनाया और उचित बीज बोया है। इसी प्रकार अपने पुराने जीवन में हमने केवल काँटे और ऊँटकटारे उत्पन्न किए (इफिसियों 5:11)। परन्तु अब वचन का बीज बिखरा जाता है; और अच्छा अनाज उगता है, परमेश्वर के लिए फल (मत्ती 13:23; रोमियों 6:22; 7:4)। बीज उपजाऊ “हृदय की भूमि” में अंकुरित होता है। इस प्रकार परमेश्वर से मिला नया जीवन मनुष्य को बदलता है। जो भीतर हुआ और तब से आगे होता रहता है,

उसका परिणाम नया जन्म पाए हुए मनुष्य के व्यवहार में देखा जा सकता है: अब वह उसकी ओर उन्मुख है, जिसने उसे जन्म दिया।

जिस मनुष्य में बीज बोया जाता है, उसमें बुराई अब भी विद्यमान है, जैसे गेहूँ के खेत में भी कम या अधिक ऊँटकटारे और काँटे दिखाई दे सकते हैं। परन्तु नया जीवन, नया फल, एक जयवन्त जीवन भी है (1 यूहन्ना 5:4)। उसमें नए जन्मे हुए के परिवर्तन खिल सकते हैं: अब वह परमेश्वर की सी चाल चलनेवाला बन गया है, जिसने उसे जीवन दिया है। जहाँ अच्छी भूमि अच्छा फल लाती है, वहीं हम अपने जीवन के खेत से वह हटाते हैं जो अच्छा फल नहीं है: हमारे पुराने और पापी व्यवहारों के काँटे, और ऊँटकटारे, जिनकी जड़ें लंबी और गहरी हैं और जो पुरानी, हठीली आदतों के प्रतीक हैं। कुछ खरपतवार को हानिरहित बनाने में कठोर अनुशासन और धीरज की आवश्यकता होती है, परन्तु ये परिश्रम सार्थक हैं, जब हम अपने आप को उस लक्ष्य के अधीन करते हैं जो परमेश्वर ने हमारे लिए रखा है। हमारे जीवन के खेत में पड़े पत्थर अनावश्यक बोझ और भार हैं; कभी-कभी ये वे पाप हैं, जो सहज ही उलझा लेते हैं और हमारी वृद्धि और उन्नति को धीमा करते और रोकते हैं (यशायाह 5:1-7; इब्रानियों 12:1)।

यह आश्चर्यजनक है कि बाइबल में वृद्धि को कितना महत्वपूर्ण स्थान मिला है और कितनी बार इसे मनुष्य पर लागू किया गया है। इस्राएल यहोवा की दाख की बारी था और उसे अच्छा फल लाना था। स्वयं परमेश्वर माली है।

अपने जीवन की दाख की बारी की, अर्थात् अपनी “निज दाख की बारी” (श्रेष्ठगीत 1:6) की अच्छी रखवाली करना महत्वपूर्ण है। मसीह दाखलता है, जिसकी हम डालियाँ हैं, ताकि पिता के लिए फल लाएँ (यूहन्ना 15:1-8)।

आत्मिक वृद्धि एक सामान्य प्रक्रिया है, जैसी प्रकृति में और हमारे मानवीय स्वभाव में भी होती है। इस वृद्धि को समय और सब आवश्यक परिस्थितियाँ चाहिए। वृद्धि छल्लों में नहीं होती, उसका कोई छोटा रास्ता भी नहीं है – चाहे वह किसी भी बात या अनुभव के द्वारा हो। “पवित्रशास्त्र में कहीं भी यह शिक्षा नहीं दी गई कि शारीरिकता से आत्मिकता तक, या अपेक्षाकृत लापरवाह जीवन से मसीह के प्रति समर्पण के जीवन तक अचानक छल्लों होती है। इसके विपरीत, भक्ति में वृद्धि को ऐसी वृद्धि के रूप में प्रस्तुत किया गया है, जो उतनी ही सामान्य और स्वाभाविक होनी चाहिए जितना किसी मनुष्य का बच्चे से परिपक्व, वयस्क मनुष्य तक का सामान्य विकास।”⁹²

ग्रीनहाउस के द्वारा ऋतुओं के नियमों से बचा जा सकता है और बहुत से पौधे और सब्जियाँ हर ऋतु में काटी जा सकती हैं। परन्तु हम सब जानते हैं कि ग्रीनहाउस में कभी भी उस गुणवत्ता के पौधे नहीं उगाए जा सकते, जो खुले खेत के पौधे प्राप्त करते हैं। यह ग्रीनहाउस में उगाए गए पौधों के फलों के स्वाद पर भी लागू होता है। इसी प्रकार आत्मिक फल प्रतिदिन के जीवन में सबसे अच्छा बढ़ता है। खुली प्रकृति में, जहाँ

92. Henry Allen Ironside, *Heiligung – Zerrbild und Wirklichkeit*, पृ. 153।

फल हवा और मौसम, गर्मी और ठंड, सूखे और वर्षा के सामने रहता है, वहीं उसे बढ़ने की सर्वोत्तम परिस्थितियाँ मिलती हैं। हम “ग्रीनहाउस-मसीही” नहीं बनना चाहते।

14.9 विकसित करना

“विकसित करना” (जर्मन: kultivieren, अर्थात् भूमि को खेती योग्य बनाना) का अर्थ है, उदाहरण के लिए, वहाँ गेहूँ का खेत बनाना, जहाँ पहले जंगल या घास का मैदान था। “फल लाने” के संदर्भ में पौलुस कहता है (फिलिप्पियों 2:12-13):

“अपने उद्धार का कार्य पूरा करते जाओ

डरते और काँपते हुए;

क्योंकि परमेश्वर ही है जो तुम में

इच्छा करने

और काम करने, दोनों बातों को उत्पन्न करता है,

अपनी सुइच्छा निमित्त।”

शायद कोई दूसरा बाइबल-वचन इतने संक्षेप में कार्य करने की हमारी ज़िम्मेदारी को और साथ ही हमारे कार्य में परमेश्वर के कार्य को नहीं दिखाता। जब हम “कार्य करते” हैं, उसी समय परमेश्वर कार्य में लगा होता है। उद्धार कार्य करने के लिए बाध्य करता है: क्योंकि हमें प्राप्त उद्धार का प्रमाण देना है – हाँ, उसे पूरा करना है। इस बाइबल-वचन में हमारी ज़िम्मेदारी और परमेश्वर के कार्य के बीच एक बड़ा तनाव है। परन्तु हम इस तनाव को यह मानकर यूँ ही हल नहीं कर सकते कि उद्धार को हमारे कार्य से अलग देखा जाना चाहिए और उसका हमारे अपने प्रयासों से कोई संबंध नहीं है। आइए, परमेश्वर के वचन को वैसा ही लें जैसा वह है! हमें डरते और काँपते हुए भी (अर्थात् इस चेतना के साथ कि हम भूलें कर सकते हैं) उद्धार को जीना है और बार-बार उल्लेख किए गए “उद्धार के आज्ञार्थ” (इम्पेरेटिव) को गंभीरता से लेना है। जब हम एक दिन लक्ष्य पर पहुँचेंगे, तब हम पहचानेंगे कि हमारी सारी लगन में परमेश्वर ही था, जिसने अपने अनुग्रह में सब कुछ पूरा किया।

परन्तु इस पद का आत्मिक वृद्धि से क्या संबंध है? “कार्य पूरा करते जाओ” शब्द यूनानी भाषा में खेती, अर्थात् खेत जोतने-बोने के लिए भी प्रयोग होता था। यह हमें पुष्टि देता है: परमेश्वर ने अपना वचन हमारे हृदय में रोपा है, नया जीवन हमें दिया गया है। अब हमें नए जीवन के इस खेत की देखभाल करनी है और उसे विकसित करना है: इसमें हमें हर बाधा डालनेवाली बात को हटाना है और वह सब उपलब्ध कराना है जो वृद्धि को बढ़ावा देता है। इसके अतिरिक्त हमें यह सुनिश्चित करना है कि अच्छी फ़सल काटी जा सके। हमारा जीवन खेत के समान है – निश्चय ही यह चित्र के अर्थ में कहा गया है। किसान का यह काम फिर से

स्वयं परमेश्वर का कार्य है। परमेश्वर पर भरोसा रखते हुए, जो सब कुछ करता है और करना चाहता है, हम उसे विकसित करते हैं जो परमेश्वर ने हम में रचा है।

संसार की बातें हृदय की भूमि को कठोर और परमेश्वर के बोलने के प्रति असंवेदनशील बना देती हैं। अब तक कठोर रही भूमि को परिश्रम से पोला करना पड़ता है, ताकि वह जल सोख सके और फिर से फल ला सके। बुरे और अशुद्ध विचारों के खरपतवार को भी लगातार हटाना पड़ता है। छोटे पौधों को गहरी जड़ों वाले पुराने पौधों की अपेक्षा अधिक आसानी से हटाया जा सकता है। तो आइए, हम तुरन्त और लगातार इनके विरुद्ध कदम उठाएँ!⁹³

14.10 शौक्र या कर्तव्य?

शौक्रिया माली खरपतवार की चिन्ता इसलिए करता है कि एक सुन्दर बगीचा रखना उसका शौक्र है। उसे यह करना ज़रूरी नहीं, कोई उसे इसके लिए विवश नहीं करता। जब हम माली या किसान के चित्र को अपने पवित्रीकरण पर लागू करते हैं, तो यह कोई ऐसा विकल्प नहीं है, जिसे हम चुन भी सकते हैं या उपेक्षित भी कर सकते हैं। पवित्रीकरण के जीवन और आत्मिक वृद्धि का निर्णय लेना केवल मसीहियों के किसी विशेष वर्ग के लिए नहीं है, जो मिशन में जाना या प्रचारक बनना चाहते हैं। बल्कि उद्धार हमें बाध्य करता है कि हम उस पवित्रता के पीछे लगे रहें, जिसके बिना कोई प्रभु को नहीं देखेगा। किसी-किसी को यह चाहे कितना भी असामान्य लगे: अपने जीवन में पवित्रता के बिना हम अन्त में प्रभु को नहीं देखेंगे (इब्रानियों 12:14)!

“क्योंकि जो भूमि उस वर्षा को, जो उस पर बार-बार पड़ती है, पी पीकर उन लोगों के काम का साग-पात उपजाती है जिनके लिए वह जोती-बोई भी जाती है, वह परमेश्वर से आशीष पाती है; परन्तु यदि वह काँटे और ऊँटकटारे उगाती है, तो निकम्मी और स्नापित होने पर है, और उसका अन्त जलाया जाना है” (इब्रानियों 6:7-8)।

14.11 यूहन्ना के लेखों में उद्धार का निश्चयार्थ

परमेश्वर का जीवन (अनन्त जीवन) यूहन्ना का विषय है। वह उस नए जन्म पर भी विचार करता है, जिसके द्वारा हम यह जीवन पाते हैं। उसकी तीन पत्रियों में से हम एकत्र करना चाहते हैं कि परमेश्वर की सन्तान के रूप में हम क्या बन गए हैं और हमें क्या दिया गया है। उसके लेखों में उद्धार के निश्चयार्थ (इंडिकेटिव) का अर्थ यह है (पौलुस के साथ बहुत सी समानताओं पर ध्यान दीजिए):

- पिता और उसके पुत्र यीशु मसीह के साथ संगति (1 यूहन्ना 1:3)
- पूरा आनन्द (1:4)
- हम ज्योति में चलते हैं (1:7; 2:9-11)।
- उसने, परमेश्वर के पुत्र ने, हमारे लिए अपना प्राण दे दिया (3:16)।

93. C. G. Willis, *Betrachtungen über den Brief an die Philipper*, पृ. 184।

- यीशु मसीह का लहू हमें सब पाप से शुद्ध करता है (1:7)।
- वह हमारे पापों का प्रायश्चित्त है (2:2; 4:10)।
- हमारे पाप क्षमा हुए हैं (2:12)।
- हमारे पाप उठा लिए गए हैं (3:5)।
- निरन्तर क्षमा (अंगीकार के बाद) और अधर्म से शुद्धिकरण (1:9)
- जब हमने पाप किया हो, तो पिता के पास हमारा एक सहायक (वकील) है (2:1)।
- हम में सचमुच परमेश्वर का प्रेम सिद्ध हुआ है (2:5; 4:12, 17)।
- पिता का प्रेम हमें दिया गया है (3:1)।
- परमेश्वर हम से प्रेम करता है (4:16)।
- हम **उसमें** हैं (2:5)।
- हम उसमें हैं जो सत्य है, अर्थात् उसके पुत्र यीशु मसीह में (5:20)।
- जो उसमें सच्चा है, वह हम में भी उतना ही सच्चा है, अर्थात् ईश्वरीय जीवन (2:8)।
- हम सदा बने रहते हैं (2:17)।
- हमारे पास पवित्र आत्मा है, उस पवित्र की ओर से अभिषेक (2:20, 27)।
- उसने हमें अपना आत्मा दिया है (3:24; 4:13)।
- हम पिता में और पुत्र में हैं (2:24)।
- हमसे उसकी प्रतिज्ञा: अनन्त जीवन (2:25)
- परमेश्वर ने हमें अनन्त जीवन दिया है; यह उसके पुत्र में है (5:11, 13)।
- हमारे पास पुत्र है और उसके साथ जीवन (5:12)।
- अनन्त जीवन हम में बना रहता है (अर्थात् वास करता है) (3:15)।
- हम परमेश्वर से जन्मे हैं (2:29; 3:9; 4:4, 6-7; 5:1, 3, 18-19; 3 यूहन्ना 11)।
- हम परमेश्वर की सन्तान हैं (3:1)।
- परमेश्वर का बीज हम में है (3:9)।
- हम परमेश्वर के पुत्र के समान होंगे (3:2)।
- हम परमेश्वर के पुत्र को वैसा ही देखेंगे जैसा वह है (3:2)।
- हम मृत्यु से पार होकर जीवन में पहुँच गए हैं (3:14)।
- हम उसमें हैं, और वह हम में है (3:24; 4:4)।
- पुत्र के द्वारा हमारे पास जीवन है (4:9)।
- न्याय के दिन हमें साहस है (4:17)।
- परमेश्वर के सिद्ध प्रेम के द्वारा भय हम से दूर किया गया है (4:18)।
- हम भरोसे के साथ और उसकी इच्छा के अनुसार प्रार्थना करते हैं (5:14-15)।
- हम चुने हुए हैं (2 यूहन्ना 13)।

- ईश्वरीय सत्य (परमेश्वर के आत्मा की तरह) हम में और हमारे साथ सदा बना रहता है (2 यूहन्ना 2)।

14.12 यूहन्ना के लेखों में उद्धार का आशार्थ

जहाँ आशीर्ष और विशेषाधिकार पाए जाते हैं, वहाँ कर्तव्य और ज़िम्मेदारी भी होती है। यह समझ नई तो नहीं है, परन्तु यह संकलन हमें छू लेता है:

- उसकी आज्ञाओं को मानना (2:3-4; 3:22; 5:2-3; 2 यूहन्ना 5)
- उसके वचन पर चलना (2:5)
- वैसा ही चलना ज़रूरी, जैसा वह चलता था (2:6; तुलना करें 4:17)
- भाई से प्रेम करना (2:10; 3:10, 14; 2 यूहन्ना 5)
- संसार से प्रेम न करना (2:15)
- विश्वास के द्वारा संसार पर जय पाना (5:4)
- पुत्र का अंगीकार करना (2:23)
- उसमें बने रहना (2:28)
- धर्म के काम करना (2:29)
- अपने आप को वैसा ही शुद्ध करना, जैसा वह, परमेश्वर का पुत्र, शुद्ध है (3:3)
- पाप न करना (3:6, 9; 5:18)
- भाइयों के लिए अपना प्राण देना और उनके लिए अपना हृदय खोलना (3:16-17)
- काम और सच्चाई से एक दूसरे से प्रेम करना (3:18; 4:7; 4:11)
- प्रेम में बने रहना (4:16)
- वह करना जो परमेश्वर को भाता है (3:22)
- हम प्रेम करते हैं, क्योंकि पहले उसने हम से प्रेम किया (4:19)।
- सत्य पर चलना (2 यूहन्ना 4; 3 यूहन्ना 4)
- अपने विषय में चौकस रहना, ताकि जो परिश्रम हमने किया है उसे खो न दें (2 यूहन्ना 8)
- मसीह की शिक्षा में बने रहना (2 यूहन्ना 9)
- सत्य को थामे रहना (3 यूहन्ना 3)
- परमेश्वर के सेवकों को ठिकाना देना (3 यूहन्ना 5-8)
- भलाई करना और भलाई का अनुकरण करना (3 यूहन्ना 11)।

14.13 अनन्त जीवन – गुण और मात्रा

नए जीवन का एक ऐसा आयाम है, जो अब तक की हर बात को और उस सब को, जिसे मनुष्य संभव मानते थे, फीका कर देता है। अनन्त जीवन केवल अन्तहीन अस्तित्व नहीं है। वह तो हर मनुष्य के पास है, उसके पास भी जिसने नया जन्म नहीं पाया। बल्कि नए जन्म के द्वारा हमें एक ऐसा अस्तित्व मिलता है, जो

हमें एक दिन स्वर्ग में, और इस प्रकार वहाँ होने के योग्य बनाता है, जहाँ अनन्त जीवन का “घर” है। परन्तु यूहन्ना के संदेश में बात स्वर्ग से चिह्नित इस जीवन की भरपूरी की है, जिसे हम तब ही नहीं, बल्कि अभी से, जब हम अभी पृथ्वी पर हैं, अपने भीतर रखते हैं। इस जीवन की भरपूरी, समृद्धि और विषय-वस्तु अब हम में पाई जाती है। इससे केवल एक अस्तित्व नहीं बना, बल्कि एक नया मनुष्य, उस सब के साथ जो एक मनुष्य को बनाता है: इच्छा, प्रेम, पहचानना और बहुत कुछ। इस जीवन के साथ हमें पिता का ज्ञान मिला है (यूहन्ना 17:3)। हम पिता और पुत्र के साथ एक जीवित, प्रेम से चिह्नित और घनिष्ठ संबंध और संगति में आ गए हैं। यह कभी संभव न होता, यदि हमारे पास वही जीवन न होता, जो पिता और पुत्र के पास है।

14.14 जीवन के लक्षण

जो अपने बच्चों के जन्म के समय उपस्थित रह सका है, वह जानता है कि मेरा क्या अर्थ है। सब उत्सुकता से बच्चे की पहली आवाज़ की प्रतीक्षा करते हैं। जब वह रोता है, तब जन्म का आश्चर्यकर्म पूरा हो जाता है। आत्मिक जीवन में भी ऐसे जीवन के लक्षण होते हैं। नए जन्म की बात करने के थोड़े ही बाद (1 पतरस 1:23) पतरस कहता है कि हमें नए जन्मे बच्चों की तरह परमेश्वर के वचन के निर्मल दूध की लालसा करनी चाहिए (1 पतरस 2:2)। दूसरे शब्दों में: नया जन्म पाए हुए मनुष्य को परमेश्वर के वचन की भूख, अर्थात् उसमें रुचि होती है। वह परमेश्वर के वचन के बिना अब नहीं रह सकता, क्योंकि वह उसके लिए भोजन के समान है। जीवन के और लक्षण, जिन्हें हम उद्धार के आज्ञार्थों के अन्तर्गत पहले ही गिना चुके हैं, ये हैं:

- जो परमेश्वर से जन्मा है, वह धार्मिकता के काम करता है (1 यूहन्ना 2:29)।
- जो परमेश्वर से जन्मा है, वह परमेश्वर से प्रेम करता है और उसे जानता है (1 यूहन्ना 4:7)।
- जो परमेश्वर से जन्मा है, वह विश्वास करता है कि यीशु ही मसीह है (1 यूहन्ना 5:1)।
- जो परमेश्वर से जन्मा है, वह विश्वास के भाई-बहनों से प्रेम करता है (1 यूहन्ना 5:1)।
- जो परमेश्वर से जन्मा है, वह संसार पर जय पाता है (1 यूहन्ना 5:4)।

नए जीवन के एक लक्षण की हम अधिक विस्तार से जाँच करते हैं (1 यूहन्ना 3:6, 9; 5:18):

“जो कोई उसमें बना रहता है,

वह पाप नहीं करता;

जो कोई पाप करता है,

उसने न तो उसे देखा है

और न उसे जाना है।”

“जो कोई परमेश्वर से जन्मा है,

वह पाप नहीं करता,

क्योंकि उसका बीज उसमें बना रहता है;

और वह पाप कर ही नहीं सकता,

क्योंकि वह परमेश्वर से जन्मा है।”

“हम जानते हैं

कि जो कोई

परमेश्वर से जन्मा है,

वह पाप नहीं करता।”

14.15 जो परमेश्वर से जन्मा है, वह पाप नहीं करता

यह जीवन का एक ऐसा लक्षण है, जो पहली दृष्टि में हमें चौंका देता है और शायद उदास भी कर देता है। क्या यूहन्ना यह कहना चाहता है कि मसीही फिर कभी पाप कर ही नहीं सकता? यदि उसका यही अर्थ होता, तो वह स्वयं अपनी ही बात का खण्डन कर देता; क्योंकि अध्याय 2:1 में वह लिखता है:

“हे मेरे बालको, मैं ये बातें तुम्हें इसलिए लिखता हूँ,

कि तुम पाप न करो;

और यदि किसी ने पाप किया हो –

तो पिता के पास हमारा एक अधिवक्ता है,

अर्थात् धर्मी यीशु मसीह।”

इससे भी पहले वह कहता है:

“यदि हम कहें कि हम में कोई पाप नहीं,

तो अपने आप को धोखा देते हैं, और हम में सत्य नहीं।

यदि हम अपने पापों का अंगीकार करें,

तो वह विश्वासयोग्य और धर्मी है,

कि हमारे पापों को क्षमा करे

और हमें सब अधर्म से शुद्ध करे।”

1 यूहन्ना 1:8-9

जब यूहन्ना पाप न करने के लिए कहता है, तो स्पष्ट है कि संबंधित व्यक्ति अब भी पाप कर सकता है और निष्पाप नहीं बन गया है। दुर्भाग्य से हमारा प्रतिदिन का अनुभव भी इस बात का अखण्डनीय प्रमाण है कि ऐसा ही है। परन्तु यूहन्ना का मानक या मापदण्ड स्पष्ट रूप से यह है कि हम (बिल्कुल) पाप न करें; वह यह नहीं कहता, जैसा कि हम शायद कहते: “जितना हो सके उतना कम पाप करने का प्रयत्न करो!” बल्कि यूहन्ना हमारे जीवन का मानक उस बात से निकालता है जो यीशु ने स्वयं परमेश्वर के विषय में कही थी, अर्थात् “परमेश्वर ज्योति (पूर्ण रूप से पवित्र और धर्मी) है और उसमें कुछ भी अन्धकार (पाप) नहीं” (1 यूहन्ना 1:5)। जब वह आरम्भ में कहता है: “यदि किसी ने पाप किया हो ...”, तो स्पष्ट हो जाता है कि वह यहाँ नियम की नहीं, बल्कि अपवाद की बात कर रहा है। हमें इन शब्दों को उन शब्दों के साथ मेल में लाने के लिए कोई कलाबाज़ी करने की आवश्यकता नहीं, जहाँ कहा गया है कि जो परमेश्वर से जन्मा है वह पाप नहीं करता, या (और भी स्पष्ट शब्दों में) पाप कर ही नहीं सकता। ये शब्द, जो इतने परस्पर-विरोधी प्रतीत होते हैं, आपस में मेल खाने वाले होने ही चाहिए।

यूहन्ना यहाँ हमें उन लोगों के रूप में देखता है, जिन्हें नए जीवन की शक्ति और उसका सार प्रदान किया गया है। उसकी दृष्टि में हम यहाँ वे हैं जिनके पास यह जीवन है, जो वचन के ईश्वरीय बीज से उत्पन्न हुआ है। और इसका अनिवार्य परिणाम यह है: मसीही लगातार पाप नहीं करता (यह व्याकरण का सातत्य-रूप, अर्थात् ड्यूरेटिव, होता) और आदत के रूप में भी नहीं। पौलुस के शब्दों में कहें तो, वह पाप की शक्ति से स्वतंत्र किया गया है। “यद्यपि विश्वासी कभी-कभी पाप करता है, फिर भी उसके जीवन का प्रधान सिद्धांत पाप नहीं, बल्कि पाप का उलटा है। हम परमेश्वर की सन्तान हैं, और पाप हमारे लिए असामान्य और अस्वाभाविक है।”⁹⁴ मसीही परमेश्वर से और उसकी आज्ञाओं से प्रेम करता है। उसके सार में ही यह बात है कि वह पाप से घृणा करता है। वह आत्मा के द्वारा जीता और चलता है, ताकि शरीर (यूनानी *sarx*) की लालसा पूरी न करे (गलातियों 5:16, 25)।

कुछ लोग इसे इस प्रकार समझते हैं: यूहन्ना का अभिप्राय केवल नए जीवन (उसमें मसीह के जीवन) से है, जो पाप नहीं कर सकता। यह व्याख्या केवल आंशिक रूप से सही है। निश्चय ही यह जीवन पाप नहीं कर सकता। परन्तु यहाँ बात नए जीवन की गतिविधियों की नहीं, बल्कि उस व्यक्ति के आचरण की है जो परमेश्वर से जन्मा है। नया जीवन अपने आप में कुछ नहीं करता। बल्कि संबंधित व्यक्ति अपने जीवन के, अपने स्वभाव के अनुरूप कुछ करता है। व्यक्ति पूरी ज़िम्मेदारी के साथ और अपने निर्णय से कुछ करता है, और उसका जीवन या उसका स्वभाव यह निर्धारित करता है कि कार्य का उद्गम क्या है – अर्थात् वह स्रोत, जिससे वह व्यक्ति ग्रहण करता है। बीज ही वह है जिसके द्वारा संबंधित व्यक्ति नए सिरे से जन्मा, और यही बीज साथ ही नया जीवन भी है। यूहन्ना अब नया जन्म पाए हुए मनुष्य को ऐसे व्यक्ति के रूप में देखता है, जो यह जीवन जीता है, या जो इस जीवन के द्वारा निर्धारित और पहचाना जाता है। इस जीवन में पाप का कोई स्थान नहीं; वह एक पराई वस्तु है। “यूहन्ना की पत्नी में तीखे विरोधाभास हैं। इसके अतिरिक्त उसमें

94. Alfred Plummer, John R. W. Stott, *The Letters of John* में उद्धृत, पृ. 138।

बहुत से अमूर्त कथन हैं। पाप और धार्मिकता के साथ भी ऐसा ही है। सदा वही बात सामने रखी जाती है जो किसी वस्तु की विशेषता है। इस प्रकार विश्वासी अपने सार से धर्मी है: वह धार्मिकता के काम करता है और पाप नहीं करता। परन्तु इसका अर्थ यह है कि उसके जीवन का चरित्र अच्छा है: वह धार्मिकता से जीता है, और परिणामस्वरूप वह पापमय जीवन नहीं जीता। अविश्वासी के लिए इसका उलटा लागू होता है।”⁹⁵

यूहन्ना किसी आदर्श की बात नहीं करता कि बात कैसी हो सकती थी, बल्कि इसकी कि वह कैसी है। कभी-कभी ऐसा लग सकता है कि वह स्थिति और व्यावहारिक दशा के बीच के भेद को (समझने का एक सहायक साधन, जिसका उपयोग हमने विशेष रूप से पौलुस की उद्धार की शिक्षा में किया है) बस अनदेखा कर देता है। इसलिए यह कथन केवल “सैद्धांतिक” रूप से, स्थिति के अनुसार या वस्तुगत रूप से सत्य नहीं है, बल्कि यह वास्तव में उसका वर्णन करता है जो हम अपने दैनिक जीवन में व्यावहारिक रूप से भी हैं (उद्धार का आज्ञार्थ, इम्पेरेटिव)। यह उससे आगे जाता है जो हम अपनी स्थिति में (उद्धार का निश्चयार्थ, इंडिकेटिव) अनुग्रह से बन गए हैं।

14.15.1 उद्धार के इतिहास की चार अवस्थाएँ: मनुष्य और पाप

हिप्पो के ऑगस्टीन (Augustinus von Hippo) (354 – 430) ने पेलागियस (Pelagius)⁹⁶ के साथ विवाद में तीन लैटिन शब्दों के आधार पर यह विभाजन किया: **posse** (“सकना, समर्थ होना, योग्य होना” के लिए), **peccare** (“पाप करना, चूकना, अपराध करना” के लिए) और **non** (“नहीं” के लिए)।

14.15.2 अब पाप न करना: संभव या असंभव?

यह स्पष्ट है: यूहन्ना इस तथ्य को जानता है कि एक विश्वासी “पाप कर सकता है”। वह इसकी संभावना को नकारता नहीं। मसीही जीवन में पाप करना नियम नहीं है। सामान्य बात यह है कि मसीही पाप नहीं करता, क्योंकि परमेश्वर की शक्ति ने परमेश्वर की पहचान के द्वारा उसे वह सब कुछ दिया है जो भक्तिपूर्ण जीवन के लिए उपयोगी है (2 पतरस 1:3)। “सच्चा मसीही वह नहीं है जिसने पाप करने की क्षमता खो दी है, बल्कि वह है जिसने उसकी इच्छा और तत्परता खो दी है।”⁹⁷

यूहन्ना ने यह नहीं कहा कि निष्पापता और पूर्ण निर्दोषता संभव है (अन्यथा वह स्पष्ट रूप से स्वयं अपना ही खण्डन करता)। निष्पापता अपने आप में इसलिए भी संभव नहीं, क्योंकि पाप हम में बसा है और हमारी देह तथा हमारे पार्थिव अस्तित्व के साथ अभिन्न रूप से गुँथा हुआ है। यह कि हम अब पाप न करें, आज

95. वही, पृ. 137।

96. ब्रिटिश भिक्षु, जिसने ऑगस्टीन का समकालीन होते हुए उसकी अनुग्रह और उद्धार की शिक्षा को अस्वीकार किया और उसके स्थान पर मनुष्य की इच्छा की स्वतंत्रता पर जोर दिया।

97. William MacDonald, *Der vergessene Befehl – Seid heilig*, पृ. 45।

प्रयत्न करने योग्य है (तुलना करें यूहन्ना के शब्द: "... कि तुम पाप न करो"), परन्तु यह महिमा में ही संभव होगा, जब हम उसके, अपने प्रभु के, पूरी तरह समान होंगे।

1. पतन से पहले का मनुष्य	2. पतित मनुष्य	3. नया जन्म पाया हुआ मनुष्य	4. पूर्णता में मनुष्य
Posse peccare	Non posse Non peccare	Posse non peccare	Non posse peccare
वह पाप कर सकता था (परन्तु उससे बच भी सकता था)।	वह पाप किए बिना नहीं रह सकता; वह पाप न करने में असमर्थ है।	वह पाप किए बिना रह सकता है (परन्तु पाप भी कर सकता है)।	वह अब पाप नहीं कर सकता।
स्वतंत्र इच्छा के कारण मनुष्य यह निर्णय ले सकता था कि वह परमेश्वर की आज्ञा का आदर करे या उसे तोड़े।	वह शरीर में है, पाप के हाथ बिका हुआ। पतित मनुष्य का हर कार्य पाप नहीं है, परन्तु वह निष्पाप जीवन नहीं जी सकता।	आत्मिक दृष्टि से उसमें नया और पुराना दोनों जीवन हैं। पाप की विवशता टूट चुकी है। वह पाप न करने में समर्थ बनाया गया है, परन्तु वह अब भी पाप कर सकता है।	पाप और शरीर, अर्थात् पुराना स्वभाव, मसीही में पुरानी सृष्टि के उसके पार्थिव-दैहिक अस्तित्व से बँधे थे; यह अस्तित्व पूर्णता में समाप्त हो जाता है, और उसका स्थान महिमा की देह तथा मसीह की निरन्तर निकटता ले लेती है।

तो क्या अब हमें अपने अनुभव के कारण निराश होना चाहिए – यह जानते हुए कि हम इस लक्ष्य तक कभी नहीं पहुँच सकते? या क्या पवित्रशास्त्र में कोई ऐसा कारण है, जो हमें इस बात की पुष्टि करता हो कि हम निष्पाप होने में सफल नहीं होंगे? ऐसा कथन हमें बहुत आश्चर्यचकित करता। एक ओर मसीही को पाप न करने के लिए प्रोत्साहित करना और साथ ही उसे यह स्पष्ट करना कि यह कभी सफल नहीं होगा – यह कैसे हो सकता है? यह आपस में मेल नहीं खाता, और शिक्षा की दृष्टि से यह बहुत नासमझी होती। हमारे जीवन का मानक सदा परमेश्वर की सिद्धता है, इससे कम कभी नहीं।

परन्तु यदि कोई पूरी गम्भीरता से यह मानता है कि वह सिद्धता की दशा (पाप-रहित जीवन) तक पहुँच गया है, तो उसने शायद पाप के स्वरूप और वास्तविकता के प्रति अपनी दृष्टि और संवेदना खो दी है। उसका विवेक इसके प्रति अब संवेदनशील नहीं रहा। जो बहुत से भले काम हम करते हैं, उनमें भी अक्सर पाप की एक छाया दिखाई देती है। जो दावा करता है कि वह अब पाप नहीं करता, उसे इसका प्रमाण देना होगा और अपनी निष्पापता के लिए "गवाह" प्रस्तुत करने होंगे: अपना जीवनसाथी, अपने बच्चे और अपने निकट परिवेश के अन्य लोग। मैं केवल एक को जानता हूँ जिस पर यह बात लागू होती है: यीशु। इस स्थान पर मैं

वह बहुत प्रयुक्त और हर दृष्टि से सच्चा वाक्य जोड़ता हूँ: “मसीही निराश कर सकते हैं, मसीह कभी नहीं।” यह वाक्य बहाने के रूप में नहीं, बल्कि प्रोत्साहन के रूप में काम आए।

14.16 सिद्धता – यह क्या है?

नया नियम अक्सर सिद्धता की बात करता है, तब भी जब बात हमारे विश्वास के जीवन की हो। इससे पूर्ण निर्दोषता या निष्पापता अभिप्रेत नहीं है। पवित्रीकरण की हमारी समझ के लिए यह महत्वपूर्ण है कि हम इस सिद्धता को ठीक-ठीक समझें। जिन वचनों में यह शब्द आता है, उनमें हम इसके कम से कम तीन अर्थों में भेद कर सकते हैं:

14.16.1 हमारी उद्धार-स्थिति की सिद्धता

“क्योंकि उसने एक ही बलिदान के द्वारा उन्हें सदा के लिए सिद्ध कर दिया है, जो पवित्र किए जाते हैं” (इब्रानियों 10:14)। यीशु के सिद्ध और सर्वपर्याप्त बलिदान के द्वारा हम सदा के लिए अपने पापों से छुड़ाए गए हैं। यह एक अपरिवर्तनीय, पूर्ण और परमेश्वर की दृष्टि में सिद्ध उद्धार है। हम धोए गए, पवित्र किए गए, धर्मी ठहराए गए हैं (1 कुरिन्थियों 6:11)। परमेश्वर की नई सृष्टि में (2 कुरिन्थियों 5:17) हम सिद्ध हैं (1 कुरिन्थियों 2:6; फिलिप्पियों 3:15)। मसीह में हम परिपूर्णता तक पहुँचाए गए हैं, अर्थात् पूर्ण किए गए हैं (कुलुस्सियों 2:10)।

यह सिद्धता अनुग्रह के एक वरदान और परमेश्वर के उद्धार-कार्य को समेटे हुए है। “इस दी गई सिद्धता को पूर्ण निष्पापता या नैतिक सिद्धता के साथ नहीं मिलाना चाहिए; परन्तु यदि मूलभूत सिद्धता न हो, तो नैतिक सिद्धता और परिपक्वता की ओर कोई बढ़ोतरी नहीं होती।”⁹⁸

14.16.2 हमारे जीवन में सिद्धता (परिपक्वता): बड़े होना

जबकि पहला अर्थ वास्तव में निष्कलंक और अपरिवर्तनीय सिद्धता को दर्शाता है, नया नियम इस शब्द का प्रयोग ऐसी स्थिति के लिए भी करता है जो उत्पन्न हुई है और बढ़ने या प्रगति की प्रक्रिया में है। इसका लक्ष्य सिद्धता (यूनानी में: परिपक्वता) है, अर्थात् आत्मिक वयस्कता की परिपक्वता। सिद्ध शब्द का यह अर्थ 1 कुरिन्थियों 14:20 में मिलता है। वहाँ कहा गया है कि कुरिन्थुस के लोग अपनी सभाओं में समझ के विषय में बालक न बनें, बल्कि सिद्ध, अर्थात् बड़े (वयस्क), परिपक्व बनें। सम्पूर्ण कलीसिया को विश्वास की और परमेश्वर के पुत्र की पहचान की एकता तक, बड़े (सिद्ध या परिपक्व) मनुष्य तक, मसीह की परिपूर्णता के पूरे डील-डौल के माप तक पहुँचना है (तुलना करें इफिसियों 4:13)। इसी प्रकार बाइबल की शिक्षा का ठोस भोजन बड़ों (सिद्ध, परिपक्व लोगों) के लिए है, जिनकी ज्ञानेन्द्रियाँ अभ्यास के कारण भले और बुरे दोनों में भेद करने के लिए पक्की हो गई हैं (तुलना करें इब्रानियों 5:14)।

98. Erich Mauerhofer, *Der Kampf zwischen Fleisch und Geist bei Paulus*, पृ. 124।

जब यीशु हमें आज्ञा देता है कि हम सिद्ध बनें, जैसा हमारा स्वर्गीय पिता सिद्ध है (मत्ती 5:48), तो इससे दो बातें प्रकट होती हैं: एक ओर यह परमेश्वर की सिद्धता को दिखाता है, और दूसरी ओर हमारे जीवन की उस प्रक्रिया को, जिसमें हम अपने पिता के समान बनते जाते हैं, क्योंकि हम उसका अनुकरण करनेवाले हैं।

14.16.3 भविष्य की पूर्णता में सम्पूर्ण सिद्धता

हमारे विश्वास का एक लक्ष्य है: मसीह के पास और उसके साथ रहना और पूरी तरह उसके समान होना। जब हम उसके समान होंगे, तो इसके अतिरिक्त और किसे सिद्ध या पूर्ण कहा जा सकता है? मसीह के साथ इस पूर्ण एकता के पीछे, यहाँ तक कि उसके पुनरुत्थान में भी, पौलुस दौड़ता रहा, परन्तु वह अभी उस तक पहुँचा नहीं था: “यह नहीं कि मैं इसे पा चुका हूँ (मरे हुएों में से पुनरुत्थान, और इस प्रकार देह का छुटकारा भी), या सिद्ध हो चुका हूँ (सिद्धता तक पहुँच गया हूँ, अर्थात् लक्ष्य तक पहुँचाया गया हूँ)” (फिलिप्पियों 3:12)। हमारे रूपान्तरण या पुनरुत्थान का दिन हमें आत्मा, प्राण और देह के अनुसार सिद्ध बना देगा (लक्ष्य तक पहुँचाएगा, पूर्ण करेगा) (तुलना करें कुलुस्सियों 1:28)।

14.17 अपने कर्मों के लिए ज़िम्मेदारी, न कि अपने अस्तित्व के लिए

कभी-कभी हम किसी के विषय में कहते हैं: “उसने अपने स्वभाव के अनुसार काम किया।” इससे हमारा अभिप्राय यह होता है कि उसने स्वयं यह निर्णय नहीं लिया कि वह कुछ करे या क्या करे, क्योंकि वह अपने स्वभाव से प्रेरित था। न्याय के दिन मनुष्यों का न्याय इस आधार पर नहीं होगा कि वे स्वभाव से क्या थे, बल्कि इस आधार पर कि उन्होंने अपनी ज़िम्मेदारी पर और पूरी तरह जानबूझकर क्या किया (रोमियों 2)। यह बात विश्वासी पर भी लागू होती है। जब वह पाप करता है, तो वह यह कहकर इसका बहाना नहीं बना सकता कि यह उसका पुराना स्वभाव, उसका पुराना ‘मैं’ या शरीर था। हमें सदा यह निर्णय लेना होगा कि हम आत्मा के द्वारा चलना चाहते हैं या शरीर के द्वारा। परमेश्वर के आत्मा से जीना हमारे लिए एक अभ्यस्त दिनचर्या बन सकता है और बनना भी चाहिए। यही परमेश्वर का अभिप्राय और हमारे साथ उसका लक्ष्य है। यह कोई निरन्तर, कठोर और थका देनेवाला संघर्ष, भलाई के पक्ष में लगातार निर्णय लेते रहना, होना आवश्यक नहीं। हमें विश्वास से इस तथ्य को स्वीकार करना है कि हम नए मनुष्य हैं – एक नए हृदय के साथ, एक नए जीवन के साथ और एक नवीकृत आत्मा के साथ। इस नए अस्तित्व की चेतना में हम जी भी सकते हैं। एक तितली कभी एक इल्ली थी, जब तक कि कायापलट के चमत्कार के द्वारा उसमें पूरा परिवर्तन नहीं हो गया। यद्यपि यह वही कीट है, फिर भी इन दोनों रूपों में कोई समानता नहीं है। तितली एक फूल से दूसरे फूल पर उड़ती है। यदि वह अब “वह न हो, जो वह बन गई है” और अपने आप को अब भी इल्ली जैसा महसूस करे, तो यह बहुत आश्चर्य की बात होगी। एक तितली, जो सोचती है कि वह इल्ली है! एक मज़ेदार, परन्तु साथ ही गम्भीर तुलना, क्योंकि बहुत से मसीही अपने जीवन में ठीक यही छाप छोड़ते हैं। आइए, हम उस इल्ली के समान व्यवहार न करें जो “पार्थिव” वस्तुओं से अपना पेट ठूस-ठूसकर भरती है, बल्कि उन तितलियों के समान जो उड़ती हैं और “स्वर्गीय आशीष” से जीती हैं! हम अपनी नई पहचान

को जी सकते हैं और हमें जीना भी चाहिए: मैं जीवित हूँ, पर अब मैं नहीं! मसीह मुझ में जीवित है (तुलना करें गलातियों 2:20)।

14.18 हमारे भीतर एक ही समय में नया और पुराना स्वभाव है

यह हमारे लिए एक रहस्य है और रहेगा कि हमारे भीतर एक ही समय में पुराना और नया स्वभाव है, और (बाइबल की भाषा में कहें तो) मसीह और पाप दोनों एक साथ हम में बसते हैं। फिर भी पवित्रशास्त्र इस बात की शिक्षा देता है, और हमारा अनुभव भी इसकी पुष्टि करता है। बुराई को छुटकारे के दिन तक हमारे भीतर रहने देने में परमेश्वर का उद्देश्य क्या हो सकता है? बुराई को जीया तो नहीं जाना चाहिए, परन्तु पहचाना अवश्य जाना चाहिए, ताकि इस थोड़े समय में हम अधिक से अधिक समझ सकें कि बुराई वास्तव में कैसी है और मसीह के लिए पाप ठहराया जाना क्या अर्थ रखता था।

वह शिक्षा, जिसके अनुसार मसीही का केवल एक ही स्वभाव है (अर्थात् केवल नया), संबंधित बाइबल-वचनों का अध्ययन करने के बाद स्पष्ट रूप से अस्वीकार की जानी चाहिए। हम मसीह में जितने सिद्ध हैं, उतना ही भ्रष्ट वह शरीर (यूनानी *sarx*) है जो अब भी हमारे साथ है। यह हमारे दैहिक अस्तित्व से अटूट रूप से जुड़ा है (इसीलिए इसका नाम भी “शरीर” है – एक ही शब्द देह में पार्थिव अस्तित्व के लिए भी प्रयोग होता है और उस पुराने पापी स्वभाव या पुराने स्वभाव के लिए भी, जो शरीर में, अर्थात् मांस में, रहता है)। केवल दैहिक मृत्यु के साथ, या उठा लिए जाने के समय सब विश्वासियों के बदल जाने के साथ, हर एक मसीही के पापी शरीर का पूर्ण अन्त होगा।

14.19 निष्कर्ष

नए सिरे से और ऊपर से जन्म लेना इसलिए इतनी महान घटना है, क्योंकि मनुष्य की सारी बुद्धि, तकनीक और शक्ति इसे उत्पन्न नहीं कर सकती, और न उस परिवर्तन को, जो इसके बाद दिखाई देता है।

जब एक पापी मन फिराता है, तो स्वर्ग आनन्द से भर उठता है – ठीक वैसे ही जैसे माता और पिता के साथ होता है जब बच्चा जन्म लेता है और वे जीवन के पहले लक्षण “सुनते” हैं। स्वावलम्बी होने तक शिशु को बहुत देखभाल और सेवा की आवश्यकता होती है। यही बात कुछ इसी प्रकार आत्मिक जीवन पर भी लागू होती है। सृष्टि बहुत बार आत्मिक वास्तविकताओं का प्रतिबिम्ब होती है, जो फिर हमें आत्मिक सच्चाइयों को बेहतर समझने में सहायता करती हैं। बालक जवान बनते हैं, जो एक दिन मसीह में पिता बनकर बढ़ते हैं (1 यूहन्ना 2:13-14)।

जब हम आज “नए स्वभाव” की बात करते हैं, तो उसका वास्तविक अर्थ “नया, या परमेश्वर का दिया हुआ, अनन्त जीवन” है, जिसे प्रभु यीशु स्वयं अपने व्यक्तित्व में साकार करता है। इस जीवन का अनिवार्य रूप से एक निश्चित प्रकार, एक निश्चित सार या एक विशिष्ट स्वभाव है। इसका अर्थ है कि यह जीवन केवल एक अस्तित्व (अर्थात् होने) का वर्णन नहीं करता, बल्कि इस बात की भी गवाही देता है कि उस पर

किसकी छाप है और वह नैतिक दृष्टि से किस प्रकार प्रकट होता है। एक बार फिर स्मरण करा दूँ: “ईश्वरीय स्वभाव” शब्द नए नियम में केवल एक बार आता है, और यह इस बात का संकेत है कि परमेश्वर का सार और उसके गुण हम में कैसे विकसित होते हैं और हमारे जीवन में कैसे प्रकट होते हैं।

पौलुस के साथ आरम्भ करने के बाद, अब यूहन्ना और पतरस के साथ और याकूब के साथ भी हम सब पहाड़ों पर चढ़ चुके हैं। बहुत से अद्भुत दृश्य और अन्तर्दृष्टियाँ मिलीं, जिन्होंने परमेश्वर की महानता को – उसके सार में और उसके उद्धार में – हमारे सामने बड़ा कर दिया है। परमेश्वर का, उसके सार का और उसके कामों का ज्ञान हमारे हृदयों को भर देना चाहता है।

नया जन्म पाए हुए लोगों का जीवन केवल अस्तित्व नहीं, केवल होना और स्वर्ग की प्रतीक्षा करना नहीं, बल्कि सबसे बढ़कर भरपूरी से निकलनेवाला जीवन है। परमेश्वर खुशी से और बहुतायत से देता है, और यह बात हमें स्वर्ग पहुँचकर ही नहीं पहचाननी चाहिए।

15. मिज़ाज और चरित्र

सच्चे मसीही जीवन का आरम्भ एक मौलिक नवीनीकरण से होता है, जिसके आधार पर मसीह की समानता की ओर निरन्तर परिवर्तन होता है। मेरे मिज़ाज का मेरे विश्वास के जीवन और विजयी जीवन पर क्या प्रभाव पड़ता है?

इंटरनेट पर मुक्त विश्वकोश विकिपीडिया संक्षेप में यह व्याख्या देता है: “मिज़ाज उस ढंग का वर्णन करता है जिससे कोई जीव कार्य और प्रतिक्रिया करता है, अर्थात् उसकी व्यवहार-शैली का। यह गहराई से जमा होता है और भावनात्मक, गति-संबंधी और ध्यान-संबंधी प्रतिक्रियाओं तथा आत्म-नियंत्रण से मिलकर बनता है। यह शब्द व्यवहार की अपेक्षाकृत स्थिर, और इसलिए विशिष्ट, विशेषताओं को दर्शाता है, जैसे धीरज, उत्तेजना की सीमा, मनोदशा, गति।”⁹⁹

“लगभग 2500 वर्ष पुराना मिज़ाज-सिद्धांत मनुष्यों को उनके मूल स्वभाव-प्रकार के अनुसार वर्गों में बाँटता है और आज वैज्ञानिक दृष्टि से एक पुराना पड़ चुका सिद्धांत है ... इसकी जड़ ह्यूमरल पैथोलॉजी (चार द्रवों का सिद्धांत) में है, जिसका श्रेय कोस के हिप्पोक्रेटीज़ (Hippokrates von Kós) (यूनानी चिकित्सक, 460 – 375 ई. पू.) को दिया जाता है ... चार द्रवों के सिद्धांत को चार मिज़ाजों के सिद्धांत से पेरगामोन के गैलेन (Galenus von Pergamon) ने जोड़ा, जिसने शरीर के चार द्रवों (“humores”) में से हर एक के साथ एक मिज़ाज को जोड़ा। इन चार द्रवों में से जिसकी प्रधानता होती है, उसी से जुड़ा मिज़ाज विशेष रूप से उभरता है ... :

- रक्त (“Sanguis”): सैग्विन (प्रसन्नचित्त, सक्रिय)
- कफ (“Phlegma”): फ़्लेगमैटिक (निष्क्रिय, सुस्त)
- काला पित्त (“Melas Cholé”): मेलन्कोलिक (उदास, विचारशील)
- पीला पित्त (“Cholé”): कोलेरिक (चिड़चिड़ा और शीघ्र उत्तेजित होनेवाला)।”¹⁰⁰

15.1 बाइबल और मिज़ाज-सिद्धांत

एक ओर यह कहना आवश्यक है कि मिज़ाज-सिद्धांत का उद्गम गैर-मसीही (मूर्तिपूजक) है। दूसरी ओर यह तथ्य है कि वैज्ञानिक दृष्टि से यह पुराना पड़ चुका है। इन दोनों बातों का संबंध इस तथ्य से है कि यह सिद्धांत न तो बाइबल में आता है और न ही उससे निकाला जा सकता है। बाइबल इस सिद्धांत की सीधे-सीधे अनदेखी करती है, यद्यपि यह उसके दूसरे भाग (नए नियम) के लिखे जाने के समय पहले से मौजूद था।

99. ऑनलाइन उपलब्ध: <http://de.wikipedia.org/wiki/Temperament>।

100. ऑनलाइन उपलब्ध: <http://de.wikipedia.org/wiki/Temperamentenlehre>।

फिर भी हम अच्छी चीज़ को बुरी के साथ फेंक नहीं देना चाहते। मिज़ाज एक वास्तविकता है, और इसलिए (अपने) मिज़ाज पर एक दृष्टि डालना उपयोगी हो सकता है। चाहे यह सिद्धांत पुराना पड़ चुका हो, फिर भी हर मनुष्य का एक मिज़ाज होता है, जो प्रायः कम या अधिक इन चार में से किसी एक से, या उनके किसी मिश्रण से, मेल खाता है।

नया जन्म पाने के बाद भी मैं वही व्यक्ति रहता हूँ जो पहले था, परन्तु मुझे एक नया आत्मिक जीवन दिया गया है, जिसमें मसीह का स्वभाव और सार है। यही जीवन मेरे व्यक्तित्व को आकार दे। मेरे मिज़ाज के तथाकथित मज़बूत पक्ष भी मसीह के बिना मूल्यहीन हैं। केवल उससे भरे हुए व्यक्तित्व ही नए जीवन के लिए परमेश्वर के मापदंड पर खरे उतरते हैं: मसीह उस नई सृष्टि की कसौटी और मापदंड है जो हम बन गए हैं। और मसीह का सार आत्मा के फल में प्रकट होता है। यही हमारे व्यक्तित्व-निर्माण का मानक है। मिज़ाजों का अध्ययन तब तक उचित है जब तक वह हमारे मसीही जीवन के वास्तविक लक्ष्य के अधीन रहता है।

मिज़ाजों की शक्तियों और कमज़ोरियों को देखना लाभदायक है। इनसे हमारा प्रतिदिन वास्ता पड़ता है; वे हमारे जीवन का भाग हैं और इसलिए हमारे विश्वास के जीवन का भी। हम जानते हैं कि हम अपनी बनावट (जो हमें अपने माता-पिता से विरासत में मिली है) को यों ही नहीं बदल सकते। यह पहचानना कि हमारी बनावट कैसी है, निश्चय ही उपयोगी है, क्योंकि इस प्रकार वे नकारात्मक बातें और व्यवहार भी उजागर होते हैं जो मसीह की समानता की ओर हमारी वृद्धि में बाधा डाल सकते और उसे रोक सकते हैं। फ़्लेमैटिक का सुस्त व्यवहार अधिकतर सक्रिय विश्वास-जीवन के लिए बाधा होता है। यही बात कोलेरिक के उतावले काम और उतावले न्याय पर भी लागू होती है। हमें ऐसे नकारात्मक पहलुओं के प्रति सचेत होना चाहिए, ताकि हम उनका प्रतिरोध कर सकें। इसके लिए कोई परीक्षण (टेस्ट) निश्चय ही सहायक हो सकता है।

अपने आत्मिक जीवन और अपने वरदानों के संबंध में मिज़ाजों में आवश्यकता से अधिक उलझे रहना हमारा ध्यान बहुत अधिक अपने ही ऊपर केन्द्रित कर देता है। कुछ आज़ाएँ हैं कि हम अपने आप को और अपने काम को जाँचें, परन्तु लगभग सदा सिद्धांत यही है कि हम मसीह की ओर देखें। इसी से परिवर्तन आता है, जिसमें निश्चय ही हमारी भी भागीदारी है।

डब्ल्यू. जे. ओवेनील (W. J. Ouwenel): “उन्होंने (ओले हालेस्बी (Ole Hallesby), टिम लाहे (Tim LaHaye) और हेनरी ब्रांट (Henry Brandt) ने) यह स्पष्ट किया है कि चारों मिज़ाजों में जीवन कैसा दिखता है जब हृदय परमेश्वर से फिरा हुआ होता है और अपने आप को पाप के हवाले कर देता है; तब मिज़ाजों के बुरे पक्ष हावी हो जाते हैं। परन्तु जब हृदय परमेश्वर की ओर लगा होता है और अपने आप को पवित्र आत्मा की अगुवाई को सौंप देता है, तब व्यक्तित्व में मज़बूत पक्ष विकसित हो सकते हैं, और मसीह आकार लेता है – सैग्विन की आत्मीयता, निष्कपटता, फूर्तिलेपन, मित्रता और आशावाद के रूप में; कोलेरिक के नेतृत्व, दृढ़ता, टीम-भावना, संकल्प और उद्यमशीलता में; मेलन्कोलिक की विश्वासयोग्य

मित्रता, सृजनशीलता और त्याग की तत्परता में; और प्रलेगमैटिक की शान्ति, प्रसन्नचित्तता, सुनने की तत्परता, व्यवस्थितता और विचारशीलता में ...

शारीरिक-जैविक और मानसिक संरचनाओं और ... मिज़ाजों तथा व्यक्तित्व-प्रकारों के सब अध्ययनों के बावजूद मनुष्य कोई पहले से प्रोग्राम किया हुआ रोबोट नहीं है, जो अपने चरित्र के बुरे पक्षों के पूरी तरह अधीन हो। यहाँ भी बाइबल और आत्मिक देखभाल (पास्टरल केयर) का अनुभव हमें सिखाते हैं कि सब कुछ हृदय की दिशा पर निर्भर करता है। वास्तव में किसी मनुष्य का मिज़ाज उसकी वंशानुगत बनावट से निर्धारित होता है; इसलिए वह लगभग अपरिवर्तनीय है (यद्यपि जीवन के दौरान उसमें छोटे-मोटे परिवर्तन हो सकते हैं, परन्तु उन पर मनुष्य का कोई वश नहीं होता)। परन्तु **मिज़ाज** और **चरित्र** में ठीक-ठीक अन्तर करना चाहिए। चरित्र किसी मनुष्य के व्यवहार-गुणों का परिणाम है, जो केवल मिज़ाज से नहीं, बल्कि ... सबसे बढ़कर हृदय से निर्धारित होते हैं।

जब कोई मनुष्य मसीह पर विश्वास करने लगता है और इस प्रकार नया जन्म पाता है, तो उसे कोई नया मिज़ाज नहीं मिलता (जैसे उसे कोई दूसरी देह भी नहीं मिलती), परन्तु एक ‘नया हृदय’ अवश्य मिलता है: हृदय की एक मौलिक रूप से नई मनोवृत्ति, एक बिल्कुल नया रवैया, एक नया दृष्टिकोण, जीवन की एक नई अवधारणा। अब उसके जीवन में बिल्कुल दूसरे क्रियाशील और प्रेरक कारक भूमिका निभाने लगते हैं, साथ ही नया ज्ञान और नई सोच (अर्थात् नया ‘संज्ञान’) और एक नई दिशा में लगी इच्छा (कोनेटिव¹⁰¹ कारक)। इस प्रकार नया किया गया मनुष्य अपने मिज़ाज की (विस्तृत!) बनावटी सीमाओं के भीतर एक बिल्कुल नया चरित्र विकसित कर सकता है, जिसमें, जैसा कहा गया, मसीह बिल्कुल अनुपम ढंग से आकार लेता है।”¹⁰²

विश्वासी में मिज़ाज – विरासत में मिली प्रवृत्ति और स्वाभाविक झुकाव – पवित्र किया जाता है और इस प्रकार परमेश्वर के लिए उपयोगी बनता है। उदाहरण के लिए सैंग्विन की मित्रता परमेश्वर के लिए उपयोगी है। आत्मा के भीतर बसने और उसकी अगुवाई के द्वारा वह परमेश्वर के लिए फल भी बन जाती है। यह बात हर मिज़ाज के सभी “अच्छे” पक्षों पर लागू होती है; मनुष्य होने का यह स्वाभाविक, या मिज़ाज से जुड़ा, पक्ष परमेश्वर की पहली सृष्टि का भाग है और इसलिए पतन से पहले आदम की भी विशेषता था। दुर्भाग्य से पाप ने मिज़ाज को भी हानि पहुँचाई है, और इन हानियों को दूर करना आवश्यक है।

15.2 चरित्र और उसका परिवर्तन

चरित्र किसी व्यक्ति की पहचानी जा सकनेवाली विशेषता है। हम इस शब्द से कम या अधिक परिचित हैं। अधिकतर इसे अच्छे और वांछनीय मानवीय गुणों से जोड़ा जाता है, अर्थात् उन बातों से जिनकी समाज में, और हाल के समय में विशेषकर वित्तीय जगत में, कमी है। बेलगाम लालच, आत्म-प्रेम और स्वार्थ हमें

101. “कोनेटिव” (konativ) का अर्थ है “प्रेरणा से चलनेवाला”, “लक्ष्य की ओर प्रयत्नशील”।

102. W. J. Ouwenel, *Psychologie, Ein bibelorientiert-wissenschaftlicher Entwurf*, पृ. 168 (जो जोड़ा गया है)।

उसका पूर्वस्वाद देते हैं जो अभी आनेवाला है। समाज यह अनुभव करता है कि एक अच्छा और दृढ़ चरित्र, जो परीक्षा का भी सामना करता है, नैतिक पतन को धीमा कर सकता है, यदि रोक न भी सके।

परन्तु आइए, हम अपने ही जीवन को देखें। चरित्र (जर्मन: **Charakter**) शब्द उस ठप्पे से निकला है जो किसी सिक्के या मुहर को उसका आकार देता था। हम पर किसकी छाप है, और लोग हम में क्या देखते हैं? इससे भी महत्वपूर्ण प्रश्न यह है: जब हमें कोई नहीं देखता, तब अपने चरित्र में हम कौन और कैसे हैं? एक कहावत है: “मनुष्य का चेहरा तुम उजाले में पहचानते हो, उसका चरित्र अन्धेरे में।”

संसार को जिसकी आवश्यकता है, वह यीशु में वास्तविकता बन गया है। उसका सार हम में सच हो सकता है। एक अच्छे चरित्र पर पवित्र आत्मा के फल की, और इस प्रकार यीशु की, छाप होती है। परन्तु वह यों ही उड़कर नहीं आ जाता। परमेश्वर उसे हमारी इच्छा को दरकिनार करके जादू से हमारे हृदय में भी नहीं डाल देता। वह हमें सब कुछ देता है, ताकि हम उसकी अगुवाई में और उसकी सामर्थ्य और अनुग्रह से उसे विकसित करें। हमें चरित्र का अभ्यास करना और इस प्रकार उसे मज़बूत बनाना है। यही हमारी ज़िम्मेदारी है। प्रेम, आनन्द, शान्ति, धीरज, कृपा, भलाई, विश्वासयोग्यता, नम्रता और संयम – इस आत्मिक फल को हमें मानो एक नई या दूसरी भाषा के समान सीखना है, जब तक कि सीखने और अभ्यास के कारण हम उसे आदत से बोलने न लगे। आत्मिक चरित्र हमारे जीवन में सामान्य बात बन जाना चाहिए।

चरित्र तब प्रकट होता है जब बात सचमुच महत्वपूर्ण होती है और जब हम दबाव में या परीक्षा में होते हैं। इसीलिए पौलुस यह भी कहता है कि हम शरीर के लिए कोई प्रबंध न करें, बल्कि प्रभु यीशु मसीह को पहन लें (रोमियों 13:14)। एक दृढ़ (अर्थात् अभ्यास किया हुआ और लगन से पीछा किया हुआ) चरित्र उस परीक्षा का सामना कर सकता है जो चरम परिस्थितियों में उन आत्मिक सिद्धांतों को छोड़ देने के लिए आती है, जिन्हें उसने अपने नए जन्म के बाद से सीखा है और परमेश्वर के मार्ग के रूप में मूल्यवान समझता है।

हम चरित्र का अभ्यास कैसे करते हैं? सीखने और लागू करने के द्वारा। सीखना इसलिए आवश्यक है कि हम समझें कि यह “आत्मिक चरित्र” कैसा है। मानो मुझे यह आदेश दिया गया है कि मैं उसे आत्मसात करूँ। छोटे-छोटे कदमों में हम इन गुणों को अधिक से अधिक व्यवहार में लाते हैं, क्योंकि हम ऐसा चाहते हैं।

जहाँ मिज़ाज जीवन भर लगभग अपरिवर्तित रहता है, वहाँ चरित्र में परिवर्तन होता है – भलाई की ओर भी और बुराई की ओर भी। चरित्र का आधार इच्छा और अपने आप को लागू कर पाने की उसकी शक्ति है। हमारे पास एक नया हृदय और एक नई की गई इच्छा है। यह एक नए जीवन का आरम्भ है, जिसमें लक्ष्य तक परिवर्तन की इच्छा साथ-साथ चलनी चाहिए।

मिज़ाज-सिद्धांत के समान चरित्र शब्द भी बाइबल में नहीं मिलता। उसके सबसे निकट बाइबल का “सद्गुण” शब्द आता है (फिलिप्पियों 4:8; 1 पतरस 2:9 [परमेश्वर का गुण]; 2 पतरस 1:3, 5)। बाइबल अपने समय के दार्शनिकों के सद्गुण-सिद्धांत का अनुसरण नहीं करती। समानताएँ कुछ तो इसमें हैं कि सद्गुण की विशेषता क्या है, और कुछ इसमें कि उसका अभ्यास और प्रशिक्षण किया जाता है। बाइबल की दृष्टि से

सद्गुण, या चरित्र, और मसीह की समानता की ओर उसके परिवर्तन का लक्ष्य स्वयं परमेश्वर और उसका राज्य है। अपने ही लिए की गई अपनी उपलब्धि नहीं, बल्कि पवित्र आत्मा के द्वारा नई की गई इच्छा-शक्ति, और उससे निकलनेवाला व्यवहार, जो परमेश्वर की महिमा के लिए और दूसरों की भलाई के लिए है – यही हमारे रूपान्तरण के बाइबल-आधारित चित्र और लक्ष्य के अनुरूप है, जो परमेश्वर के नए संसार के अन्तिम लक्ष्य में जाकर पूरा होगा।

“अपने विचारों पर ध्यान दो, क्योंकि वे शब्द बन जाते हैं।
अपने शब्दों पर ध्यान दो, क्योंकि वे कर्म बन जाते हैं।
अपने कर्मों पर ध्यान दो, क्योंकि वे आदतें बन जाते हैं।
अपनी आदतों पर ध्यान दो, क्योंकि वे तुम्हारा चरित्र बन जाती हैं।
अपने चरित्र पर ध्यान दो, क्योंकि वह तुम्हारा भाग्य बन जाता है।”

16. उपसंहार

ऐसे समय आते हैं जब बातें हमारे बस से बाहर हो जाती हैं और हम नहीं जानते कि क्या करें और क्या न करें। कभी-कभी शरीर फूट पड़ता है, और हम अपने आप पर चकित और भयभीत हो जाते हैं। कभी-कभी हम अपनी उदासीनता पर भी उतने ही भयभीत होते हैं। जब तक हम अपने पार्थिव अस्तित्व में पूर्णता की ओर मार्ग पर हैं, ये सब बातें हमारे सामने आएँगी और हमारे साथ रहेंगी। इस बात से किसी चीज़ को उचित नहीं ठहराया जाना चाहिए। परन्तु जब यह प्रश्न हो कि हमारे जीवन में कितनी आत्मिक सच्चाई प्रकट हो रही है, तो हम ईमानदार भी रहना चाहते हैं।

आइए, हिम्मत रखें और हार न मानें! चाहे भीतर से हार मान लेने का मन करे, फिर भी वह सबसे बुरा समाधान है। निराश होकर बैठ जाना और हथियार डाल देना शारीरिक और शैतानी उद्गम के हैं।

पिता हर कदम पर हमारी सहायता करता है – इसकी परवाह किए बिना कि वह कदम कितना छोटा या कितना बड़ा है। हमें लक्ष्य की ओर मार्ग पर आगे बढ़ना है। चाहे हम ऐसे समय से भी गुज़रें जब हम उससे दूर हो जाते हैं, फिर भी वह हमारे निकट है, और उसकी बाँहों में लौट आने के लिए सदा एक ही कदम काफ़ी है।

शायद पहाड़ों की ये पैदल यात्राएँ इतनी लम्बी और थका देनेवाली थीं कि अब आपको पेड़ों के कारण जंगल दिखाई नहीं देता। निश्चय ही, यदि इस विषय के सारे बाइबल-पाठों को एक साथ लिया जाए, तो यह एक बड़ा विषय है। परन्तु हम आत्मिक समझ में परमेश्वर के द्वारा उत्पन्न की गई वृद्धि का अनुभव करते हैं। और इसमें बस समय भी लगता है। हम न इसे ज़बरदस्ती करवा सकते हैं, न इसे छोटा कर सकते हैं। परमेश्वर हमारे साथ अपना मार्ग चलता है। वह हमारे पक्ष में है, और हम उसकी देख-रेख में हैं। वह किसी दास-चालक के समान हमारे पीछे खड़ा नहीं है, जिसे केवल हमारी गलतियों और हमारी असफलताओं में रुचि हो। इसके विपरीत: उसने हमें अपने पुत्रों, अर्थात् अपनी सन्तान, के रूप में स्वीकार किया है और हमें सब कुछ सौंप देता है, ताकि हम उसकी महिमा के लिए जी सकें।

स्वयं पौलुस भी हमें सान्त्वना के रूप में बताता है कि महिमा की ओर मार्ग पर वह अभी इसी लक्ष्य तक नहीं पहुँचा है और अभी सिद्ध भी नहीं हुआ है। परन्तु उसकी दिशा सही है; वह लक्ष्य की ओर दौड़ा जाता है, क्योंकि उसने उसे – मसीह ने – पकड़ लिया है और थाम रखा है। यही उसका रहस्य है।

पक्ष परिवर्तन (Seitenwechsel), और सारा परिश्रम, सारा समर्पण, सारी मेहनत, सारा त्याग, सारी दृढ़ता – सब सार्थक होंगे। महिमा में हमारे पास यह अनोखा अवसर फिर नहीं होगा। इसलिए “देह में” (2 कुरिन्थियों 5:10), हमारे पार्थिव अस्तित्व में, हमारा समय इतना असाधारण रूप से मूल्यवान है। इसे दोहराया नहीं जा सकता, और इसमें आनेवाले अवसर हमें दोबारा नहीं मिलेंगे।

“परमेश्वर ने हमें भय की आत्मा नहीं

(हियाव छोड़ना, डरपोकपन) दी,

बल्कि (आत्मा)

सामर्थ्य की,

और प्रेम की

और संयम की

(अनुशासन, आत्म-नियंत्रण, संतुलन)।”

2 तीमुथियुस 1:7



लक्ष्य की ओर हमारा मार्ग आत्मिक वृद्धि और पवित्रीकरण में केवल निरन्तर चढ़ाई नहीं है। उतराई भी आती है, ठहराव और गतिरोध भी आता है, परन्तु चढ़ाई भी। दिशा सही होनी चाहिए, और लक्ष्य स्वयं हमें अपनी ओर खींचता है – विश्वास के कर्ता और सिद्ध करनेवाले यीशु की ओर ताकते हुए!

17. ग्रंथ-सूची¹⁰³

Adams, Jay E., *Grundlagen biblischer Seelsorge*, Gießen, 1983।

Anderson, Neil T., *Neues Leben – neue Identität*, Lage, 1994।

Anderson, Neil T., *Restored, Experience Life with Jesus*, Franklin, USA, 2007।

Anderson, Neil T., *Spiritual Warfare*, Ventura, California, USA, 2000।

Anderson, Neil T., *Steps to Freedom in Christ*, Oxford, 2000।

Anderson, Neil T., *Winning the Battle within*, Eugene, Oregon, USA, 2004।

Barclay, William, *Geist oder Fleisch*, Augsburg, 1967।

Binde, Fritz, *Vom Geheimnis des Glaubens*, Wuppertal, 1979।

Bullinger, Dr. E. W., *Die zwei Naturen in dem Kind Gottes*, Düsseldorf, 1907।

Burkhardt, Helmut, *Christ werden, Bekehrung und Wiedergeburt*, Gießen, 1999।

Custance, Arthur C., *Man in Adam and in Christ*, Grand Rapids, 1975।

Edman, V. Raymond, *Das ausgetauschte Leben*, Kassel, 1963।

Eldredge, John, *Der ungezähmte Christ*, Gießen, 2005।

Gahan, M. C., *The Soul's Transfer from Adam to Christ*, Michigan, 1957।

Gibson, Jean, *Training im Christentum 3*, Bielefeld, 1990।

Heijkoop, H. L., *Der Heilige Geist*, Zürich, 1955।

Hession, Roy, *Nicht ich – sondern Christus*, Bad Liebenzell, 1980।

103. मैंने उल्लिखित साहित्य का सहारा लिया है और कुछ स्थानों पर उसका उद्धरण भी दिया है। परन्तु इस सूची का यह अर्थ कदापि नहीं कि मैं सूचीबद्ध पुस्तकों के सभी कथनों से सहमत हूँ।

- Hille, Rolf (सं.), *Ein Mensch, was ist das?*, Wuppertal, 2004।
- Hole, F. B., *Das große Heil Gottes*, Zürich, 1979।
- Ironside, Henry Allen, *Heiligung – Zerrbild und Wirklichkeit*, Bielefeld, 1989।
- Käser, Ernst, *Rechtfertigung des Lebens*, Herblingen, 1989, दूसरा संस्करण।
- Kelly, William, *Die Lehre des NT über den Heiligen Geist*, Neustadt, 1975 (1880)।
- Kettling, Siegfried, *Wer bist du, Adam?*, Wuppertal, 1978।
- Lutzer, Erwin W., *Das widerspenstige Ich*, Bielefeld, 2011।
- MacDonald, William, *Der vergessene Befehl: Seid heilig!*, Bielefeld, 1988।
- Markmann, Otto, *Weiter zu etwas Höherem*, वॉचमैन नी (Watchman Nee) की पुस्तक “Das normale Christenleben” पर एक आलोचनात्मक प्रतिक्रिया।
- Mauerhofer, Erich, *Der Kampf zwischen Fleisch und Geist bei Paulus*, Frutigen, 1980।
- Medema, H. P., *Romeinen 7; Het normale en het abnormale christlijke leven*, Vaassen, 1998।
- Modersohn, Ernst, *Die herrliche Freiheit der Kinder Gottes*, Bielefeld, 2008।
- Nee, Watchman, *Befreiung*, Stuttgart, 1978।
- Nee, Watchman, *Das normale Christenleben*, Wuppertal, 1972।
- Nee, Watchman, *Der geistliche Christ*, खंड 1 – 3, Heerbrugg, 1975।
- Nee, Watchman, *Freiheit für den Geist*, Winterthur, 1969।
- Nee, Watchman, *Geistliche Erkenntnis*, Berneck, 1978।
- Nitsche, Walter / Peters, Benedikt, *Dämonische Verstrickungen – Biblische Befreiung*, Berneck, 1989।
- Nitsche, Walter, *Versagen und innere Zerrissenheit*, Berneck, 1989।

- Ouweneel, Willem J., *Geestelijke Strijd*, Vaassen, 1998।
- Ouweneel, Willem J., *Geloofs-Zekerheid*, Vaassen, 1996।
- Ouweneel, Willem J., *Hoe lief heb ik uw Wet!*, Vaassen, 2001।
- Paxson, Ruth, *Life on the Highest Plane, God's Plan for spiritual Maturity*, Grand Rapids, 1983।
- Pink, Arthur, *Practical Christianity*, Michigan, 1974।
- Ryrie, Charles C., *Ausgewogen statt abgehoben*, Dillenburg, 1994।
- Ryrie, Charles C., *Hauptsache gerettet?*, Dillenburg, 1998।
- Ryrie, Charles C., *Ihr werdet Kraft empfangen*, Dillenburg, 2003 (1965)।
- Schirmacher, Thomas, *Ethik, खंड 1, Das Gesetz der Liebe*, Nürnberg, 2001।
- Steidl, Grant, *Konflikt!*, *Der Christ im Widerstreit*, Hückeswagen, 1992।
- Steinberger, Georg, *Das Geheimnis eines siegreichen Lebens*, Stuttgart, 1983।
- Stott, J. R. W., *Men Made New*, London, 1966।
- Thomas, Major W. Ian, *Christus in euch – Dynamik des Lebens*, Holzgerlingen, 2008।
- Thomas, Major W. Ian, *The Indwelling Life of Christ*, Colorado Springs, 2006।
- Thomas, Major W. Ian, *The Saving Life of Christ*, Grand Rapids, 1961।
- Thomas, Major W. Ian, *Tote können nicht sterben*, Neuhausen-Stuttgart, 1973।
- Trumbull, Charles G., *Befreiung von der Macht der Sünde*, Basel, 1986।

Willard, Dallas, *Aus dem Herzen leben* (मूल शीर्षक: *Renovation of the Heart*), Gießen, 2004।

Willard, Dallas, *The Divine Conspiracy, Rediscovering our hidden Life in God*, New York, 1997।

इस विषय पर लघु-पुस्तिकाएँ, लेख और निबंध

Blackburn, John S., *Die Befreiung im Römerbrief*।

Böhm, Heinz, *Die geleugnete Wirklichkeit*, Berneck, 1993।

Cutting, George, *Die beiden Naturen*, Zürich।

Cutting, George, *Freedom from Sin: What is it?*

Ebertshäuser, Rudolf, *Mit Christus gekreuzigt und auferweckt*, Leonberg, 2009।

Glassford, Greg, *Hey, Fleisch! Hier spricht dein Geist!*, Hamburg, 2004।

Grant, F. W., *Deliverance: What is it?*

Grant, F. W., *Life in Christ and sealing with the Spirit*, Bedford।

Grant, F. W., *Some Themes on the second Part of Romans*, Bedford।

Grant, F. W., *The two Natures and what they imply*, Bedford।

H. E. C., *The Believer's two Natures*।

Herrick, Greg, *Old Man and New Man in Paul*, 1999।

John MacArthur's One Nature Teaching,
<http://www.middletownbiblechurch.org/doctrine/1natjm01.htm>

Lüscher, Albert, *Der alte und neue Mensch*, Langenthal, 1971।

Lüscher, Albert, *Euer Leben ist verborgen*, Langenthal।

Pink, Arthur W., *The Christian in Romans 7*।

Scofield, C. I., *The two Natures*।

Trachsel, Walter, *Ein reines Herz?*, Frutigen।

Trachsel, Walter, *Gibt es ein Leben im Sieg*, Frutigen, 2003।

Trachsel, Walter, *Heilig sein oder heilig werden?*, Frutigen, 2009।

Trachsel-Pauli, Ernst, *Heiligung nach Geist, Seele und Leib*, Frutigen, 2000।

Wallis, Reginald, *The new Life, Talks with Christians about Practical Victory*, New Jersey, 1932।

वेबसाइटें

<http://www.bibelkommentare.de>;

<http://www.biblecentre.org/>;

<http://www.bodedesheils.nl/>

<http://www.soundwords.de/>

<http://www.streitenberger.com/>: बाइबल-यूनानी मेलिंग-लिस्ट (मुक्त प्रवेश, यूनानी भाषा के जानकारों के बीच विचारों का आदान-प्रदान; बाइबल-पाठ के विषय में भाषा-संबंधी प्रश्न पूछने और उत्तर पाने की सुविधा)।

टीकाएँ

Brockhaus-Kommentar zur Bibel, Wuppertal, 1985।

Calvin, Johannes, *Auslegung der kleinen paulinischen Briefe*, Neukirchen, 1963।

Cecil, A. P., *A Summary of the Epistle to the Romans*।

Coates, C. A., *Ein Überblick über den Brief an die Römer*, Leipzig।

Cousar, Charles B., *Galatians, A Commentary for Teaching and Preaching*, Atlanta, 1982।

Darby, J. N., *The Collected Writings*, Winschoten, 1972 (पुनर्मुद्रण)।

Ellicott, Charles John, *Bible Commentary*, London, 2004 (पुनर्मुद्रण)।

Grant, F. W., *The Numerical Bible*, New Jersey, 1901।

Greijdanus, Dr. S., *Korte Verklaringen*, Kampen, 1932।

- Hoehner, Harold W., *Ephesians, An exegetical Commentary*, Michigan, 2002।
- Jantzen, Herbert, *Vorträge zu Röm 6 – 8*, 1997।
- Kelly, William, *Lectures Introductory*, 1869।
- Kelly, William, *Lectures on the Epistle to the Ephesians*, Oak Park।
- Kelly, William, *Notes on the Epistle to the Romans*, Sunbury, 1981 (1873)।
- Kelly, William, *The Bible Treasury*, Winschoten।
- Kelly, William, *The Epistles of Peter*, London, 1904।
- Kramer, G. H., *Christus ons leven*, Vaassen, 1994।
- Lee, Witness, *Der Brief des Paulus an die Epheser*, Stuttgart, 1980।
- Lincoln, William, *Assembly Writer Library*, Glasgow, 1980।
- MacDonald, William, *Kommentar zum NT*, खंड 1, Bielefeld, 1992।
- Medema, H. P., *De nieuwe Mens*, Vaassen, 1991।
- Medema, H. P., *Der Brief an die Römer*, Bielefeld, 1992।
- Medema, H. P., *Het leven is geopenbaard, De Eerste Brief van Johannes*, Vaassen, 1993।
- Nicholson, J. B., और Waugh, G. P., *Was die Bibel lehrt, 1. und 2. Petrusbrief*, Dillenburg, 1991।
- Ouweneel, W. J., *De vrijheid van de Geest*, Vaassen, 1997।
- Ouweneel, W. J., *Christus unser Leben*, Schwelm, 1984।
- Remmers, Arend, *In Christus gesegnet*, Hückeswagen, 2004।
- Schaeffer, F., *Allein durch Christus, Die zentralen acht Kapitel des Römerbriefs*, Holzgerlingen, 1999।
- Smith, Hamilton, *The Epistle to the Ephesians*, Edinburgh।

Smith, Hamilton, *The Epistles of Peter, An Expository Outline*, Edinburgh।

Stadelmann, Helge, *Der Epheserbrief*, Neuhausen-Stuttgart, 1993।

Stallan, Fred, *Was die Bibel lehrt, Römerbrief*, Dillenburg, 2001।

Stanley, Charles, *On the Epistle to the Romans*, London, 1885।

Stott, John R. W., *Die Botschaft des Epheserbriefes*, Nürnberg, 2001।

Stott, John R. W., *The Letters of John, Tyndale New Testament Commentaries*, Nottingham, 1964, 1988।

Wasserzug, Gertrud, *Der Römerbrief*, Böblingen, 1984।

Witmer, John A., *Romans, The Bible Knowledge Commentary*, 1983।

Wolston, W. T. P., *Simon Peter, His Life and Letters*, Edinburgh, 1892।

Wuest, Kenneth S., *Romans in the Greek New Testament*, Michigan, 1955।

अन्य बाइबल-संस्करणों के लिए प्रयुक्त संक्षेप (सभी जर्मन बाइबल अनुवाद)
Elb Elberfelder Übersetzung, nicht revidiert, Berlin, 1961।

ER Elberfelder Übersetzung, revidierte Fassung, R. Brockhaus Verlag Wuppertal, 8वाँ संस्करण 2001।

Luther 1912 *Die Heilige Schrift nach der deutschen Übersetzung Martin Luthers*, Stuttgart, 1912।

Menge *Die Heilige Schrift Alten und Neuen Testaments*, अनुवादक: Dr. H. Menge, Berlin, 1960।

NeÜ *Neue evangelistische Übersetzung*, Karl-Heinz Vanheiden द्वारा, Dillenburg, 2010।

Schl 2000 *Die Bibel*, übersetzt von F. E. Schlachter (Version 2000), Genf, पहला संस्करण 2003।

Schlachter *Die Heilige Schrift des Alten und Neuen Testaments*, अनुवादक: F. E. Schlachter, Genf, 1990।

लेखक के विषय में

Hans-Jörg Ronsdorf, जन्म 1964, अपनी पत्नी क्रिस्टीने (Christine) के साथ विवाहित हैं। उनके 5 बच्चे हैं और वे बवेरिया (Bayern) के आल्गॉय (Allgäu) क्षेत्र में रहते हैं। औज़ार-निर्माता (टूलमेकर) का प्रशिक्षण पूरा करने के बाद उन्होंने विभिन्न उद्योगों में काम किया, और 10 से अधिक वर्षों से वे पेंटिंग और कोटिंग (लैकरिंग) उद्योग में सलाहकार और आपूर्तिकर्ता के रूप में स्वतंत्र रूप से कार्यरत हैं।

वे केम्पटन (Kempten) की मसीही कलीसिया (Christliche Gemeinde) में सह-प्राचीन हैं और प्रचार तथा बाइबल-शिक्षा की सेवा में लगे हैं।

Hans-Jörg Ronsdorf

फिर भी मृतक जीवित हैं (Und die Toten leben doch)



प्राण की अमरता

240 पृष्ठ, पेपरबैक

ISBN 978-3-89397-227-2

क्या मृतक जीवित हैं – या मृत्यु ही सारे अस्तित्व का अन्त है? क्या मनुष्य प्राण-निद्रा में चला जाता है – या मृत्यु के पार भी उसकी चेतना बनी रहती है? ये ऐसे प्रश्न हैं जो हर मनुष्य को सोचने पर विवश करते हैं। इन प्रश्नों का उत्तर देना, और साथ ही आशा देना, इस पुस्तक का उद्देश्य है; इसमें प्राण की अमरता का प्रश्न केन्द्रीय विषय है। मृतक, जो जीवित हैं – बाइबल इस विरोधाभास को सुलझाती है: मृत्यु अन्त नहीं, बल्कि एक ऐसे जीवन का आरम्भ है जो फिर कभी समाप्त नहीं होता। इस कथन की सच्चाई की गारंटी एक ऐसा व्यक्ति देता है जो मरा और जी उठा – यीशु मसीह, जो मृत्यु के राज्य से लौट आया और उस मार्ग को खोल दिया जो जीवन की ओर ले जाता है।